प्रकाशक
मेहरचन्द्र लक्ष्मणदास
अध्यक्ष, संस्कृत पुस्तकालय,
दरियागंज, दिल्ली-७.

मूल्य पांच रुपये।

मुद्रक
भारत भारती प्रेस
१ दरियागंज, दिल्ली ।

भूमिका

विज्ञान के इस युग में, धर्म और संस्कृति के प्रति निष्ठा का प्रचार भी अपेक्षाकृत अधिक दिखाई पड़ता है; परन्तु लगता यह है कि जैसे चिर-पुरातन से चली आई परम्परा का निर्वाह मात्र किया जा रहा है। इस उदासीनता का कारण चाहे जो कुछ हो, यह तथ्य है कि इस यन्त्र-युग में भौतिक पदार्थों की आई बाढ़ के साथ मनुष्य-समाज भी उसमें बहा जा रहा है। परिस्थिति-वश वह अपने मस्तिष्क का सन्तुलन खो बैठा है—धर्म-अधर्म की सीमा से परे हो जाना चाहता है। आर्थिक दासता, जीवन-निर्वाह की चिन्ता आदि ऐसे विषय हैं कि जिनमें मनुष्य बँट गया है। उसका विवेक केवल एक ही दिशा में चलता है। मनुष्य को पैसा चाहिए, जीवन-यापन साधन। और उसके चारों ओर जिस प्रकार लुभावने भौतिक पदार्थ एकत्र किये गये हैं, बाज़ार सजाया गया है, उससे भी मनुष्य अधिक लालायित और भौतिक-तत्त्वों की चकाचौंध में खो गया है। निःसन्देह, मनुष्य की यह चेतना एकांगी है और उसे स्वेच्छा-प्रिय बनने में प्रोत्साहन प्रदान करती है !!

प्रस्तुत कथा में, इसी का निर्देश मात्र है। यद्यपि, प्रसंगवश धनिक और निर्धन का भी उल्लेख किया गया है, परन्तु लेखक का तात्पर्य केवल इतना था कि पाठक को बताये कि समाज में प्रसारित वर्ग-भेद का कारण क्या है। यह निर्विवाद है कि भारतीय संस्कृति जिन ऊँचे सिद्धान्तों पर आधारित थी, मूलतः मनुष्य के स्वार्थ ने उसी पर कुठाराघात किया। समाज में जब पैसा माध्यम बन कर आया, तो प्रतिस्पर्धा और संग्रह का भाव अपने जन्म के साथ ही ले आया। यों, सहज ही मनुष्य जहाँ एक-दूसरे से बँधा, सामाजिक बन कर लेन-देन का भागीदार बना, वहाँ वह अधिकतम उपार्जित करने का भाव भी अपने में ले बैठा। इसका परिणाम यह हुआ कि भले ही बाह्य रूप से इन्सान एक-दूसरे से बँध गया, पर मन और मस्तिष्क से दूर···अति दूर हो गया। अन्ततः मनुष्य समुदायों और जातियों में विभक्त हो गया। किन्तु भारतीय संस्कृति के नक्षत्र-लोक में समय-समय पर जो उज्ज्वल सितारे उदित हुए हैं उनका आविर्भाव महलों में नहीं, झोपड़ियों में हुआ। उनमें अधिकांश बड़ी जातियों में न पैदा होकर, छोटी जातियों में हुए। उन्होंने धर्म, समाज और देश का पथ-निर्देश किया। फलस्वरूप आज भी लगता है कि हम अपने उन्हीं सन्तों और ऋषियों का आशीर्वाद अर्जित कर अपने प्राणों में साँस ले रहे हैं।

उपन्यास की कथा में वर्णित रमिया का चरित्र-चित्रण समाज की जिस निचाई से पाठकों के समक्ष उपस्थित किया गया, वह भी इसी बात का द्योतक है। रमिया गाँव की अपढ़ और साधारण नारी है। परिस्थितियों के जिस झंझा-वात में पड़ कर, वह कहीं-से-कहीं पहुँची, इसे जीवन की नाटकीयता तो कहा ही जायेगा, साथ ही यह भी स्वीकार करना होगा कि जब हमारे इस क्षुद्र जीवन में मानवीय और महान् भावना का विकास होता है, तब कदाचित् भगवान् ही, प्राणों के अन्तर्मन से निकल कर अपनी अमर वाणी का उद्घोष करता है। भले ही, आज इस विज्ञान की चकाचौंध में हम "भगवान्" और "भावना" का अस्तित्व स्वीकार न करें, परन्तु यह जगत्, यह प्रकृति, जिस तेज से पुलकित और देदीप्यमान है, उसे समझना हमारे लिए सहज नहीं है। किन्तु जब हम प्रायः यह कहते हैं कि 'मनुवा के मन कुछ और, भगुआ के मन कुछ और' तो यह विश्वास अनायास ही दृढ़ हो जाता है कि कोई शक्ति है जो हमारा संचालन करती है। फ्रांस का नेपोलियन बोनापार्ट, जो अपने समय का वीर और परम महत्त्वाकांक्षी विजेता बना, यौवन के उठाव में जब वह जीविका के लिए नौकरी न पा सका, तो समुद्र में डूब कर आत्महत्या तक करने की बात सोच बैठा था। लेकिन जब समय आया, भगवान् का आदेश उसे मिला, तो वह मेधावी, कुशल रण-नेता तथा विजयी व्यक्ति के रूप में विश्व के सम्मुख प्रस्फुटित हुआ।

इसी प्रकार, वह विपन्न परिवार की अधिष्ठात्री रमिया भी, जीवन के अन्धकार में चेतना पाने में समर्थ बनी। वह साधारण से असाधारण सिद्ध हुई। उस नारी ने शक्तिरूप शिव के समान बन कर, समाज का विष पान किया, अपना जीवन होम दिया। वह गँवारिन, वह खेत-खलिहानों में काम करने वाली औरत जब तेज-पुञ्ज से चमत्कृत बनी, तो वह झूठ को सत्य कहने में समर्थ नहीं हुई। मानो उसके जीवन का नाटकीय परिवर्तन होने जा रहा था। परिस्थिति उसे अपनी ओर खींच रही थी। नारी के रूप में, उसके मनः-प्राण में बसी हुई सुन्दर भावना, जीवन की अर्चना जाग उठी और उस दरिद्र बनी, खेत के डौलों पर घास खोदने वाली रमिया को उद्वेलित करने लगी—'उत्तिष्ठत, जाग्रत, प्राप्य वरान्निबोधत'—'उठो, जागो और अपने-आपको पहचानो।

फलस्वरूप, रमिया ने भी अपनी शक्ति को पहचाना। उसने उस अन्धकार में ही, अपने को खोजा। रमिया ने यह भी सहज में समझ लिया कि वह जिस समाज में है, वह देखने में भले ही इन्सानों का समाज है, परन्तु वह मानवीयता के सद्गुणों से दूर है। उस समाज में कपट है, छल है और क्रूर

भाव है। और रमिया ठहरी नारी—भावनाओं का पुन्ज—वह कैसे कहे कि लड़ना और खून करना ही इस मनुष्य का अधिकार है। रमिया देखती थी कि वह जिस समाज में है, वह भेड़ियों का है, आदमी को मार देना उस समूह के लिए सुगम है। किन्तु आश्चर्य कि रमिया ने ऐसा भय अपने में नहीं पाया। वह जब एक बार चली, तो चलती गई, दिन-दिन बढ़ती गई। उसने इस बात की हिचक नहीं की कि वह दूसरे के घर क्यों जाये,—दूसरे की पीड़ा में क्यों हाथ बँटाये। मानो गाँव के किसी भी घर की पीड़ा उसकी अपनी पीड़ा थी—उसी के प्राणों की एक टीस थी।

यों, जब एक बार रमिया के मानस का विकास हुआ, गाँव के सम्पन्न और मुखिया कहे जाने वाले ठाकुरों ने उसे देखा, तो उन्हें लगा कि यह रमिया—यह औरत जात—जैसे दिव्यरूपा बन कर उस गाँव में उतर आई है। क्योंकि जब उसने अपने स्वजातियों के विरुद्ध होकर डोम जाति की नारी का पक्ष लिया, तो वहाँ उसने गाँव की समस्त नारी-जाति का आशीष प्राप्त किया। लेकिन जब उसी प्रसंग में एक निर्धन ठाकुर-परिवार का युवक लोगों के द्वारा चुटीला किया गया, तो तब भी, रमिया ने मानवीयता के नाते उस युवक के प्रति अपना ममत्व सर्मपित किया। यद्यपि, रमिया का पति डरता था, वह जाति-पक्ष के विरुद्ध चलना रमिया के लिए भी अशुभ मानता था, फिर भी, वह अपनी पत्नी रमिया को रोक नहीं सका, वह नारी के समक्ष हार गया।

पाठक देखेंगे कि कथा में, जिस औपन्यासिक ढंग से रमिया चली, आगे बढ़ी, उसी ढंग से गाँव में उसे ऐसे भी सहयोगी मिले कि जिन्होंने अनायास ही, रमिया की बात को स्वीकार किया और उसके चरणों में अपना सिर झुका दिया। रलियाराम ऐसा ही एक युवक है, उद्दण्ड और निष्क्रिय। किन्तु रमिया के प्रभाव में आकर, वह युवक भी सत्य का पक्ष लेने लगा। कथा में जिस पार्वती का उल्लेख है, उसके प्रति रलियाराम ने जिस कर्तव्य और शुभेच्छा का प्रदर्शन किया, वह किसी प्रकार भी अमानवीय नहीं कहा जा सकता। रलिया जिस धनिक समुदाय में अपनी घुस-पैंठ रखता था, स्वार्थ पूरा करता था, रमिया के सत्य को लक्ष्य कर एक दिन वह भी उस ओर से विमुख हो गया।

किन्तु वह रमिया जो सार्वभौम सेवा-भावना से प्रेरित होकर, गाँव के समाज में आई, ग्राम्य-पंचायत की सरपंच बनी, उसने सहज ही यह बता दिया कि यदि मनुष्य सत्य पर टिका हो तो विरोध अधिक देर तक नहीं टिकेगा। जिस परोपकार की प्रवृत्ति से उद्घोपित होकर रमिया अपने कर्तव्य का सम्पादन कर सकी, उससे यह समझना दुष्कर नहीं कि यदि आज की

ग्राम्य-पंचायतें सत्यता का पक्ष लें, तो वे न केवल अपनी स्थानीय समस्याएँ सुलझा सकती हैं, अपितु, ग्रामवासियों का शहरों की अदालतों और वकीलों की जेबों में जाने वाला पैसा भी बचाया जा सकता है। यह तथ्य है कि गाँव के लोग जल्दी लड़ते हैं और मुकद्दमेबाज़ी पर अपने परिश्रम से उपार्जित पैसा शहरों में बैठे वकीलों को भेंट कर आते हैं। रमिया के कार्य करने की रीति-नीति और ऊँची भावना जब किसी के पक्ष-विपक्ष में संलग्न रहने के लिए तत्पर नहीं थी, तो वह दूध और पानी को पृथक् रूप में देखने की क्षमता पा सकी थी। यही कारण था कि लोग उसका निर्णय स्वीकार करते। वे जानते थे कि रमिया का अपना कोई स्वार्थ नहीं, उसकी दृष्टि में दुराव नहीं, छिपाव नहीं।

लेकिन मानवीय संघर्षों और दुर्बलताओं का एक छोटा पुन्ज वह गाँव भी था। जातिवाद, धर्मवाद और धनिक-निर्धन के रूप में, छोटे-बड़े का अन्तर जब उस गाँव में समाविष्ट था, तो राग-द्वेष और अहंभाव का होना भी वहां स्वाभाविक था। परन्तु रमिया ने अपनी कुशलता, व्यावहारिकता और जीवन के नैतिक पहलू की उच्चता से प्रभावित होकर, उन सब पर विजय प्राप्त की।

हरदेवा और माला का प्रसंग प्रस्तुत कथा की आत्मा का एक ऐसा कोना है जिसे भुलाया नहीं जा सकता। यौवन की ड्योढ़ी पर चढ़ते हुए, वे दो साथी जो अकस्मात ही, नाटकीय ढंग से एक-दूसरे के समीप आ गये, परिस्थितिवश अलगाव के भाव भी उनमें जागते हुए दिखाई पड़े। मानो जातिवाद ने प्रेम पर विजय प्राप्त कर ली। किन्तु वह रमिया, जो धीरे-धीरे इस विचार पर आ टिकी थी कि "जाति धरम पूछे नहीं कोई, हरि को भजे सो हरि का होई" की परम्परा को जब अपनी आँखों के सामने टूटता पाने लगी, तो वह जैसे अपने जीवन के उस महायज्ञ में अन्तिम आहुति देने के लिए तत्पर हो गई। रमिया का उपवास और उसका बलिदान इसी बात का द्योतक है कि वह समाज में फैले हुए ज़हर को स्वयं पी जाने में समर्थ बन गई···।

—श्रीराम शर्मा 'राम'

नदी का मोड़

पहली बात

ढलती दोपहरी के समान, रमिया भी जवानी की दहलीज़ से नीचे उतर चुकी थी। फिर भी, भादों की धूप की तेज़ी के समान, उसके खून में अभी गर्मी बाकी थी। फलस्वरूप, रास्ते की धूप ने उसकी काया जला दी थी। उस समय भी गर्मी से परेशान रमिया, पसीने से लथपथ, घर के द्वार पर आ लगी। उसने घास की गठरिया दरवाज़े पर पटक दी। खुरपा एक ओर रख दिया। बैठकर उसने दम लिया और अपना मुँह ऊपर आसमान की ओर उठा दिया। देखा कि आकाश में छुटपुट बादलों के टुकड़े बन गये थे। मानो उस आसमान पर रुई की खेती हो रही थी और जगह-जगह उसी रुई के गट्ठर बंधे पड़े थे। तभी रमिया ने साँस ली और अपनी ओढ़नी के पल्ले से मुँह पर, कमर और गर्दन पर आया पसीना पोंछा। उस अवस्था में ही, उसने अत्यन्त आतुर बन कर याचना की कि अब तो पानी बरसा दे भगवान! क्योंकि वर्षा की ऋतु बीत रही थी। सावन सूखा चला गया था। भादों आ गया था। वह जेष्ठ के समान तप रहा था।

उसी समय पड़ोसी रलिया वहाँ आया। वह रमिया को द्वार पर बैठी देख कर उसकी घास की गठरिया पर निगाह डालने लगा। उसी के सामने लाठी का कुन्दा ज़मीन पर टेक कर, किंचित् हँसता हुआ बोला—"आज तो जल्दी हाथ मार लाई, रमिया भाभी! घास भी अच्छी लाई। बोल तो, किधर से खोद लाई?"

रमिया ने रलिया की बात सुनी तो झल्ला पड़ी—"क्या खाक खोद लाई! हाथ-पैरों की हड्डियाँ तोड़ीं तो इतनी खोद पाई। चार कोस गई और चार कोस आई!"

रलिया ने कहा—"पानी बरसे तो घास हो।" उसने घास की गठरिया पर फिर निगाह डाली और बोला—"तू आज अच्छी घास लाई, भाभी! दो दिन का काम दे जायेगी।" यह कहते हुए उसने घर की ओर देखा और पूछा—"जग्गू भैया कहाँ है? सो रहा है या कि······"रलिया हँस दिया।

रमिया चिढ़ गई और बोली—"वह भी बैठा होगा किसी चौकड़ी में ! हुक्का गुड़गुड़ा रहा होगा ! मैं जिस दिन मर जाऊँगी, तब उसे पता चलेगा !"

रलिया हँस दिया। उसने अपनी लाठी का कुन्दा उठाकर ज़मीन में दे मारा और बोला—"वह तेरा आदमी है भाभी ! देर से बीमार है।"

मानो तड़प कर रमिया ने कहा—"खाते वक्त कहाँ चली जाती है उसकी बीमारी ! अब तो बात-बात में गुर्राता है। बैठकर खाता है और आँख दिखाता है···मरदुआ कहीं का !"

रलिया ने लाठी उठा ली और वहाँ से आगे बढ़ता हुआ बोला—"तू भी खूब है, भाभी ! अपने आदमी को बैठा कर खिलाती है और उसे ऊपर से डांट भी पिलाती है। सच, नमूना है तू भी इस गाँव का !" यह कहते हुए रलिया आगे बढ़ गया और रमिया की आँखों से ओझल हो गया।

रमिया उसी समय अपने द्वार से उठी और घर में चली गई। उसने घास की गठरिया भी घर के अन्दर रख दी। खुरपा रख दिया। मिट्टी के घड़े से उसने पानी लिया और मुँह धोया, पैर धोये। तभी लाठी खुट-खुट करता हुआ जग्गू घर में प्रविष्ट हुआ। रमिया को देखते ही वह बोला—"रमिया, अब आई है तू ! भूख के मारे प्राण भी सूख गये।"

जग्गू की बात सुनी, तो रमिया का पारा चढ़ गया। उसने तेज़ स्वर में कहा—"जी, मुझसे बड़ी ग़लती हुई, सरकार ! बैठे-बैठे रोटी मिल जाती है न ! सोच लिया—नौकरानी है, कमाकर लाये और ठेक कर दे।" फिर वह पास आ गई और जग्गू के ठीक सामने खड़ी होकर कहने लगी—"यह भी नहीं हुआ कि घड़ा भर दिया जाता ! क्यों जी, मैं पूछती हूँ बात करने को तुम्हारा मन कैसे अच्छा हो जाता है !" यह कहते हुए वह सीधी तन गई और बोली—"मैं कहे देती हूँ अब मेरे बस की बात नहीं है। चार-चार कोस से घास खोदकर लाना और जिस-तिस के ताने सुनना···!"

साँस भरते हुए जग्गू बोला—"ये ताने सुनना तो हमारे भाग्य में लिखा है, रमिया ! तेरी मर्ज़ी है घास ला, या न ला ! मुझे भूखा मरना है, तो मर जाऊँगा। मैं तुझसे कुछ न कहूँगा। गाय भी बेच दूंगा।"

किन्तु रमिया बात सुनने के लिए वहाँ खड़ी नहीं रही। वह चूल्हे के पास पहुँच गई। उसमें दबी आग को कुरेद कर सुलगाने लगी। सचमुच, उसने जग्गू से जितना कह दिया, कदाचित् उसे नहीं कहना चाहिए था। उसकी आत्मा में बरबस ही उमस पैदा हो गई। वह अपनी थकान भूल गई।

लेकिन जग्गू के मन में तो बात आई और जमकर बैठ गई। वह सोचने

लगा—सच तो है, रमिया मेरे कारण ही, परेशान हो गई। सुवह की गई अव जंगल से आई है, तो रोटी वनाने में लग गई। इसके सिर पर भारी वोझ है, जो मैंने ही डाला है। मेरे कारण ही, इसकी यह गत हो गई।

तभी जग्गू ने अपनी वाणी पर ज़ोर देकर कहा—"रमिया, मैं कल से काम करने जाऊँगा। अव तुझे घास खोदने नहीं जाने दूँगा।"

रमिया घर में से आटा निकाल लाई थी। उसे गूँध रही थी। जव उसने वात सुनी, तो वोली—"हाँ, काम क्यों न किया जायेगा! इस रमिया को अव निहाल करना वाकी रह गया है न!" उसने जग्गू की ओर देख कर कहा—"अभी तो हकीम के पूरे पैसे भी नहीं गये हैं। कुछ और चढ़ाने रह गये हैं, क्या?" उसने फिर अपने स्वर पर ज़ोर दिया—"कहे देती हूँ, अव मेरे पास कुछ नहीं रह गया है। जो दो-चार टूँमें (ज़ेवर) थीं, वे सव विक गई हैं। अव की वार कुछ हुआ, तो मेरी ताक़त नहीं है।"

जग्गू ने साँस भरी—"रमिया, होगा तो वही जो भगवान को मंजूर होगा।"

रमिया तुनक गई—"जी, वड़े आये भगवान पर भरोसा रखने वाले! तुम जैसे मैंने वहुत देखे हैं। भगवान के ऐसे पुजारी गलिहारे में मारे-मारे फिरते हैं!"

जग्गू हँस दिया—"आज तुझे गुस्सा आया है, रमिया!"

रमिया ने धुएँ के कारण हुई अपनी लाल-लाल आँखों से जग्गू की ओर देखा और जैसे तड़प कर कहा—"जी नहीं, मुझे प्यार आया है!"

सुनते ही, जग्गू खिलखिला कर हँस पड़ा। जव उसने चूल्हे में आग सुलगती देखी, तो आले में रखा तमाखू उठाया और चिलम लेकर चूल्हे के पास पहुँच गया। वह अपनी आँखों में रमिया के लिए ममता और प्यार लेकर वोला—"जव तू मुझसे लड़ती है, तो मुझे यह भी अच्छा लगता है। सच, आज तो मेरा भूख के मारे प्राण भी घुट गया।"

चिलम में आँच रखकर, जग्गू फिर अपनी जगह जा वैठा। उसने अपने नारियल पर चिलम रख ली और उसे गुड़गुड़ाकर धुआँ निकालते हुआ वोला—"रमिया, मेरे मन में आता है कि देह में जान आ जाय, तो मैं शहर चला जाऊँ। गनपत मिल में काम करता है न, उसके सहारे मैं भी लग जाऊँगा। आज उसने कहा था।"

रमिया ने तवे पर रोटी डाल दी थी। एक चूल्हे की गही में सिक रही थी। जव वह उसे सेंक चुकी, तो उसने थाली में रोटी और रात का साग रखा। वह जग्गू की ओर देखकर वोली—"अव रोटी खानी है या हुक्का पीना है?"

जग्गू ने कहा—"आता हूँ। बस, दो घूंट मारता हूँ।" वह तुरन्त ही खड़ा हो गया। उसने घड़े से पानी लिया और रोटी खाने बैठ गया। उसी समय उसने अपने मन में उठती हुई बात को फिर लिया और कहा—"रमिया, अब इस गाँव में गुज़र नहीं होगी। खेत से हम कुछ नहीं कमा सकते। जब हमारे पास बैल नहीं, तो सच, कुछ भी नहीं पा सकते।" उसने गरम रोटी के कई टुकड़े कर लिये और एक टुकड़े पर साग लगाता हुआ बोला—"देखती है न तू, अब गनपत के पास पैसा है। लड़की का व्याह भी ठाठ से किया। भला कभी इसके खानदान में से किसी ने दिये खेत-बरौठी में पाँच सौ रुपये! बारात की रोटी भी तश्तरी की मिठाई से की। अब तो उसकी बहू भी जेवर झनझनाती निकलती है मोहल्ले में।"

किन्तु लगता था कि उस समय रमिया के मन में जग्गू की बात नहीं बैठ रही थी। उसे गनपत का नाम सुनना भी अच्छा नहीं लग रहा था। निदान, जब उसने जग्गू को फिर वही बात कहने के लिए उत्सुक पाया, तो तुरन्त बोली—"रोटी खाओ पहले। हमें किसी की बराबरी नहीं करनी।"

जग्गू ने कहा—"न, रमिया! मैं भी तुझे ज़ेवरों से मँढ़ी देखना चाहता हूँ। एक बार तो तुझे रानी बनाना चाहता हूँ, मैं भी!"

रमिया ने तुरन्त आँखें तरेर कर कहा—"बस, बन गई मैं रानी! मैं ऐसी ही ठीक हूँ।" और उसने चूल्हे की गही से गरम रोटी निकाल कर जग्गू की थाली में रख दी।

जग्गू ने कहा—"बस, मैं खा चुका।"

"क्यों, यही भूख थी? तुम्हारे तो प्राण निकले जा रहे थे!"

जग्गू हँस दिया—"मैं कमज़ोर हूँ, रमिया! कम खा पाता हूँ।"

रमिया ने कहा—"मैंने आज से सोच लिया है कि सुबह पहले रोटी बना दिया करूँगी।"

रोटी खाकर जग्गू खड़ा हो गया। वह चारपाई पर जा बैठा।

उसी समय रमिया ने सुनाया—"सभी गनपत नहीं बन सकते। हम गाँव के हैं, तो गाँव में रहेंगे।"

जग्गू की चिलम का तमाखू जल गया था। उससे धुआँ उठ रहा था। उसने चिलम उलट दी और दूसरा तमाखू रखा। वह फिर नारियल पीने लगा।

तभी दरवाज़े के बाहर से आवाज़ आई—"अरी, चाची,—ओ—" और उसी क्षण आवाज़ देने वाली अन्दर आ गई।

देखते ही, रमिया ने कहा—"अरी, तू पार्वती!"

पार्वती ने कहा—"हाँ, चाची ! मैं आज आई।"

रमिया ने कहा—"बैठ जा। पीढ़ा पड़ा है, उठा ले।"

पार्वती बोली—"सुना था कि चाचा को बड़ी तकलीफ़ हुई!"

रमिया ने कहा—"बाल-बाल प्राण बचे, पार्वती!"

"हाँ, दुबले भी बहुत हो गये हैं।" पार्वती ने कहा।

जग्गू ने कहा—"बिटिया, तू सुना, सब ठीक हैं, तेरी ससुराल वाले?"

रमिया ने कहा—"वहाँ क्या कमी है। रामजी की मौज है।"

जग्गू बोला—"हाँ जी, खेती भी अब उन्हीं की है जिनके पास बैल हैं, आदमी हैं।"

पार्वती ने कहा—"उस गाँव के पास से नहर निकलती है। पानी की कमी नहीं रहती।"

रमिया बोली—"पर यहाँ तो पानी के लिए सिर फूटते हैं। पिछले दिनों तो बड़ी फ़ौजदारी हुई थी, इस गाँव में। उसी पानी में अब आग लगी है। सभी पहले अपना खेत भरना चाहते हैं। जो पतरौल की जेब में रुपया डाल देते हैं, उसे तो पानी मिल जाता है, नहीं तो···हाँ, पार्वती! अब तो कलियुग आ गया है! जिस के पास रुपया है, वही जिन्दा रह सकता है।"

पार्वती ने कहा—"चाची, बेईमानी फैल गई है।"

रमिया ने कहा—"हमारा खेत तो सूखा पड़ा है। भगवान की ओर मुंह बाये देख रहा है।"

जग्गू ने नारियल रख दिया और बाहर चला गया।

रमिया ने कहा—"रोटी खा ले, पार्वती।"

पार्वती बोली—"तुम खाओ, चाची।" और तभी उसने पूछा—"यशोदा कब आयेगी?"

रमिया की लड़की का नाम यशोदा था। वह ससुराल में थी। रमिया ने जब उसकी बात सुनी, तो बोली—"बीमार बाप को देखने आई थी, तुरन्त चली गई। उसका श्वसुर साथ आया था। उससे छोड़ने को कहा भी, तो बोला—"घर में कोई नहीं है, भैंस है, खेत के दाने भी उठाने हैं।" वह साँस भर कर बोली—"पराई पीर में कौन शामिल होता है, बिटिया! अब यशोदा पराई हुई।"

पार्वती ने कहा—"ठीक बात है, चाची! मेरा भी यही हाल है। बस, मिलने भर को भेजी गई हूँ। वहाँ भी घर खाली है।"

रमिया ने कहा—"सभी अपना स्वार्थ देखते हैं। अपना मतलब परखते हैं।"

पार्वती उठ खड़ी हुई। वोली—"फिर आऊँगी, चाची।"

रमिया ने कहा—"आइयो ज़रूर।"

पार्वती चली गई।

तभी रमिया के मन में वात आई—भाग्य खुल गये इस लाडो के! वाप ने पाँच हज़ार रुपये में क्या वेची, खुद भी सुघर गई। वाप का घर भी भर गई। रमिया के मन में वैठी हुई पुरानी कड़वाहट फिर पैदा हुई कि वेटी बेच कर वाप ने अपनी ज़िन्दगी चलाई, ज़मीन खरीद ली, राम-राम!

दूसरी बात

मलिकपुर गाँव के लोग चाहे किसी और बात में एकमत न होते हों, परन्तु इस विषय में प्राय: सभी एक विचार के थे कि किसी समय उनका गाँव आज के समान छोटा अथवा विपन्न नहीं था ! पहले कभी अत्यन्त विशाल था। वहाँ बड़े-बड़े ज़मींदार रहते थे। वणिक् लोग भी दूर-दूर तक अपना व्यापार चलाते थे। वे अनाज की खत्तियाँ भरते थे। किन्तु उसी मलिकपुर गाँव की अवस्था उन दिनों खराब थी। वहाँ के लोगों की आर्थिक विपन्नता तो थी ही; साथ में एक आदमी की दूसरे के प्रति लड़ाई और वैर-भाव की भावना भी उग्र रूप से जागृत थी। पड़ौसी ही पड़ौसी को खाता-पीता देखना पसन्द नहीं करता था। कहने भर को गाँव राजपूतों का था, वहाँ सूर्यवंशी राजपूतों का आधिक्य था, परन्तु पुरखों की उदारता और सम्पन्नता उस जाति ने नष्ट कर दी थी। केवल, अविवेकपूर्ण जीवन ही, कंकाल के समान, उस गाँव के जीवन में चीत्कार कर रहा था······

विश्व-युद्ध बीत चुका था। उस युद्ध के विभिन्न मैदानों में मारे गये सैनिक केवल चील-कौओं और गिद्ध-स्यालों की उदर-पूर्ति का साधन मात्र रह गये थे। कहीं उन सैनिकों के सड़ते हुए शरीर सूख चुके थे और कहीं दुर्गन्ध उठा रहे थे। फिर भी लगता था कि उन मृत शरीरों की आत्माएँ दूर क्षितिज में यह घोषणा करने में समर्थ थीं कि उनसे ही मनुष्य-जाति का निर्माण हुआ। उनसे ही धर्म, विवेक और शाश्वत मानव का जन्म हुआ। मानो उसी के हेतु उनका बलिदान हुआ। मानो हिंसक मनुष्य ने ही, अहिंसक और बुद्धिजीवी मानव का निर्माण किया। फिर भी युद्ध हुआ, उसका अन्त हुआ। कोई हारा, कोई जीता। लेकिन उस विशाल नर-संहार के बाद की अवस्था यह थी कि जीतने वाले की भी कमर टूट गई। सभी ओर आर्थिक दासता और संघर्ष की कठोर वाणी उद्घोषित हुई। विश्व के विशाल भू-क्षेत्र में एक करुण और दर्दभरी आवाज़ गूंज उठी। अपने दाम्पत्य-जीवन के प्रथम चरण में ही ठोकर खाई ललनाएँ चीख उठीं। उनका यौवन तड़प उठा। वैधव्य का वह कठोर शाप वज्र के समान, उस नारी-

समाज पर गिर पड़ा। फल यह हुआ कि विश्व के विभिन्न भागों में बसे हुए सैनिकों ने तो अपने राष्ट्र की पुकार पर प्राणों का विसर्जन किया, परन्तु पीछे रह गईं उनकी पत्नियों ने पेट की ज्वाला को शान्त करने के लिए या तो वेश्यावृत्ति का आश्रय लिया अथवा अपना आत्मघात कर लिया। उसी समय भिखारियों का दल भी वृहत् रूप में प्रस्फुटित हुआ।

मलिकपुर गाँव से भी कई सौ जवान युद्ध में गये थे। उनमें आधे से अधिक मर गये। विश्व के समान, जब युद्ध की प्रतिक्रिया समूचे देश पर छाई, तो मलिकपुर गाँव भी उससे नहीं बच सका। उसके खेत सूख गये। आदमियों की अवस्था बिगड़ गई। लोग दाने-दाने को तरसने लगे। इसका फल यह हुआ कि किसानों ने अपनी स्त्रियों के ज़ेवर और जंगल की ज़मीन बेचनी आरम्भ कर दी। सौ रुपए की ज़मीन बीस रुपए में चली गई।

लाला धनपतराय मलिकपुर गाँव का पुराना निवासी था। सुनते हैं कि किसी समय उसके पुरखे खत्तियों का व्यापार करते थे। परन्तु एक समय आया कि व्यापार में घाटा हो गया। चोट-पर-चोट यह पड़ी कि एक बार लाला के घर डाका भी पड़ गया। वह करुण और हृदयस्पर्शी कहानी आज तक सुनी जाती है क्योंकि उस डाके में लाला के एक पूर्वज की डाकुओं ने आँखें निकाल दी थीं। फिर शरीर के टुकड़े-टुकड़े किये थे। जब वे डाकू लौटे तो गाड़ी में भर कर रुपया ले गये थे। धन के लिए मनुष्य कितना क्रूर और बर्बर हो सकता है, लोग आँखों-देखी उस घटना को अपनी सन्तानों से कहते थे। जो हो, सन् १९१४ के युद्ध से पूर्व लाला धनपतराय की स्थिति अच्छी नहीं थी। घर में भोजन का भी टोटा था। परन्तु जब युद्ध समाप्त हुआ, तो मानो गाँव की उस बिगड़ती हुई अवस्था से लाला को त्राण मिल गया। उसने लोगों की ज़मीनें और ज़ेवर गिरवी रखने शुरू कर दिये। माल एक ओर से लेता और दूसरी ओर दे देता। व्यापार का चिर-पुरातन नियम लाला धनपतराय ने सहज ही कार्य रूप में परिणत किया। वह कुछ ही दिन में मलिकपुर का एक बड़ा ज़मींदार बन गया। धनपतराय गाँव का अन्नदाता कहा जाने लगा। उसी समय दूसरा विश्व-युद्ध छिड़ा और देश में नया प्राण उद्भूत हुआ।

उन दिनों मलिकपुर में मुकदमेबाज़ी का भी ज़ोर था। धनपतराय सबसे बड़ा मुकदमेबाज़ था। उसका प्रधान कार्य यही था कि कचहरी जाता और वहाँ से किसी-न-किसी के नाम डिगरी प्राप्त करता। यद्यपि अन्य लोग डिगरी प्राप्त करके भी वसूल नहीं कर पाते थे, परन्तु धनपतराय उन रास्तों को जानता था, जिनसे वह वसूली कर अपना उद्देश्य पूरा कर सकता था।

पार्वती जब ससुराल से आई, तो तभी उसे पता चला कि उसके पिता जसपत का लाला धनपतराय से मुकदमा चल पड़ा है। उस मुकदमे के कारण जसपत परेशान था। पार्वती को अपने घर बुलाने का उसका और कोई उद्देश्य भले ही कुछ न हो, पर एक यह अवश्य था कि वह लड़की के द्वारा उसकी ससुराल से कुछ रुपया प्राप्त करे। उसे भरोसा था कि यदि वह रुपया पा जाये, तो यह लाला धनपतराय को नीचा दिखा सकता है। क्योंकि उसका एक मत यह भी था कि लाला ने उसके साथ बेईमानी की है। उसे अनपढ़ समझ कर वही पर अंगूठा लगवा लिया और पचास रुपये देकर उन्हें पाँच सौ रुपये बना दिया। वह प्रत्येक वर्ष नया काग़ज़ भी बदलवाता रहा। मूल के साथ सूद भी चढ़ता रहा। और जसपत समझता था कि उसने मय सूद के रुपया दे दिया। किन्तु उसने जो-कुछ दिया, लाला की वही में उसका कोई उल्लेख नहीं था। अपनी उस परिस्थिति में ही, पार्वती को घर बुलाकर; जसपत ने उसे सभी बातें बताईं। उससे रुपये की भी माँग की। उसी प्रसंग में जसपत ने पार्वती को यह भी बताया कि उसके श्वसुर के पास पैसा है। वह जब से उस घर में गई है, उनका भाग्य खुल गया। उसने कहा कि यह तो अपने-अपने भाग्य की बात है, तुझे बेटी बना कर भी, मैं कंगाल बना रहा। ठीक से तेरी सार-सम्भाल भी नहीं कर सका। पर जब औलाद समर्थ होती है, तो उसे माँ-बाप का भी ध्यान रखना पड़ता है। बेटी और बेटे में भला कब अन्तर माना गया है।

जिस समय जसपत ने अपनी पुत्री के समक्ष बात रखी, तो पार्वती की माँ भी वहाँ थी। उसे बुख़ार था। चारपाई पर पड़ी थी। बाप-बेटी उसी के पास बैठे थे।

तभी जसपत ने पत्नी को टंकोर कर कहा—"क्यों, पार्वती की माँ, ठीक है न! यही हमारी लड़की है, यही लड़का!"

पत्नी ने साँस भर कर कह दिया—"ठीक तो है।"

उस समय पार्वती मौन थी। वह चुपचाप सिर झुकाये ज़मीन कुरेद रही थी।

जसपत ने कहा—"पार्वती, तूने सहारा नहीं दिया, तो यह घर उजड़ जायेगा। धनपत कुरकी लाकर सभी कुछ अपने हाथ में कर लेगा। तू समझ ले, फिर बाप का घर नहीं मिलेगा। इस तरह यह जीवित भी न रह सकेगा।"

पार्वती ने कहा—"पर चाचा, मैं पैसा कैसे पाऊँ। वहाँ से नहीं मिलेगा। कोई नहीं देगा।"

जसपत ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—"क्यों नहीं मिलेगा, पैसा! हमने

वेटी दी है। उनके घर में दीया जलाया है। मेहतो आज बात बना ले, पर कल तो कोई उसके लड़के का विवाह भी नहीं करता था। मुझे पता है, उसने भी बेईमानी से रुपया प्राप्त किया है। याद है, तेरे विवाह पर मैंने उससे पाँच हज़ार माँगा था, पर वह चालाक आदमी तीन हज़ार देकर ही चुप हो गया!"

जसपत की पत्नी का नाम गोदावरी था। परन्तु उसे गेंदो नाम से पुकारा जाता। जब उसने जसपत की बात सुनी, तो वोली—"पर पार्वती से यह सब क्या कहना! तुम मेहतो से कहो। वही तो लड़की को लेने आयेगा।"

जसपत ने कहा—"पार्वती की माँ, मैं मेहतो से साफ़ कह दूंगा। उससे अपने दो हज़ार माँगूंगा।"

गेंदो ने कहा—"और वह न दे, तो!"

तुरन्त ही जसपत ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया—"तव मैं भी पार्वती को न भेजूंगा।" उसने कहा—"री, गेंदो! सभी अपना भला देखते हैं। अपने स्वार्थ की बात सोचते हैं। मैं क्या ऐसे ही मूर्ख वना रहूँगा। वाल-वच्चों को जहर न दे सकूंगा।" यह कहते हुए उसने पार्वती की ओर देखा। वह सिर झुकाये बैठी थी। तभी जसपत ने अनुभव किया कि वह रो रही है। इसलिए, तुरन्त ही, वह अपने स्वर में तेज़ी और रूक्ष भाव लेकर वोला—"क्यों री, पार्वती! रोती है! भला क्यों?"

पार्वती ने अपना मुँह ऊपर उठाया और उन वेदना से भरी आँखों को जसपत की आँखों पर टिकाकर कहा—"चाचा, अब तुम मेरी भी मिट्टी खराब करोगे! ऐसे तो तुम मुझे ज़िन्दा मार दोगे!"

जसपत इतनी वात सुनकर झल्ला गया। उसके मन में रोष भी आ गया। उसका क्रूर भाव ऊपर उठ आया। वह कुपित होकर बोला—"पागल लड़की! तुझे इससे क्या! व्याह मैंने तेरा किया था। अब भी मैं ही तेरी चिन्ता करूँगा। वह घर न सही, तो मैं दूसरा पकड़ लूंगा···समझी!"

सहमे भाव में, पार्वती ने कहा—"तो कहो, कि मुझे······" वह आतुर वन गई—"जव तुम मुझे नहीं भेजोगे, तो झगड़ा होगा। तब तो मेरे लिए इस दुनियाँ में कहीं भी स्थान न रहेगा, चाचा!"

जसपत ने अत्यन्त लाल बनकर कहा—"मैं तो नहीं मर गया! मैं तेरा दूसरा व्याह करूँगा। मेरे जीते-जी क्या तेरी ओर कोई आँख उठा सकेगा।"

पार्वती का सिर झुक गया। उसने वेदना के स्वर में कहा—"अब मुझे ऐसा भी करना होगा, क्या! मैं दर-दर मारी फिरूँगी। आज यहाँ, तो कल वहाँ······" वह अत्यन्त पीड़ित बनकर बोली—"चाचा, ऐसा हुआ, तो मैं अपने

इस काले मुँह को लेकर कुएँ में डूब मरूँगी। मैं अब दूसरा विवाह न करूँगी।"

किन्तु इतनी बात सुनी, तो जसपत गरज उठा—"पार्वती, मैं भी कहे देता हूँ कि तू मेरी मर्ज़ी के खिलाफ़ चली, तो गंडासे से तेरे टुकड़े कर दूँगा। जिन हाथों से तुझे पाला है, उन्हीं से तेरा गला घोंट दूँगा, समझी!" यह कहते हुए वह उठा और बाहर चला गया। वह हाथ में लाठी लिये अपने खेत पर जाने को गाँव से बाहर निकल गया।

उन दिनों चारों ओर सूखा था। पानी नहीं बरस रहा था। कहीं-कहीं किसान खेतों में पानी दे रहे थे और ईख की पलेवा कर रहे थे। कुछ किसान खेतों की खुदाई में लगे थे। एक खेत के डौले पर जब जसपत जाकर खड़ा हुआ, तो तभी, कन्धे पर लाठी रखे, रलिया नाम का युवक वहाँ आया और अल्हड़ भाव से जसपत को देखता हुआ बोला—"कहो, मेहतो! क्या रंग-ढंग हैं। क्या हाल हैं, तुम्हारे मुकदमे के? सुना है, लाला धनपत जीत जायेगा। तुम्हारे खेत उसके कब्ज़े में······"

जसपत के मन में उस समय भी क्रोध था। वह पार्वती की बात मन में लिये था। घर से वहाँ तक पहुँचकर, बराबर यही कह रहा था कि इस संसार में सभी के अपने स्वार्थ हैं। बेटी भी अपनी दिशा बनाती है। समय पर माँ-बाप की ओर से आँख फेर लेती है। किन्तु जब जसपत ने रलिया की बात सुनी, तो वह तपाक से, उसकी बात को तोड़कर बोला—"मैं अपने को मिटा दूँगा, पर खेत लाला को न दूँगा, समझे!"

सुना, तो रलिया मुँह बिचका कर रह गया। वह आसमान की ओर देखने लगा। छोटे-छोटे बादल चारों ओर चक्कर काट रहे थे, वह उन्हीं की ओर देखता रहा।

तभी जसपत ने फिर कहा—"रलियाराम, सुना है कि तू भी आजकल लाला के पास बहुत बैठता है। उससे साँठ-गाँठ रखता है।"

बात सुनी, तो रलिया हँस दिया—"भैया, जहाँ गुड़ होगा, वहीं चींटे पहुँचेंगे। लाला मालदार है। गाँव का ज़मींदार है।"

जसपत ने कहा—"यह तो चलती-फिरती धूप-छाँह है, भैया!"

रलिया ने कहा—"हाँ, सो तो है ही। अभी चार दिन से तो लाला मालदार बना है।"

जसपत बोला—"मैं इस धनपत लाला को बता दूँगा कि बेईमानी करने का मज़ा क्या है। वह जीत भी गया, तो भी पछतायेगा। रोयेगा, सिर धुनेगा।"

उसी समय, रलिया कुछ और पास आकर बोला—"क्यों, कोई बड़ा इरादा

है, क्या ?" वह बोला—"देखो मेहतो, मैं लाला के पास चाहे हज़ार बार बैठूँ, पर हम-तुम तो भाई-भाई हैं। एक मोहल्ले के हैं।"

रलिया की तरह, जसपत ने भी अपनी लाठी खेत के मेंड पर टेक दी। उसने कहा—"सो तो है ही! मुझे तुझसे यही शिकायत है। अपना बनकर भी 'अपना' नहीं रहता। लाला तो दाना डालकर मुर्ग़ी फँसाता है। फिर उसे ज़िवह करता है। वह बड़ा जल्लाद है! क़साई है!"

रलिया ने तुरन्त कहा—"मैं जानता हूँ। मैं तुम्हारे लिए अपना ख़ून वहा सकता हूँ, जसपत मेहतो!"

जसपत प्रसन्न हो गया—"मुझे तुमसे यही आशा है।"

रलिया ने फिर अपनी लाठी कन्धे पर रख ली। वह हँस दिया और आगे बढ़ गया। उसी समय उसने आगे बढ़ते हुए कहा—"अब पानी बरसेगा।"

जसपत ने कहा—"कहाँ बरसता है! आसमान भी धोखा दे रहा है।"

रलिया आगे बढ़ता हुआ कह गया—"देखना, इतना बरसेगा कि नभ और थल एक नज़र आयेगा।" इतना कहकर वह चला गया।

उसी समय जसपत भी आगे बढ़ गया। उसके मन में बात आई कि यह रलिया भी खूब है। लाला का खाता है और गुर्राता है। आजकल छैल-चिकनिया बना है। ज़ुल्फ़ें रखता है। उनमें तेल डालता है,—पूरा बदमाश कहीं का!

किन्तु रलिया अभी गाँव के किनारे पर ही पहुँचा था कि सामने से लाला धनपतराय आता हुआ मिल गया। उसे देख, रलिया हँस दिया। दूर से ही बोला—"जय राम जी की लालाजी! इस समय किधर?"

लाला ने अभिवादन का उत्तर दिया और कहा—"ज़रा गोधू चमार के यहाँ जा रहा हूँ। सोचा था कि कुछ मिट्टी के ढेले मँगवा कर घेर में डलवा दूँ। उसकी दीवार कच्ची है, कमज़ोर है। उसके सहारे-सहारे ढेले पड़ जायँगे।"

रलिया ने कहा—"पर गोधू नहीं मिलेगा। वह क्या अब बेकार करेगा।"

लाला ने कहा—"वह सिर के बल आयेगा। भला क्यों न आयेगा! मैं तो उसे पैसे भी दूंगा। कल अनाज उधार लेने आया था। मैंने टाल दिया था।"

रलिया हँस दिया—"लाला, बड़े उस्ताद हो तुम! अब उससे मुफ़्त में ढेले ढुवाओगे। अनाज दोगे, तो उसका दूना वसूल कर लोगे, वाह-वाह! मानता हूँ तुम्हें!"

लाला धनपतराय की आयु चालीस को पार कर चुकी थी। सिर के बाल सफ़ेद होने लगे थे। रलिया की बात सुनी, तो आँखों से हँस दिया। उसने कहा—"मेहतो, इस दुनिया में ऐसे ही काम चलता है। मैं उसे अनाज तो दे दूंगा, पर

गाँव में उसे कहीं भी उधार नहीं मिलेगा। उस ग़रीब को कौन देगा!"

रलिया ने कहा—"सुनता हूँ, गोवू की ज़मीन भी तुम्हारे पास आ गई है। वह नंगा हो गया है।"

धनपत वोला—"हाँ, भैया! जब अपनी ताकत से अधिक आदमी चलेगा, दौड़ेगा, तो उसका साँस फूलेगा। जल्दी मरेगा। गोवू ने भी यही किया। लड़की के व्याह में उसने चादर से वाहर पैरों को पसार दिया। घर पर वरात आ गई थी। उसमें अधिक आदमी आये थे। हज़रत के पास इतना सामान नहीं था। ऊपर से अपनी आवरू का व्यान था। तुरन्त भागा हुआ आया। पैरों में गिर गया। मुझे भी रहम आ गया। आखिर गाँव का था। गाँव की आवरू का भी सवाल था।"

रलिया ने कहा—"हाँ, लाला! तुम्हारे उसी रहम ने वेचारे को चौपट कर दिया। वह दाने-दाने को मोहताज हो गया!"

लाला ने वात सुनी तो अप्रतिभ वन गया। परन्तु वह अपने मन की वात को दवा गया। वनावटीपन से हँस दिया। उसने वत्तीसों दाँत निपोर दिये और कहा—"भैया, मेहतो! अगर रुपया देकर भूल जाऊँ, तो कैसे काम चलेगा। फिर दूसरों को कहाँ से दिया जायेगा। दुनिया का काम ऐसे नहीं चलता। कोरी दया-माया से इस ज़िन्दगी का कारवाँ पार नहीं होता। और पैसे का काम ही यह है कि एक ओर से आये, दूसरी ओर जाये। भला इसमें मेरा क्या!

रलिया ने अपना रुख वदला। जो वात वह कहने चला था, उसे रोक गया और लाला की वात का समर्थन करता हुआ वोला—"हाँ, लाला! यह तो तुमने ठीक कहा। रुपया क्या एक के पास टिकता है। चक्कर काटता है। तभी तो लक्ष्मी को चंचल कहा है।"

लाला ने मुँह सिकोड़ कर कहा—"लोग वेईमान हैं! लेकर देते नहीं हैं। हराम का रुपया समझते हैं। मैं देकर भी माँगूँ तो आँख दिखाते हैं; गुर्राते हैं; झगड़ा करते हैं।"

रलिया को तभी जसपत का ध्यान आया। वोला—"जसपत मेहतो मिला था। वड़ा लाल-पीला हो रहा था। ज़रा होशियार रहना, उसका मिज़ाज खराव है। पता तो है ही तुम्हें कि उसका वाप ख़ूनी था।"

लाला के मुंह पर जैसे सफ़ेदी छा गई। उसने कठिनाई से गले का थूक सटक लिया। अपने मन का भय प्रगट नहीं होने दिया। रलिया की ओर देख-कर वोला—"मुझे सव पता है। अव तक ऐसों से ही मेरा पाला पड़ा है। जव आदमी वेईमान वनता है, तो सभी-कुछ करता है। धर्म और भगवान को

भी भूल जाता है। लेकर देना भला किसी को अच्छा लगता है!"

रलिया ने कहा—"मैं तुम्हारी तरफ़ जा रहा था। घर में अनाज नहीं था।"

तुरन्त ही धनपतराय ने कहा—"हाँ, हाँ, तुम चलो। मैं अभी आया। तुम्हारे लिए क्या इन्कार किया जायगा, मेहतो!" और वह तुरन्त ही आगे बढ़ गया।

तीसरी बात

रमिया उन स्त्रियों में नहीं थी कि जिसे कोई न जानता हो। फलस्वरूप, रमिया सभी से परिचित थी। उसे पूरे बीस वर्ष उस गाँव में आये हो गये थे। जो आज जवान थे, वे उसके सामने पैदा हुए थे। जवान बूढ़े हो चुके थे। और रमिया की अवस्था यह थी कि वह जवानों में जवान और बूढ़ों में बुढ़िया थी। वह यदि किसी की भाभी लगती, तो ऐसे भी उस गाँव में कम युवक नहीं थे कि जो उसे ताई, चाची और दादी कहते थे।

उस दिन संध्या का समय था। चौपाये जंगल से लौट चुके थे। गायों के बच्चे अपनी माताओं का दूध पीने के लिए रंभा रहे थे। रमिया ने घर में से निकल कर गाय के चारे में चोकर मिलाया। उसने साथ में लाई हँडिया से पानी लिया और गाय के थनों को धोया। जब वह गाय का दूध निकाल चुकी, तो उसने बछड़ा छोड़ दिया। वह फिर उचक-उचक कर पूँछ उठाये हुए, माँ के थनों में मुँह मारने लगा।

जग्गू घर के चबूतरे पर बैठा नारियल पी रहा था। उसी समय पड़ोसी रामलखा वहाँ से निकला। जग्गू को देखकर वह रुक गया। बछड़े की ओर निहारता हुआ वह बोला—"तुम्हारा यह बछड़ा अच्छा है। साल भर बाद ही अपनी माँ के बराबर हो जायगा।"

जग्गू ने कहा—"हाँ, ऊँचा बनेगा।"

रामलखा बोला—"यह बैल कीमती होगा। जरा चराई कराना। भाभी से कहना कि—"

उसी समय रमिया बछड़ा बाँधने लौट आई। बात सुनी, तो वह बीच में ही बोल पड़ी—"क्या बात है, रामलखा! भाभी को कैसे याद किया?"

रामलखा ने कहा—"भाभी! कह रहा हूँ कि तुम्हारा यह बछड़ा सुन्दर रहेगा।"

रमिया ने कहा—"मैं आधा दूध पिलाती हूँ। अपने बच्चे के समान इस बछड़े को पालती हूँ, मेहतो!"

मेहतो रामलखा ने जग्गू का वढ़ाया हुग्रा नारियल ले लिया। उसमें घूंट भरा। धुग्राँ छोड़कर वह वोला—"हाँ, भाभी, जानवर भी प्यार माँगता है।" ग्रौर तभी उसने प्रश्न किया—"कुछ ग्रौर भी सुना, भाभी! जनपत की लड़की पार्वती—"

रमिया ने तुरन्त ही, वात पकड़ ली ग्रौर वोली—"मेहतो, जसपत की नीयत ख़राव है। वह ग्रपनी लड़की की ज़िन्दगी ख़राव कर देनी चाहता है।"

रामलखा वोला—"भाभी, यह वड़ा भारी पाप है। लाला से मुक़दमा जीतने के लिए, वह इन्सानियत का भी मुँह काला कर रहा है।"

जग्गू ने कहा—"ग्रभी पता क्या है! इस गाँव में तो झूठी वात को भी उड़ाया जाता है। दूसरे की पगड़ी उछालना सभी को भला लगता है।"

ग्राँख फाड़कर रमिया ने झट से कहा—"वाह, झूठ कैसे! कल की तो वात है कि हरभजन के खेत पर ख़ुद पार्वती कहती थी कि उसका वाप—"

जग्गू ने जल्दी से कहा—"दूसरों की वात को नहीं पकड़ा करते री, रमिया! वात लड़की ने कही, पर नाम यह होगा कि तूने कही।"

रामलखा ने कहा—"मेहतो, यह वात तो ग्रादमियों में भी ग्रा गई है। मैंने चौपाल पर सुना है कि जसपत मेहतो लड़की की ससुरालवालों से रुपया चाहता है।" वह वोला—"भैया, पाप की वात घर में भी हो, तो दीवारें सुनती हैं। वे चिल्ला कर सभी को सुना देती हैं। सात तालों को तोड़कर वाहर ग्राती हैं। हमारे वुज़ुर्गों की वात झूठी नहीं कि न पुण्य छिपता है, न पाप··· वह ग्रन्धेरे में भी चीखता है, शोर मचाता है।"

जग्गू ने सांस भरी ग्रौर काले हो ग्राये ग्रासमान की ग्रोर देखा। उसी समय लाठी की खुट-खुट करता हुग्रा रलियाराम उधर ग्रा निकला। उसकी निगाह पहले रमिया पर पड़ी। वह वोला—"भाभी, तेरी गाय के लिए ग्राज वड़ी ग्रच्छी घास देखकर ग्राया हूँ। मेरे पैरों में लगी धूल देखती है न, मैं दूर से ग्रा रहा हूँ।"

रमिया ने कहा—"चल-चल झूठा कहीं का! ग्रभी शाम को तो तू कुएँ पर खड़ा था। पार्वती से वातें कर रहा था।"

रलिया ने तुरन्त कहा—"हाँ, भाभी, मैंने पानी पिया था। तभी चला गया था।"

रमिया वोली—"तू वड़ा मक्कार है। रोज़ शाम को कुएँ पर जाता है। उसी समय तुझे प्यास लगती है। वता तो, भला वनाना क्या तुझे ग्रच्छा लगता है! ग्रौर जानता नहीं कि पनघट पर गाँव की वहू, वेटी—"

उसी समय रामलखा हँसा—"क्यों रे, रलियाराम !"

रलिया ने जल्दी से कहा—"नहीं, भैया ! भाभी तो मज़ाक करती है। मुझे क्या कभी भला कहती है ? इसकी यह आदत पड़ गई है।"

सुना, तो रामलखा ज़ोर से हँस पड़ा। स्वयं रमिया भी हँस पड़ी—"हाँ, मेरी तो आदत पड़ गई है ! अरे, कलमुँहे यह क्यों नहीं कहता कि तुझे भी जवान लड़कियों से बात करने की आदत पड़ गई है। तुझे पनघट ही ऐसी जगह मिली है !"

रलिया जैसे निरुत्तर बन गया। तभी जग्गू ने कहा—"न, रलियाराम ! यह अच्छा नहीं है। भले आदमियों का काम नहीं। ले, पीयेगा नारियल ?"

रलिया ने नारियल ले लिया और उसमें से धुआँ निकाल कर वह उसे छोड़कर बोला—"सच, भाभी ! पूरब की ओर बम्बे के किनारे बड़ी अच्छी घास खड़ी है। उस पर किसी घसियारे की निगाह भी नहीं पड़ी। कल सुबह जाना और खोद लाना। मेरे पास खुरपा होता, तो तेरी इस चम्पा के लिए घास ले आता।" रमिया की गाय का नाम चम्पा था।

रमिया ने कहा—"झूठा कहीं का ! आज तक तू कभी घास लाया है, इस चम्पा के लिए !"

रलिया ने कहा—"अब के जाड़ों में ईख के अगोले ला दिया करूँगा। देख लेना, तेरी चम्पा का मुँह फेर दूँगा।"

तभी रमिया ने उस प्रसंग को छोड़ कर रलिया से कहा—"क्यों रे, सुनती हूँ कि तू फिर भंग पीने लगा है। खेत देखना फिर बन्द कर दिया क्या ! तेरी माँ कहती थी कि जब देखो, तब लाला धनपत के यहाँ चिलम का धुआँ उड़ाता है। आजकल उसी के दायें-बायें चक्कर काटता फिरता है।"

रलिया ने कहा—"भाभी, देखती तो है, अब पानी बरसा है। धरती गीली हुई है। मैं भी किसी के बैल लेकर ज़मीन बो दूँगा। लाला के यहाँ बैठना भी लाभकर है। कुछ मेरा फ़ायदा है, कुछ वह अपना फ़ायदा सोचता है।" इतना कह कर वह हँसा और बोला—"भाभी, लाला धनपतराय गाँव-भर का खून चूसता है। उस खून में से कुछ मैं भी पा जाऊँ, तो क्या बुरा है। जानती तो है कि लोहे को लोहा काटता है···गरम लोहे पर ठण्डा लोहा काम करता है !"

गम्भीर स्वर में रामलखा ने कहा—"रलिया मेहतो, बात तो ठीक है तेरी। पर अपने भाइयों का बुरा सोचना क्या अच्छा है ? लाला इसी तरह तो अपना काम बनाता है। गरीब से मालदार बन गया है। वह तुम जैसे आदमियों के सामने थोड़ा-सा चुग्गा डालता है और अपना काम निकाल लेता है।"

रलिया ने वात सुनी, तो वह एकाएक बोल नहीं सका। वह लाठी के कुन्दे को चबूतरे में मारने लगा। जैसे वह रामलखा की वात पर टिक गया। मानो उस वात ने उसके दिमाग़ में आघात पहुँचाया।

रामलखा ने फिर कहा—"हमें अपना संगठन रखना चाहिए। लाला से होशियार रहना चाहिए। वह जोंक है। इन्सान का खून पीता है और मोटा होता है।"

रलियाराम उस समय भंग पिये हुए था। उसका गला सूख रहा था। फिर भी, जव उसने रामलखा की वात सुनी, तो अपेक्षाकृत गम्भीर वन गया। वह उसी अवस्था में वोला—"मेहतो, मैं तुम्हारी वात मानता हूँ; समझता हूँ।"

जग्गू ने कहा—"फिर भी तू नहीं सोचता। आये दिन लाला की गवाही देता है। उसकी ओर से किसी से भी लड़ पड़ता है।"

रमिया ने कहा—"कोई ऐसा मिलेगा कि वस...न वाँस रहेगा, न वाँसुरी! तुझे चारपाई पर डाल देगा। हाथ-पैर तोड़ कर रख देगा, समझे!"

जग्गू ने कहा—"वचकर काम करो, रलियाराम! अपना मतलव निकालो, घर सम्भालो।"

रामलखा ने कहा—"यह रलिया समझता सव-कुछ है, पर वहक जाता है। लाला ने कचहरी में जाकर जहाँ कलाकन्द, वरफ़ी और पूरियाँ खिलाईं, कि वस, यह गाँव के नाते-रिश्ते भी दिमाग़ से निकाल देता है। समीप का सम्वन्ध तोड़ता है, दूर का जोड़ता है!" वह वोला—"इस देश में जो विदेशी आये उन्होंने भी यही किया। चुग्गा डाला और अपना काम निकाला। मनुष्य की विवशता का लाभ भला कौन नहीं उठाता! लाला भी यही करता है।"

रलिया ने कहा—"न, मेहतो! ऐसा नहीं!" वह वोला—"पर लोग भी नहीं मानते। मैं जव किसी का कुछ विगाड़ता नहीं, तो लोग मुझे क्यों वदमाश और निकम्मा समझते हैं। यही देखो न, मेहतो जसपत..."

"अरे, उसकी वात छोड़, रलियाराम!" जग्गू ने कहा, "उसका तो दिमाग़ विगड़ रहा है। उसमें स्वार्थ घुस रहा है। उसकी आत्मा का इन्सान मर रहा है और उसमें दानव पैदा हो रहा है।"

रलिया ने कहा—"भैया, वह अपनी लड़की की ज़िन्दगी भी वरवाद करनी चाहता है। कोहरे के धुएँ की तरह स्वार्थ उसके चारों ओर फैल गया है। वह अन्धा वन गया है। जो वाप अपनी वेटी को वेचे और उसकी जिन्दगी विगाड़े, उसे क्या आदमी कहा जा सकता है!"

रमिया ने कहा—"वह किसी की वात नहीं मानता। रास्ता नहीं देखता।

उसे बुरे दिनों ने घेर रखा है।"

रलिया बोला—"मैंने उससे कहा था कि मैं तेरा साथ दूंगा। लाला से समझौता करा दूंगा। पर वह तो एक ही है अपनी ज़िद् का—अपने को लाट साहब समझता है! और मैं कहता हूँ, लाला मुकदमा जीतेगा। उसका खेत और घर अपने कब्ज़े में कर लेगा।"

रमिया ने कहा—"अरे, उसकी औरत बीमार है। लड़की भी परेशान है।"

रलिया ने कहा—"जसपत अपनी लड़की के ज़ेवर गिरवी रख आया है। वही रुपये वकील की जेब में डाल चुका है।"

जग्गू ने कहा—"राम-राम! बड़ा बुरा कर रहा है, जसपत। पाप कमा रहा है।"

रलिया ने कहा—"जसपत अपने को बरबाद कर रहा है।"

उसी समय कोई आता दिखाई दिया, तो तुरन्त जग्गू ने बात बदल दी और कहा—"तो रलिया, तू अपने खेत में क्या बोयेगा? गेहूँ?"

रलिया ने कहा—"हाँ, दादा! गेहूँ डाल दूंगा।"

"और बैल?"

"लाला धनपत ने कह दिया है।"

जग्ग हँस दिया—"वाह, पट्ठे! तेरा काम चौकस है। हल्दी लगे न फिटकरी, रंग चोखा आता है।"

रलिया ने लाठी उठा ली और हँस दिया। वह वहाँ से चल दिया।

रामलखा ने कहा—"ऐसी ज़िन्दगी ठीक है। जोरू न जाँता, अल्ला-मियां से नाता!"

रमिया ने तुरन्त ही नाक सिकोड़ कर कहा—"क्या खाक ठीक है! पूरा गुण्डा बना है। रोज पनघट पर जाकर गाँव की बहू-बेटियों से हँसी-मज़ाक करता है। इस गाँव का दीन-ईमान नहीं रहा, नहीं तो कोई इसकी गर्दन तोड़ देता! ऐसे ही लोगों ने गाँव को बेशर्मी का अड्डा बना रखा है।"

रामलखा ने कहा—"लड़कियाँ भी अपनी आदत की एक ही हैं, भाभी! ज़माना बदल गया है। पुरुष के समान, नारी ने भी अपनी चिर-परम्परा को छोड़ देना पसन्द किया है। नारी का स्थान अब घर ही नहीं रहा, बाहर भी हो गया है। ज़माना बदला है, तो उसके साथ, इस इन्सानी समाज का रंग-ढंग भी बदल गया है।" वह बोला—"पर तुम इसे ग़लत दृष्टि से मत आँको। शहर में जाकर देखो कि पढ़ी-लिखी लड़कियों ने सभी क्षेत्रों में अपने को सामर्थ्यवान् सिद्ध किया है।"

रमिया ने कहा—"अरे, खाक पड़े इस ज़माने पर ! कलियुग आ गया है। बेशर्मी का राज्य चारों ओर फैल चुका है।"

विषाक्त भाव, से रामलखा मुस्करा दिया और वहाँ से चल दिया। जब वह चला गया, तो रमिया ने जग्गू को सुनाया कि इस रामलखा की बहू अपने पीहर से आई तो इतना सामान लाई कि पास-पड़ौस में किसी के घर नहीं आया। बहू मेहनती है। रूप की भी अच्छी है।

जग्गू हँस दिया—"तुझे यही सब सूझता है। चल घर में, दिया जला। गाय को भी चारा डाल।"

किन्तु रमिया के मन में वही बात थी, बोली—"यह रामलखा भी अच्छा है। भला है।"

जग्गू ने कहा—"शहर में रह चुका है। शऊर सीख आया है।"

तभी रमिया ने जग्गू को घूरा। उसने तुरन्त कहा—"तो इसी से तुम्हारा भी शहर जाने को मन करता है। तुमने भी सींग कटा कर बछड़ों में नाम लिखाना सोचा है।"

जग्गू हँस दिया—"तो क्या मैं बूढ़ा हो गया !"

रमिया ने ताने के भाव में कहा—"नहीं जी, तुम तो पूरे जवान हो ! या कहूँ कि अभी निरे दूध-पीते बच्चे !"

जग्गू ने रमिया की ओर देखा और खिलखिला कर हँस दिया।

तभी रामदेई नाम की बुढ़िया बड़बड़ाती हुई उधर निकल आई। रमिया ने कहा—"अरी क्या हुआ, अम्मा !"

रामदेई ने कहा—"हुआ मेरा सिर ! लाज-शरम तो अब रह नहीं गई। वह थी न जगदेवा की पोती, जैसे उसी को जवानी चढ़ी है। बीच गलियारे में खड़ी खिलखिला रही थी और···हे राम ! अब तो फूट गये भाग्य इस गाँव के !"

जग्गू ने कहा—"चाची, जवानी की उमर में हँसी आती है। बुढ़ापे में रोना।"

बात सुनी, तो चाची ने आँखें फाड़ दीं। जग्गू की ओर देखा। उसने तपाक से कहा—"जवानी हमको भी चढ़ी थी। पर क्या मजाल कि किसी ने कभी हँसते देखा हो। इस गाँव में दस साल की आ गई थी। किसी ने मुँह भी खुला नहीं देखा। पर अब···हाय, रे !"

जग्गू ने कहा—"अब ज़माना बदल गया है, चाची !"

रमिया ने कहा—"हरदेव की पोती भी उछल कर चलती है। लड़कों से हँसी-ठट्ठा करती है।"

रामदेई ने रमिया की ओर देखा। उसने तुरन्त कहा—"अरी, वही तो! अभी मैंने देखी गलियारे में कि मलखान के लड़के से हँस-हँस कर बातें कर रही थी। और यह भी कैसी बात कि मैं पास से निकली, तो यह भी नहीं सोचा कि कोई आई है, तो चुप हो जाय...खाक पड़े ऐसी जवानी पर! सचमुच, अब बहू-बेटियों के लिए यह गाँव रहने की जगह नहीं रही। अब किसी का भरोसा नहीं रहा। अपने-पराये में भी भेद नहीं।" यह कहती हुई रामदेई आगे बढ़ गई।

जग्गू ने कहा—"अगर हरदेवा की लड़की सुने, तो इस बुढ़िया के पीछे पड़ जायगी। मलखान भी बुरा मानेगा कि मेरी लड़की को..."

रमिया ने तुरन्त कहा—"बुरा माने, तो माने! सच बात तो कही जायगी। ऐसे क्या आँखों पर ठीकरी रखी जायेगी!"

जग्गू खड़ा हो गया। वह घर के अन्दर जाता हुआ बोला—"अब समय फेर खा चुका है। किसी को सीख देना मानो गले में फाँसी लगा लेना है, रमिया! भले आदमी के लिए यही अच्छा है कि चुप रहे। कुछ देखे तो आँखें फेर ले।"

रमिया ने कहा—"जो करे, वह डरे! हमें क्या! बात सामने आयेगी, तो कही जायेगी। किसी का उधार नहीं खाया है।"

जग्गू ने बात सुनी, तो उसने एक अजीब प्रकार की सहमी दृष्टि से रमिया की ओर देखा। वह निढाल बनकर चारपाई पर पड़ गया। आसमान की ओर देखने लगा।

चौथी बात

कई दिन हो गये थे कि जसपत मेहतो लड़की की ससुराल से आये हुए उसके श्वसुर को चकमा दे रहा था। वह लड़की को विदा नहीं कर रहा था। उस दिन की रात का पहला प्रहर वीत गया था, रमिया अभी सोई नहीं थी। उसी समय पार्वती वहाँ आई। जग्गू देर से अपनी चारपाई पर चुपचाप पड़ा था। शायद सो गया था।

पार्वती को देखते ही, रमिया ने कहा—"अरी तू! आ, वैठ जा! सुना है तेरा श्वसुर चला गया!"

पार्वती वोली—"अभी है।" तभी उसने वताया—"आज तो काफ़ी झगड़ा हुआ, चाची!" पार्वती ने कहा—"मैं सोच नहीं पाती कि क्या करूँ! इधर देखूँ तो खाई, उधर देखूँ तो कुआँ!"

रमिया ने कहा—"तू तो पगली है! वाप से कह दे, अव मैं जाऊँगी, यहाँ नहीं रहूँगी।"

पार्वती ने जैसे असहाय वनकर कहा—"मेरे लिए इतना कहना भी आसान नहीं है, चाची! वापू से डर लगता है। वह तो वात करते भी गुर्राता है। मारने को दौड़ता है!"

वात सुनी, तो रमिया क्षण भर मौन वनी रही। एकाएक वह अपना मत नहीं दे सकी।

पार्वती ने कहा—"गाँव के लोग भी तो आँखों पर ठीकरी रखे हुए हैं, चाची! कोई भी कुछ नहीं कहता! न्याय नहीं करता!"

तभी रमिया कडुवे ढंग से मुस्करा दी। वह वोली—"कौन दुश्मनी मोल ले! तेरा वाप तो लड़ता है!" यह कहते हुए उसने साँस भरी—"अव न्याय की वात कौन कहता है, विटिया! देखती नहीं, पाप वढ़ रहा है। आदमी, आदमीयत से गिर रहा है!"

पार्वती वोली—"सुना न तुमने, कल चौपाल पर वात चली थी। मेरे श्वसुर ने जव अपनी वात कही, तो कोई भी इतना नहीं कह सका कि हाँ, उसके साथ

अच्छा व्यवहार नहीं हुआ।" यह कहते हुए पार्वती ने लंबी सांस भरी और उसे छोड़कर कहा—"अब तू बता न चाची, मैं क्या करूँ! क्या भाग जाऊँ? कुएं-पोखर में जा गिरूँ?"

इतना सुनते ही, रमिया ने उसकी ओर देखा। जैसे उसने पार्वती के मन का कोलाहल समझना चाहा। तभी उसने कहा—"तू सभी-कुछ कर सकती है, पार्वती! अपने घर भी जा सकती है। जब तेरा बाप ऐसा कर रहा है, तो तू भी अपना भला-बुरा देखने-समझने का अधिकार रखती है।"

उसी समय जग्गू ने करवट बदली और कहा—"भगवान के नाम पर ऐसी सीख न दे, रमिया! दूसरों का झगड़ा अपने ऊपर लेगी, क्या! जसपत सुनेगा, तो आग हो जायेगा। समझती तो है कि जब आदमी की बुद्धि पर पर्दा पड़ता है, तो अपना नाश करने के साथ, दूसरे का भी कर देता है! इन्सान से पशु बन जाता है।"

तपाक से रमिया बोली—"तुम उससे डरो, मैं नहीं डरूँगी। मैं तो बुरे को बुरा कहूँगी! मैं औरत हूँ, झूठ को सत्य नहीं कहूँगी···पाप को पुण्य नहीं······"

खिसियाकर जग्गू ने कहा—"बस, तू मेरी जान लेकर रहेगी और कुछ नहीं करेगी!"

पार्वती बोली—"चाचा, तुम क्यों डरते हो। बात मेरी है। जान मेरी जानी है।"

जग्गू ने कहा—"बेटी, यह गाँव बहुत बुरा है! अपना बोझ झट से दूसरे के कन्धों पर डालता है। देखती तो है कि आज घर-घर आग सुलग रही है। सभी बेईमान बन गये हैं। भेड़िया हो गये हैं, सब लोग!"

चिढ़कर रमिया बोली—"तभी तो गाँव की यह हालत है! दाने-दाने को मोहताज है। अब तक मैं कुत्तों को लड़ता देखती थी, पर अब इन आदमियों को परस्पर लड़ते देखकर सोचती हूँ कि जानवर आदमी में अन्तर ही क्या रह गया है!"

पार्वती बोली—"चाची, बापू ने बात नहीं मानी, तो सच, मैं कुएँ में गिर पड़ूँगी। मैं अब दूसरे के घर नहीं जाऊँगी। एक की बनी, तो उसी की बनी रहूँगी।"

रमिया ने कहा—"हाँ, पार्वती, भली लड़कियों का यही काम है। औरत को यही सुहाता है। दर-दर झाँकना क्या शोभता है?"

तभी पार्वती ने बताया कि उसका श्वसुर कल चला जायेगा। उसने चौपाल पर यही कहा है कि वह इस गाँव में अकेला है। जो लोग अपना मुंह सिये बैठे

हैं, उन्हें अदालत में बुलायेगा। मेरे बापू पर मुकदमा करेगा।" उसने कहा— "चाची, मैं भाग भी जाऊँ। उस गाँव में पहुँच भी जाऊँ। पर मेरा ज़ेवर तो बापू ने गिरवी रखा है। धोखे से मुझसे माँगा था। मुझे क्या पता था। सोचती हूँ, चली भी जाऊँ तो वह कैसे मिलेगा!"

रमिया ने कहा—"अब वह नहीं मिलेगा। जहाँ गया है, वहाँ से नहीं लौटेगा।"

जग्गू ने फिर रमिया की बात पर आपत्ति की। उसे यह अच्छा नहीं लगा कि रमिया ऐसी बात कहे कि जिससे पार्वती के मन में अपने माँ-बाप के प्रति रोष पैदा हो। वह अपने घर जाकर कुछ कहे, बताये कि रमिया चाची ने उससे ऐसा कहा है। इसीलिए उसने फिर कहा—"रमिया, सोच-समझ कर बोल। भला ज़ेवर क्यों न आयेगा। जसपत के हाथ में रुपया होगा तो ले आयेगा।"

किन्तु रमिया ने अपनी बात में लाग-लपेट नहीं रखी। उसने तीर के समान फिर बात को सीधी करके कहा—"जी, ले आया, ज़ेवर! बेटी को बेचने वाला इतना ईमानदार नहीं होता। है उसकी इतनी हिम्मत, जो रुपया दे आयेगा। कहाँ से लायेगा। जो आज बेटी को ठगता है, कल वह ज़माने भर को ठगेगा। देखना, वह खुद ठगा जायेगा···रोटी का मोहताज बनेगा······!"

इतना सुनना था कि जग्गू आँख फाड़ कर रमिया को देखने लगा। वह एकाएक सोच नहीं सका कि यह रमिया—उसकी औरत—कितनी भारी बात सहज में कह गई है। यह तो बैठे-बिठाये तकरार मोल लेना चाहती है। पार्वती के मुँह पर ही, उसके बाप को बेईमान कह रही है।

लेकिन रमिया ने जग्गू को जब अपनी ओर घूरता पाया तो वह फिर आगे बढ़ी। जैसे बन्दूक में अभी गोली शेष थी, वह उसे भी छोड़ बैठी। उसने अपने स्वर पर ज़ोर देकर कहा—"जसपत इस पार्वती की मिट्टी खराब कर देगा! मैं कहे देती हूँ कि इस लड़की को न यहाँ की छोड़ेगा, न वहाँ की! बरबाद कर देगा, इस बेचारी की ज़िन्दगी को!"

सुना, तो जग्गू चीख पड़ा—"तेरा दिमाग़ फिर गया है, रमिया! बैठी-बैठी बकवास किये जाती है। पराये घर में आग लगा रही है।"

किन्तु इतना सुनना भी रमिया को भला नहीं लगा। उसका स्वभाव उग्र था, उसने तुरन्त ही तमक कर कहा—"हाँ, झूठ नहीं कहती। इस गाँव में चोर बसते हैं। बेईमानी की रोटी खाते हैं, सब लोग!"

"ओहो! बड़े कहीं के नवाब साहब की शाहज़ादी है न तू, बात बनाती

है। चुप नहीं रहती !" जग्गू ने लाल बनकर कहा।

परन्तु रमिया के लिए वह बड़ी चोट थी। उसे अपने बाप पर अभिमान था। वह अनेक बार कह चुकी थी कि मेरा बाप ग़रीब ज़रूर रहा, पर बेईमान नहीं बना। रमिया ने उस अवसर से पूर्व, जग्गू को यह भी बताया था कि यदि उसका बाप चाहता, तो उसके ब्याह पर हज़ार-पाँच सौ ले लेता। पर वह तो बेटी का सौदा करना पाप मानता था। इसलिए रमिया को अपने बाप के प्रति कुछ भी सुनना, कदापि अभीष्ट नहीं था। लेकिन जब जग्गू ने अपनी पुरानी बात को उस समय भी दोहराया, तो रमिया का पारा एकाएक ही ऊपर चढ़ गया। उसने अपने स्वर में तीव्रता लाकर कहा—"मेरा बाप जैसा था, वैसा तुम्हारे गाँव में एक भी न मिलेगा। हाँ, कहे देती हूँ, गड़े मुर्दे न उखाड़ना! भला हो मेरे बाप का कि जो तुम्हारे घर में दीया जलाने के लिए मुझे भेज दिया।"

जग्गू ने इतना सुना, तो बरबस हँस पड़ा। पार्वती को भी हँसी आ गई। बात दब गई। किन्तु रमिया के मस्तिष्क का सन्तुलन खो गया। तभी पार्वती उठ चली। वह रमिया से कहती गई—"अच्छा, चाची! अब मैं स्वयं ही अपना रास्ता देखूँगी। मैंने समझ लिया कि जिस बाप ने मुझे पाल-पोस कर बड़ा किया, अब वह भी मेरा दुश्मन बन गया है। उसे पैसा चाहिए। बेटी नहीं चाहिए······बेटी की ममता नहीं···इन्सानियत भी नहीं······!"

रमिया गुस्से में थी। वह उठी और अपनी चारपाई पर पड़ गई। पार्वती चली गई।

तभी जग्गू ने कहा—"रमिया, तू जानती तो है कि यह लड़की भी साँप की मौसी है। आज बाप के खिलाफ़ है, तो तेरे पास आती है। पर जब कल को बाप इसके ज़ेवर लाकर दे देगा, तो यह सभी बातें अपने माँ-बाप से कह देगी, झगड़ा करायेगी। और देखती है, हम ग़रीब हैं। इस वक्त हाथ तंग है। शरीर भी कमज़ोर है, फूंक-फूंक कर पैर रखना पड़ रहा है। इस गाँव के चप्पे-चप्पे पर आग के अंगारे फैले पड़े हैं। लोग अपने पुरखों की रीति-नीति भूल चुके हैं। हाड़-माँस के पुतले अंगारे बन गये हैं!"

रमिया मौन थी, वह ऊपर की तरफ़ मुंह किये आसमान के तारे देख रही थी। उसके मन में इस बात का क्रोध था कि उसके बाप पर क्यों ताना कसा गया। उसका बाप ग़रीब था तो क्या; इसीलिए उसका उपहास किया गया! किन्तु जब जग्गू ने अपनी बात के उत्तर में रमिया की ओर से कोई विरोध नहीं पाया, तो वह भी कुछ नहीं बोला। कुछ देर में सो गया।

जब प्रातः हुआ, तो जग्गू और रमिया ने गाँव की जो पहली बात सुनी वह यह कि जसपत ने अपने समधी को अपमानित करके भगा दिया। उससे साफ़ कह दिया कि वह लड़की को नहीं भेजेगा। उसका दूसरी जगह विवाह करेगा। अभी पति-पत्नी में, उस नई बात पर कोई टीका-टिप्पणी भी न हो पाई थी कि तभी रलिया द्वार पर आकर बोला—"अरी, भाभी,···ओ···"

रमिया ने अन्दर से कहा—"अरे, क्या है, रलियाराम !"

रलियाराम अन्दर आ गया। वह जग्गू के पास बैठता हुआ बोला—"सुन लिया भाभी, इन बड़ी मूँछ रखने वालों का कारनामा !"

जग्गू नारियल पी रहा था। उसे रलिया की ओर बढ़ा दिया। उसने स्वयं ही, जल्दी से कहा—"हमें क्या भैया ! जो जैसा करेगा, वैसा भरेगा !"

रलिया ने कहा—"न, भैया ! पाप तो पाप है, यह कहते क्या कोई रुकेगा। मैं भी कहूँगा, तुम्हें भी कहना पड़ेगा।"

रमिया ने ताने के भाव में कहा—"न, ऐसा मत कहो ! गाँव में रह कर भी, न गाँव की बात कहो, न सुनो। देखते नहीं, कोई खा जायेगा ! सिर पर आ चढ़ेगा !"

बात सुनी, तो रलिया ठहाका मार कर हँस दिया। उसने जग्गू को नारियल लौटाते हुए कहा—"तो यह तीर किस पर छोड़ा गया है, भाभी ! भैया जग्गू पर !" वह बोला—"मैं समझा ! मियाँ-बीबी में झगड़ा चला होगा। भैया ने भूल से कोई बात कह दी होगी। और भाभी, तू उसे एक कान से सुनकर दूसरे से न निकाल पाई होगी।"

रमिया ने कहा—"इनकी एक बात हो, तो सुनूँ, और टाल दूँ। जब देखो तब, ऐसी बात कहते हैं कि जो न धरी जाती है, न उठाई जाती है। यह बीमारी और बुढ़ापा क्या आया, जैसे उसने मन और आत्मा को भी दुर्बल बना दिया। अब तो यह भी भुला दिया कि इस शरीर में कोई भावना है······भगवान है··· उस पर भरोसा करना सभी को सोहाता है।"

रलिया ने कहा—"वह मेहतो गाँव से चला तो गया, पर जसपत का मुँह काला कर गया !" वह बोला—"मैं अपने खेत में पानी काट रहा था। उसे देखा, तो समझ गया कि बेचारा मेहतो खाली हाथ लौट रहा है। मैं भी उसकी तरफ़ बढ़ा। पास जाकर राम-राम की और पूछा—"कहो, मेहतो ! कुछ काम बना ?" —तो वह छूटते ही बोला—"यह गाँव कमीना है ! डाकुओं से भरा है ! सच, भाभी !"—रलिया ने रमिया को लक्ष्य करके कहा—"उस समय मेरे मन में तो आया कि खूब हँसूँ, पर मैं चुप ही रहा। तभी उसने बताया कि मैं इस

जसपत को मज़ा चखा दूँगा। इस धरती पर नहीं चलने दूँगा।"

रमिया ने कहा—"बेचारी पार्वती—"

रलिया बोला—"भाभी, मैंने उस मेहतो से कहा कि लड़की का तो कोई कसूर नहीं। पर वह तो इतना सुनकर ही आग-बबूला हो गया। बोला—"वह भी हरामज़ादी है! मैंने अब समझा कि वह क्यों अपने सभी ज़ेवर धारण करके आई। वह मेरा घर ख़ाली कर आई है।"

उसी समय, जैसे जग्गू की बन आई। उसने तुरन्त कहा—"सुना री, रमिया! तू रात बड़ी पट्टी पढ़ा रही थी, उस पार्वती को! मैं कहता हूँ कि यह सब मिली-भगत का मामला है। हमारा चुप ही रहना अच्छा है।"

रमिया ने इतनी बात सुनी, तो जैसे बरबस ही, अपना कसूर मान लिया। उसने कुछ नहीं कहा।

किन्तु रलिया बोला—"न, भैया! मैं लड़की का कसूर नहीं मानता।"

"अबे, चुप भी रह, रलिया के बच्चे! मैं तुझको भी जानता हूँ। तू भी पक्का शैतान है! तू भी अपनी साख बनाना चाहता है···इधर जसपत, उधर पारो—पार्वती—हाँ, पूरा मक्कार है रे, तू!"

रलिया बात के बीच में ही इतने ज़ोर से हँसा कि उसने न तो जग्गू की बात को स्वयं पूरा सुना, न रमिया को सुनने दिया। परन्तु जग्गू क्या कह रहा था, यह दोनों ने समझ लिया।

तभी रमिया ने कहा—"हाँ, रे शैतान! देख, तू भला न बना, तो बुरा तेरा भी होगा!"

रलिया ने कहा—"भाभी, तेरी सौगन्ध है। मेरा किसी से मतलब नहीं।"

रमिया ने कहा—"देख, पार्वती गाँव की बेटी है। गाँव की लाज है। सभी की तरह तुझे भी उसकी इज़्ज़त करनी चाहिए।"

रलिया बोला—"हाँ, भाभी! मैं मानता हूँ। मैं उसका आदर करता हूँ।"

बात सुनी, तो जग्गू ने उसकी ओर घूरा। उसने सन्देहात्मक ढंग से कहा—"झूठा कहीं का!"

रलिया बोला—"भैया, बद अच्छा, बदनाम बुरा! तुमने तो मुझे आवारा समझ रखा है, ना!"

जग्गू ने कहा—"तेरे कारनामों से!"

रलिया ने कहा—"जग्गू भैया! आज बताता हूँ, मैं पार्वती की मदद करूँगा। भाभी, मैं तुझसे भी मदद लूँगा। मैं यह अन्याय न होने दूँगा।"

रमिया ने कहा—"भले काम में कौन न हाथ बँटायेगा।"

तभी रलिया ने साँस भरी और कहा—"किसी से कहना नहीं, मैं कल पार्वती को उसकी ससुराल पहुँचा दूँगा। वह अभी मुझे पनघट पर मिली थी। यही बात उसने कही। मैंने मान लिया। सच, बात कहते वह रो पड़ी। मुझे लगा कि जैसे उसकी ज़िन्दगी छीन ली गई। बाप ने ही उसके पेट में छुरी भोंक दी।"

सहमे भाव से जग्गू ने कहा—"तू जसपत से दुश्मनी मोल लेगा!"

इतना सुना, तो रलिया लाल बन गया। वह तुरन्त बोला—"भैया! मेरा कौन रोने वाला बैठा है। एक माँ है, वह भी आज मरी तो, कल मरी तो!" उसने कहा—"जसपत ने मुझसे कुछ कहा, तो मैं इसी लाठी से उसका सिर फोड़ दूँगा। धनपत लाला मुझसे जसपत के खिलाफ़ गवाही देने की बात कह चुका है। पर मैंने स्वीकार नहीं किया। सोचा, पड़ौस का आदमी है। जाति-भाई है। मर जायेगा।

जग्गू की चिलम का तमाखू जल चुका था। उसने चिलम उतारी और रमिया की ओर बढ़ाकर कहा—"और रख दे तमाखू। यह जल गया।"

रमिया ने कहा—"जलेगा नहीं, इतना तो पी लिया।" पर उसने चिलम ले ली। दुबारा भरने लगी।

रलिया ने कहा—"भाभी! लड़ती तो है, पर भैया की सेवा भी खूब करती है।"

रमिया ने बात सुन ली, तो उसकी ओर देखा।

जग्गू ने कहा—"लड़ कर सभी करे-धरे पर पानी फेर देती है।"

रमिया ने कहा—"नहीं तो बख्श दोगे न, मेरे लिए जागीर! कोई और आती, तो बताती! एक मैं हूँ कि जो तुम्हारे सभी नखरे बरदाश्त कर लेती हूँ।"

उसी समय रलिया को बात याद आई और वह बोला—"हाँ, जग्गू भैया, तुम्हें भी लाला धनपतराय का कुछ देना है, क्या?"

जग्गू ने कहा—"हाँ, देना तो है! क्यों, कुछ कहता था, क्या?"

रलिया ने कहा—"वह जसपत के खिलाफ़ गवाही चाहता है। तुमसे भी कहेगा। कभी आयेगा, या बुलायेगा।"

रमिया चिलम भर कर ले आई। वह बात सुनकर बोली—"यहाँ आया, तो सिर फोड़ दूँगी। हम किसी की गवाही नहीं देंगे।"

जग्गू बोला—"इस बार उसके पैसे उतार देंगे। खेत में चार दाने हुए, तो निपटा देंगे।"

रलिया बोला—"लाला बड़ा जल्लाद है! पूरा सूद लेता है। जोंक की तरह

चिपट कर आदमी का खून चूसता है !"

रमिया ने कहा—"एक वार मुझे मिला था। मैंने फटकार दिया था।"

रलिया हँस पड़ा—"भाभी ! लाला तुझसे डरता है।"

किन्तु जग्गू उस समय मौन था। वह सोच रहा था, और इस वार खेत ने कुछ नहीं दिया, तो ! लाला का सूद भी चढ़ जायेगा। वह मुकदमा कर देगा, तो खेत······जग्गू काँप गया। उसी समय रलिया उठकर चला गया।

पाँचवीं बात

गाँव के किसान दुपहर की रोटी खाने के लिए घरों को लौट आये थे। कोई रोटी खाकर हुक्का पी रहा था और कोई पेड़ के नीचे चारपाई बिछाये हुए चादर ओढ़ कर सो गया था। किन्तु उसी समय चौपाल पर गाँव का ज़मींदार और पटवारी कुछ लोगों के साथ बैठे हुए थे। वहीं पर लाला धनपतराय था। तभी ज़मींदार जोधराम ने लाला की ओर देखा और प्रस्तुत वार्ता के विषय में उसका मत जानना चाहा। किन्तु लाला तब भी मौन था।

जोधराम ने कहा—"लाला जी, अब तो तुम गाँव में आधे के हिस्सेदार हो। जब मुनाफ़ा आधा पाते हो, तो गाँव की भलाई-बुराई के भी भागीदार बनो।"

लाला मुस्कराया—"मेहतो, मैं बनिया हूँ। कमज़ोर हूँ।"

ज़मींदार ने हँसकर कहा—"बनी के यार हो, बिगड़ी के नहीं!" यह कहते हुए जोधराम गम्भीर हो गया और बोला—"लाला, जानते तो हो कि इस गाँव में बहुत खराबी आ गई है। नया ज़माना आया है, तो पुरानी रीतियों को लोगों ने भुला दिया है। ज़हरीली दुर्गन्ध यहाँ भी उठ रही है।"

लाला ने कहा—"अब, यहाँ कोई सिरमौर नहीं रहा!"

उसी समय एक युवक ने कहा—"सिरमौर वैसे ही नहीं बना जाता, लाला जी! कुछ कष्ट उठाया जाता है; झुका जाता है। लोगों के साथ भाई-चारा निभाया जाता है। बोलो, तुमने क्या किया?"

लाला धनपतराय ने बात सुनी, तो उस युवक की ओर देखा। निश्चय ही, लाला को उसके कहने का ढंग अच्छा नहीं लगा। परन्तु उनकी एक यह भी विवशता थी कि उस युवक से अपने मन का रोष भी व्यक्त नहीं किया गया।

उसी समय पटवारी जगराम ने कहा—"यह सच है कि अब बड़े-छोटे का भाव मिट गया! गोद खिलाये लड़के भी सामना करने लगे हैं! ऊँच-नीच का ध्यान नहीं रहा। कुछ लोगों ने गाँव की व्यवस्था को मिटा दिया है। बताओ, अब इस झगड़े का कैसे निपटारा होगा?"

युवक का नाम हरदेवा था। वह गाँव के निकट कस्वे में स्थित कालेज का विद्यार्थी था। उसने पटवारी की वात सुनी, तो तुरन्त वोला—"पटवारी जी, वात तुमने भी साफ़ नहीं कही। जो कुछ है, वह सवके सामने है। मैं पूछता हूँ कि इस पाप के वीज को किसने वोया? वात साफ़ है, वुजुर्गों का पाप अव हम सभी को भोगना पड़ रहा है। ऐसी अवस्था में तो छोटे आदमी गाँव में नहीं रह सकेंगे। वे तुम्हारी सेवा भी करें और ऊपर से अपमानित भी वनें, यह कैसे सम्भव होगा! वोलो, अव क्या निभेगा?" उसने कहा—"तुम ठाकुर लोग चाहते हो कि छोटी कौम के आदमी तुम्हारी सेवा भी करें और अपमान का जहरीला घूँट भी पीते रहें! आँख खोलो, क्षितिज में प्रकाश की ज्योति फूट निकली है। अँधेरे में पड़ा और सिसकता हुआ समाज आज सजग हो उठा है। वह अपना अधिकार पाना चाहता है। छोटू डोम जाति का भले ही हो, परन्तु हमारे समान वह भी इन्सान है। मान-अपमान को समझता है। क्या आप सव इस वात से इन्कार करेंगे कि उसकी औरत का एक ठाकुर के द्वारा अपमान नहीं किया गया? आप सत्य पर पर्दा डालेंगे, तो याद रखिए, मानवता का आपके द्वारा खून किया जायेगा! आप पंच हैं। अपने अधिकार का दुरुपयोग न कीजिएगा।" यह कहते हुए हरदेवा का चेहरा लाल वन गया। उसके मन का रोष ऊपर छलछला आया।

उस समय चौपाल आदमियों से भरी थी। सभी जातियों के लोग वहाँ एकत्र थे। डोम जाति भी थी। छोटू डोम और उसकी पत्नी भी उपस्थित थे। हरदेवा ने जव वह छोटी-सी वक्तृता दी, तो सभी ओर वाह-वाह हो उठी। उसे साधुवाद दिया गया।

किन्तु पटवारी चतुर था। वह कानून की वात भी समझता था। जव उसने देखा कि हरदेवा ने वात वढ़ा दी, डोम जाति के साथ अन्य छोटी जाति वालों की भावना को वढ़ावा दे दिया, तो वह तुरन्त ही, पैंतरा काटकर फिर सामने आया और वोला—"हाँ, हाँ, यह ठीक है, हरदेवा भाई! तुम तो पढ़े-लिखे और समझदार हो। तुम्हारी तरह ये डोम भी समझते है कि किसी से कोई भूल हो जाय, तो उसे गोली से नहीं उड़ाया जा सकता, समझाया जा सकता है। तुम सव मन्जूर करो, तो उस पर जुरमाना भी डाला जा सकता है।"

हरदेवा ने कहा—"वाह, पटवारी जी! नाक काट दी और रूमाल से पोंछ दी। वड़ी कौम की किसी औरत के साथ ऐसा होता, तो जरूर, अव तक एक दो आदमियों का खून हो गया होता। पूरी फौजदारी हो जाती। पर ये डोम हैं न—मजदूर—दाने-दाने के मोहताज! तो इसलिए, मामले को छोड़ देना ही पसन्द

किया। मुझे लगता है कि तुमने सोचा है कि प्रस्तुत वार्ता पर पर्दा डाल दिया जाय। छोट्टू और उसकी औरत की आँखों में जो आँसू दिखते हैं, उन्हें इसी प्रकार पोंछ दिया जाय।"

जल्दी से, जैसे आतुर बनकर, जमींदार ने कहा—"मामला छोड़ा नहीं जा रहा, हरदेवा ! क्या बात थी, उसी को सुना और समझा जा रहा है। इसलिए तो सब आये हैं। अभी गाँव के और लोग भी आने वाले हैं। तुमने ठाकुर होकर भी डोम का पक्ष लिया, यह बड़ा अच्छा किया। समझदारी इसी का नाम है।"

तभी हरदेवा ने उस व्यक्ति की ओर देखा कि जो उस दोष का भागीदार था। वह भी ठाकुर था। वह यौवन के उतार पर था। कई वर्ष हुए कि उसकी पत्नी मर चुकी थी। वह विधुर था। उसी ने अपने खेत पर छोट्टू की जवान बहू का अपमान किया था। उसने अपने पक्ष का समर्थन करने के लिए रमिया का नाम लिया था। तभी रमिया वहाँ आई। उसे देख कर जमींदार ने पूछा—"जग्गू मेहतो की बहू, बता तो, क्या तूने देखा कि इस छोट्टू डोम की बहू को जीवन मेहतो ने छेड़ा था···खेत से मटर की फली तोड़ने पर अपमानित करना चाहा था ?"

रमिया ने बात सुनी, तो वह क्षण भर मौन रह गई। वह कभी सामने बैठे जीवन को देखती, कभी एक ओर बैठी छोट्टू की बहू को। सचमुच, उस समय रमिया के लिए कठिन प्रश्न बन गया था। वह स्वयं जाति की ठकुरानी थी, नसों में राजपूती खून था। और जीवन महतो भी ठाकुर था। किन्तु रमिया को लगा कि गाँव भर उसकी ओर देख रहा है। जैसे उसकी परीक्षा कर रहा है। इस प्रकार रमिया एकाएक नहीं समझ पाई कि वह ठाकुर का पक्ष ले, या डोम जाति का। पर उसका मन जैसे मचल रहा था। वह घुमड़-घुमड़ कर एक बात उससे बार-बार कह रहा था कि सत्य को छोड़ना पाप है·········अन्याय है ! तभी चौपाल के कोने से आवाज़ उठी। रमिया चौंकी ! उसने देखा कि डोमों का सरदार कल्लू अपनी बड़ी-बड़ी मूछ मरोड़ता हुआ कह रहा था—"ठकुराइन, चुप क्यों है, सत्य का डंका बजा दे। डोमों की आबरू तेरे चरणों पर पड़ी है।"

रमिया ने बात सुनी, तो वह हल्के भाव से मुसकरा दी। वह कुछ कहना चाहती थी कि तभी कल्लू डोम की लड़की, जो कस्बे में पढ़ती थी, अब यौवन की ड्योढ़ी पर चढ़ी थी, तीखे स्वर में बोली—"दादी, हम भी तेरे हैं, चुप न रह। हम भी तेरे कुछ लगते हैं।"

उस समय जग्गू देर से सिर झुकाये बैठा था। वह मन में कुढ़ रहा था कि

हाय, इस रमिया ने मेरी इज़्ज़त पर पानी फेर दिया। सचमुच, उस समय उसके मन में वार-वार आता था कि वह अवसर पाये, तो रमिया का सिर गंडासे से काट दे। उसे खत्म कर दे।

किन्तु उसी समय, जव जग्गू अपने मन में पत्नी के प्रति इतना कुपित था, आक्रोश से भरा था, तभी रमिया ने कल्लू डोम की लड़की माला की ओर देखा। वह सुहावनी और यौवनमयी वाला, सचमुच ही, उसे अच्छी लगी। वह पढ़ी-लिखी थी, सव तरह योग्य थी। अपनी वात भली प्रकार कह सकती थी। किन्तु उस समय, माला ने जिस विनय, तल्लीनता और शालीनता के साथ अपनी वात कही, वह सचमुच, रमिया के हृदय को छू गई। मानो उस वाला की वाणी का ओज और उसके कौमार्य का तेज रमिया की आत्मा को आलोकित करने में समर्थ वन गया। अतएव, उस रमिया की आत्मा से अपनी ठाकुर जाति की क्षुद्रता और क्रूरता का भाव ही प्रतिघोपित हुआ। वह कुछ कहना चाहती थी कि तभी ज़मींदार ने कहा—"जग्गू मेहतो की घरवाली कुछ नहीं कहना चाहती। यह चुप है। तव क्या किया जाय!"

कल्लू फिर खड़ा हुआ और वोला—"क्यों मालकिन, तुम पर हमारा कोई अधिकार नहीं रहा?"

उसकी लड़की माला वोली—"दादी, भगवान को न भूल! सत्य पर पर्दा न डाल।"

रमिया मुस्कराई। तभी उसकी दृष्टि छोटू डोम और उसकी पत्नी पर पड़ी। सच, उसकी पत्नी की आंखों में तव भी आंसू थे। जैसे वे पीड़ा से भरे थे। वे अपनी वाणी में उस समुदाय को—उस रमिया को—कुछ सुना रहे थे। इतना देख, रमिया का अन्तर कांप उठा। वरवस ही, उसके प्राणों में हाहा-कार गूंज गया।

किन्तु अवसर पाकर हरदेवा ने रमिया को टंकोरा—"हां, चाची, वता न! अपनी कौम का पक्ष न ले वैठना। यह नारी के सम्मान का भी सवाल है। जव न्याय किया जा रहा है, तो वह सच्चाई के तराज़ू पर तोला जाय।"

कल्लू ने कहा—"चाची, मैं भी तेरा वेटा हूं। यह माला तेरी पोती है। तेरा दरवाज़ा झांकते मेरी पीढ़ियां वीत गई हैं।" वह वोला—"मैं यदि छोटू को दोपी पाता, सच मान, खुद ही इसका गला घोंट देता। मैं छोटी कौम का हूं तो क्या, औरत का अपमान नहीं देख सकता। औरत मां है, औरत वहिन है।"

रमिया ने आहत वनकर कहा—"कल्लू, तू इतना क्यों कहता है। हां, तेरी माला भी मेरी कुछ लगती है, पोती है।"

किन्तु तभी अधीर भाव से जग्गू ने ऊँची आवाज़ में कहा—"यह तो अपना खेत देखने गई थी। भला इसे······"

विनीत भाव से हरदेवा ने कहा—"चाचा, न्याय करने दो। चाची को सत्य बोलने दो।"

जग्गू इतनी बात सुनकर लाल हो गया—"अरे, तो मैं वैर बाँध लूँ, विरादरी के साथ! बड़ा आया न्याय का अवतार! तू तो कालेज में पढ़ता है। दूसरी दुनिया में बसता है। मेरा तो यह गाँव है। सभी से साँठा-गाँठा है, हुक्का-पानी है।"

हरदेवा उपेक्षा भाव से हँस दिया—"तुम बहुत भोले हो, चाचा! चाची को भी अपने अधिकार का उपयोग करने दो।" उसने रमिया की ओर मुँह किया और बोला—"हाँ, चाची······"

उसी समय रमिया ने जग्गू की ओर देखा। जैसे उसे एक बार फिर समझना चाहा। क्योंकि वह गाँव की उस सभा में कायर बन रहा था। वह उसका पति था। तभी रमिया ने एकाएक कहा—"दोष जीवन मेहतो का है। यह औरत का सम्मान करना नहीं जानता। मैं न चिल्लाती, तो······"

कल्लू डोम ज़ोर से बोल पड़ा—"चाची, तुम्हारा भला हो।"

रमिया ने कहा—"जीवन मेहतो भला बने, यही मेरी इच्छा है।" उसने कल्लू की ओर देखा—"कल्लू! अपनी कौम के साथ तू भी माफ़ कर दे, इस जीवनराम को। छोटू को समझा दे। वह भी गुस्सा थूक दे। जा घर।"

कल्लू खड़ा हो गया और बोला—"चाची, मैं तेरी बात मानूँगा। तूने भरे गाँव के सामने सत्य कहा, तो मैं भी तेरी बात के सामने सिर झुका दूँगा।" उसने अपनी कौम के सभी स्त्री-पुरुषों को घर चलने के लिए कहा।

किन्तु उसकी बिरादरी के जो और बहुत से लोग आये हुए थे, उनमें से कई युवकों ने चिल्लाया—"हम बदला लेंगे। इस जीवन को मार देंगे। हम इन ठाकुरों को बता देंगे कि आबरू हमारी भी है। हम डोम और ग़रीब हैं तो क्या; अपनी बहू-बेटियों की लाज रखना जानते हैं।"

लेकिन ठाकुर जाति के लोग अकेले जीवन मेहतो का अपमान सह सकते थे, परन्तु पूरी जाति का नहीं। इसलिए तुरन्त ही लाठियाँ उठ गईं। दूसरी ओर से भी ललकार उठी। बात बढ़ गई। ठाकुरों में से एक लड़का आगे बढ़ा और समने लाठी का भरा हाथ छोड़ा। परन्तु उसका वह हाथ किसी डोम जाति के पुरुष या स्त्री पर नहीं पड़ा, वह रमिया के सिर पर पड़ गया। रमिया उसी समय आगे बढ़ी थी। वह उस लड़के को रोकना चाहती थी। वह समझती थी कि वह रघुवा उसके कहने को मान जायगा। इसलिए, जब वह आगे बढ़ी, तो

दोनों समूहों के मध्य में पहुँच गई। किन्तु जैसे ही, लाठी उठी, तो उसके सिर पर पड़ गई। रमिया का सिर फूट गया। वह धड़ाम से पछाड़ खा गई। उसे घायल देख, दोनों ओर का जोश ऐसे ठण्डा पड़ गया कि जैसे आग पर पानी। रघुवा के हाथ से लाठी छूट गई और वह तुरन्त ही धरती पर पड़ी रमिया की ओर झुक गया। डोम भी स्तब्ध रह गये। वे मानो अपने-आप में लजा गये।

यह देख, ज़मींदार जोधराम ने अत्यन्त भावुक बनकर कहा—"जग्गू मेहतो की बहू का त्याग आज हमारा सहारा बन गया। गाँव में बहता हुआ ख़ून रुक गया। जीवन मेहतो के पाप का प्रतिकार दूसरे के ऊपर पड़ गया।"

लाला धनपतराय ने कहा—"जग्गू मेहतो की घरवाली ऐसी है, मैं नहीं जानता था। शिव के समान इसने ज़हर का घूंट भरा है, गाँव की आफ़त से बचाया है।"

उसी समय, रमिया चारपाई पर लिटाई गई। उसे गाँव के पास कस्बे में डाक्टर के पास ले जाने का प्रबन्ध किया गया।

बात घर-घर में फैल गई। रमिया संध्या तक कस्बे से लौट आई। उसे होश था। किन्तु वह चारपाई पर पड़ी रही। जग्गू ने उसे उठने नहीं दिया। एक अजीब हवा चली कि उस दिन सभी ने रमिया को सराहा। उसने अपनी जाति का पक्ष नहीं लिया, यह छोटी कौमों को अच्छा लगा। गाँव के स्त्री और पुरुष उस रमिया के पास आये और उसका कुशल-समाचार पाने के लिए उत्सुक हुए। किन्तु कुछ व्यक्ति उसके पास से नहीं हटे, जिनमें एक हरदेवा था। वह गाँव की दूसरी पट्टी में रहता था। रमिया से परिचित था। रमिया भी उसके घर आती-जाती थी। इस प्रकार वह दिन चला गया। परन्तु उसके साथ, नाटकीय ढंग से, परिस्थितिवश गाँव का बच्चा-बच्चा रमिया से परिचित हो गया।

जब अँधेरा छा गया, गाँव पर रात की काली चादर फैल गई, तब रमिया ने जग्गू की ओर देखकर कहा—"और गाय का दूध···बछड़ा···?"

जग्गू ने बता दिया कि उसने दूध दुह लिया है। बछड़ा भी अपना पेट भर चुका है। तभी उसने कहा—"तू भी दूध ले, रमिया!"

रमिया ने बात का उत्तर न देकर, अपना मुँह दूसरी ओर फेर दिया। उसने पास बैठे हरदेवा को लक्ष्य किया। उसी समय जग्गू ने द्वार पर किसी की परछाईं देखी। वह बोला—"कौन?"

"मैं,—माला!"

"अच्छा, कल्लू की लड़की! अरे, कैसे आई, माला?"

माला ने कहा—"दादी को देखने।"

रमिया ने मुँह फेरा और दूर खड़ी माला की ओर देखा। उसी समय हरदेवा खड़ा हो गया।

रमिया ने कहा—"माला आ, आ, बेटी, बैठ जा!" उसने हरदेवा से कहा—"जायेगा, बेटा! अच्छा!"

हरदेवा ने कहा—"चाची, कोई मेरे योग्य काम हो, तो बताना।"

रमिया ने कहा—"मेरा क्या काम है, बेटा! जो है, मुझी को करना है। अब न कर सकूँगी, तो सुबह करूँगी।"

माला ने कहा—"दादी, कोई काम मेरे योग्य हो, तो बता।"

रमिया ने कहा—"तेरे लिए तो बड़ा काम है। बैठ जा।"

माला बैठ गई। रमिया ने हरदेवा को भी बैठने के लिए कहा। उसने पूछा—"क्यों हरदेवा, अब शहर वाले जाति नहीं मानते क्या? कोई दुराव नहीं?"

हरदेवा ने कहा—"चाची, मानते तो हैं, पर कम। यहाँ की तरह नहीं। अब लोग समझते हैं कि इन्सान ही एक जाति है, वे वर्ण-व्यवस्था पर भरोसा नहीं करते। आज तो विश्व-भर के इन्सान एक होना चाहते हैं। बन्धुत्व की डोर में बँधे हैं। इस धरती के इस छोर से उस छोर तक के आदमी समझ गये हैं कि सभी की एक समस्या है—एक जाति—सो, सभी मिल-बैठकर उसे सुलझाते हैं।"

रमिया ने ऊपर की ओर देखकर कहा—"सुना तो मैंने भी है कि जो हर को भजैं, सो हर का होई।" हरदेवा की ओर मुँह करके वह बोली—"भैया, हम सभी तो इन्सान हैं। हमारी इससे बड़ी जाति और क्या होगी। परमात्मा के सभी बेटे हैं। यह धरती सभी की माँ है। अन्न देती है, पालन करती है।"

हरदेवा ने कहा—"हाँ, चाची। भगवान की निगाह में कोई छोटा-बड़ा नहीं।"

उसी समय रमिया ने माला की ओर देखा और कहा—"माला, तेरी कौम के आदमियों ने भी उस जीवन मेहतो को क्षमा कर दिया न? न किया हो, तो ऐसा करें। तू तो पढ़ी-लिखी है न, उन्हें समझाना। अपने बाप से भी कहना।" यह कहते हुए रमिया ने साँस भरी और कहा—"मैंने अपने खेत के मेंड़ पर से देखा था कि जब छोटू की औरत ने जीवनराम के मुँह पर तमाचा मारा था। तभी वह तड़पा था। उस औरत को धक्का देकर गिराया था। सच, छोटू की बहू ने बड़ा अच्छा किया। बहादुरी का काम किया। औरत को अपनी रक्षा इसी तरह करनी चाहिए।"

माला ने कहा—"चाची, हम भी कभी राजपूत थे। हमारे पुरखे तलवार चलाते थे। पर ग़रीबी ने सब चौपट कर दिया। पेट की रोटियाँ भी छिनीं

और धर्म भी छिन गया।" वह बोली—"छोटू की औरत कहती थी कि मुझे ईंट या पत्थर हाथ नहीं पड़ा, नहीं तो जीवन महतो का सिर फोड़ देती। वह बताती थी कि खेत से फली तोड़ने का तो एक बहाना था, मन में उस महतो के कुछ और ही था।" उसने कहा—"दादी, अब ज़माना आ गया है कि औरत अपनी रक्षा स्वयं करे। राजपूतनियों ने हमें यही सिखाया था।"

रमिया ने कहा—"तू ठीक कहती है, माला ! सच, तू समझदार है।"

हरदेवा बोला—"यह माला पढ़ने में भी होशियार है। मैंने सुना है कि इसे सरकार वजीफ़ा दे रही है।"

रमिया बोली—"कल्लू भाग्यवान है। वह ऐसी लड़की का पिता है।"

हरदेवा—"पर कल्लू शराब पीता है। यह बुरा है।"

माला—"यही हमारी जाति का दोष है। अब तो बहुत घट गया है। पढ़कर मुझे इसी ओर देखना है।"

रमिया ने कहा—"इस हरदेवा ने भी तुम्हारी कौम का बड़ा पक्ष लिया।"

माला ने हर्षित बनकर कहा—"चाची, आज के युग की यही पुकार है।"

हरदेवा बोला—"मैंने कोई ग़लत बात नहीं कही, चाची ! जो कुछ देखा, वही कहा। आज जाति के नाम पर हमें कुछ भी नहीं मिल सकता। जो पहला पाप था, वह भी नहीं फल सकता। हमने जिन्हें आज तक मूर्ख बनाया और अँधेरे में रखा, उस अवस्था को अब देर तक नहीं टिकाया जा सकता। देखती है न, देश स्वतन्त्र हुआ है, तो उसके साथ, यह इन्सान पुराने और दकियानूसी बन्धनों से भी छूट चुका है। यों आदमी को दास नहीं बनाया जा सकता। उसका मौलिक अधिकार उसे देना ही पड़ेगा।"

उसी समय जग्गू ने एक गिलास दूध तैयार किया और रमिया को दिया।

रमिया ने हरदेवा को देखकर कहा—"अच्छा, भैया ! अब तू जा। देख, इस माला को भी साथ ले जा। इसे भी दूर जाना है। अपने घर के परे छोड़ देना।" वह माला से बोली—"जा, बेटी ! जो होना था, हो गया। झगड़ा तुम्हारी कौम का था, पर चोट मुझे लगनी थी। भगवान को यही मंजूर था।"

हरदेवा ने कहा—"चाची, चोट तेरे नहीं लगी, पूरे गांव के लगी है। सच, गांव बच गया। आज जाने कितने पुलिस की हवालात में होते। कितने चारपाई पर।" वह चल पड़ा। माला भी उठ खड़ी हुई।

रास्ते में अँधेरा था। पथ जन-शून्य। तभी रास्ते में हरदेवा ने माला से कहा—"इस दुनिया में यही होता है, माला ! आदमी पाप करता है, पाप छुपाता है। यह जातिवाद और धर्मवाद क्या मनुष्य को वास्तविकता देखने देगा ?

उसने हमें सत्य से दूर रखा है···वर्गवाद का प्रचार किया है। मनुष्यता को क्या हमने समझ पाया है ?"

माला ने साँस भरी और छोड़ दी। उसी समय उसने कहा—"आज तुमने जिस सत्य का उद्घोष किया, हमारी जाति का पक्ष लिया, वह सभी को अच्छा लगा।"

हरदेवा ने कहा—"न, माला देवी ! हम सभी इस धरती से पैदा हुए हैं। भगवान के आश्रित हैं। पर आदमियों ने अपनी जातियाँ बना ली हैं। जुदे-जुदे रास्ते—"

माला ने कहा—"मेहतो, हम ग़रीब आदमी हैं। ऐसे ही ठुकराये जाते हैं। पर आज हमारी बिरादरी के लोग तो मरते ही, ठाकुर भी बचे न रह जाते। आज ज़रूर खून बहता। इस अपमान का बदला लिया जाता। छोटू की औरत का अपमान सभी ने अनुभव किया।"

उस समय माला ने नहीं देखा कि हरदेवा मुस्कराया था। उसने कहा—"माला, तुझे अब भी गुस्सा है। मैंने तेरी मानसिक स्थिति को समझा है।"

माला ने साँस भरी और छोड़ दी। वह बोली—"मैंने भी आज अनुभव किया कि हमें धरती पर नहीं रहने दिया जाता। रोटी छीनी, तो अब आबरू को भी छीनने का प्रयत्न किया जाता है।"

हरदेवा चंचल हो उठा। वह ऊपर आसमान की ओर देखने लगा।

माला ने फिर कहा—"तुमने आज जो कुछ कहा, वह मैंने सभी कुछ सुना था। मैंने तुम्हें देखा भी आज था। मेरा चाचा कह रह था कि तुम कालेज में पढ़ते हो। ग़रीब माँ-बाप की आशा हो।"

हरदेवा बोला—"माला, यह न भूलो कि हम सब एक ही नाव में सवार हैं। सभी परमात्मा के आश्रित हैं। हाँ, मेरे माँ-बाप ग़रीब हैं। मैं ट्यूशन करता हूँ और पढ़ता हूँ। कुछ घर में भी देता हूँ।"

उसी समय हरदेवा का घर आ गया। उसने माला से कहा—"आगे भी चलूँ, तेरे साथ ? डरेगी तो नहीं ?"

माला ने कहा—"नहीं, मैं चली जाऊँगी।" वह चली गई।

हरदेवा मन में एक अजीब भाव लिये हुए अपने मकान की ओर बढ़ गया। माला कितनी भावुक और सहृदय थी, यह उसने उसी दिन देखा और समझा था। वह चंचल बन गया और मन में बोला, काश, यह भी ठाकुर परिवार की होती···किसी राज-परिवार की···बेचारी माला !

———

छठी बात

जिस दिन रमिया का सिर फटा, रलियाराम गाँव में नहीं था। रमिया को मालूम था कि वह कहाँ गया है। जब रलिया लौट कर आया, तो गांव में पीछे घटित हुई घटना को सुनकर वह तुरन्त रमिया के घर पहुँच गया। किन्तु रमिया ने उससे अपनी बात न कहकर पार्वती के विषय में जानना चाहा कि वह कहाँ है और किस अवस्था में है। जब रलिया ने बताया कि पार्वती को उसकी ससुराल वालों ने नहीं रखा, तो रमिया के सिर में लगी हुई चोट पर जैसे बरबस ही, किसी ने दूसरा प्रहार किया। वह अत्यन्त कातर बन गई। रमिया के लिए सबसे बड़े खेद और अचरज की बात यह थी कि रलिया अकेला लौटा था। पार्वती उसके साथ नहीं आई। जिस स्टेशन पर वह गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहा था, वहीं पर उसने पार्वती को खो दिया। यद्यपि, पार्वती के मन की बात पहले ही मिल गई थी, क्योंकि वह इतना रलिया से कह चुकी थी कि अब उसका बाप भी उसे घर में नहीं रखेगा। उसका इस दुनिया में कहीं स्थान नहीं है। तदपि रलिया को इतना भरोसा नहीं था कि पार्वती किसी बड़े दुस्साहस का प्रदर्शन करेगी और एक अपरिचित रास्ते पर चढ़ जायगी। इस प्रकरण की आरम्भिक कथा बताने के साथ, रलिया ने रमिया को यह भी बताया कि पार्वती को खोजने के कारण ही, उसने वह गाड़ी छोड़ दी। वहाँ सभी ओर देखा। उस प्रसंग में रलिया ने अपने मन का भय प्रगट किया और कहा—"भाभी, उस स्टेशन के पास ही नदी बहती है। शायद उस नदी में ही पार्वती ने अपने को छिपा दिया। वह डूब कर मर गई। जिस पार्वती की किसी ने रक्षा नहीं की, निश्चय ही, उस नदी की गहराई ने उसे अपनी गोद में छिपा लिया।"

रलियाराम जिस समय रमिया के यहाँ पहुँचा, उस समय जग्गू घर पर नहीं था। पार्वती रलिया के साथ गई है, इतना उसे पता था। रमिया के सिर का घाव भर रहा था। वह बच गई, इसका सभी को सन्तोष था। किन्तु रमिया ने बरबस ही, अथवा परिस्थितिवश जिस पौरुष का प्रदर्शन किया, वह उस गांव के जीवन में तो नवीन घटना थी ही, साथ ही, रलिया सरीखे उद्धत और प्रमादी

युवक के लिए भी, ज्ञानवर्धक और एक नई दिशाबोधक बात सिद्ध हुई। उसके मन और मस्तिष्क पर तीव्र प्रभाव पड़ा। लेकिन साथ ही, जब रमिया ने रलिया की बात सुन ली और यह समझ लिया कि वह यौवनमयी लाज की मारी पार्वती इस दुनिया में नहीं रही, तो वह अतिशय वेदना और व्यथा से पूर्ण बनकर बोली—"रे, रलिया ! यह तो बुरा हुआ ! एक जवान और सुन्दर लड़की यों ही मर गई। बेचारी कुछ भी नहीं देख पाई। इस ज़िन्दगी के रास्ते पर ज़रा भी नहीं चल सकी !"

रलिया उस समय स्वयं उदास था। कातर भी बना था।

रमिया ने कहा—"तब से जसपत भी नहीं दिखाई दिया। जाने कहाँ गया। जरूर, वह पार्वती को ही देखने गया होगा। उसकी ससुराल पहुँचा होगा।"

रलिया ने कहा—"भाभी, यह अच्छा ही हुआ कि मैं पार्वती की ससुराल नहीं गया। उन लोगों के सामने नहीं पड़ा। नदी के जिस घाट पर हम लोग उतरे, मैं वहीं बैठा रहा। मैं नाव चलानेवालों को भी अपना मुँह नहीं दिखा सका। उनकी ओर से मुँह मोड़े रहा। पार्वती मेरे साथ है, मैंने यह भी प्रगट नहीं किया। नाव का किराया उसने अलग से दिया था।"

रमिया ने कहा—"यह तूने ठीक किया।" यह कहते हुए उसने साँस भरा और अपना मुँह बरबस ही दूसरी ओर फेर दिया।

रलिया ने कहा—"पार्वती को देखते ही, उसके ससुर ने और पति ने उसको फटकार दिया। दरवाज़े के अन्दर नहीं घुसने दिया। उन्होंने साफ़ कह दिया कि हम तेरा मुँह नहीं देखना चाहते। अब घर में नहीं रख सकते।"

रमिया ने कहा—"जसपत ने उस बूढ़े का अपमान भी कम नहीं किया। देखता है न, कसाई बाप ने लड़की के जीवन का खून कर दिया ! जवानी की भरी दोपहरी में उसे मार दिया।" और उसने तभी रलिया की ओर देखा। मानो उसने समझना चाहा—तो अब क्या होगा ? क्या पार्वती का कहीं भी पता न चलेगा ! उसे मरी हुई समझा जायगा ! मानो उसे रलिया पर तब भी सन्देह था। क्योंकि वह उसकी दृष्टि में कभी भी अच्छा आदमी नहीं रहा। अतएव, रमिया के मन का चोर बार-बार अपना सिर उठाता। उससे कुछ कहता। किन्तु रलिया ने स्वतः ही अपनी बात कही—"भाभी, पार्वती ने मर कर बता दिया कि उसके मन में कितना क्षोभ था। सच, अपमान का बोझ उससे नहीं सहा गया।" यह कहते हुए रलियाराम खड़ा हो गया और बोला—"और भाभी, तूने भी गाँव के सिर पर आई हुई आफ़त हटा दी। सच, भड़की हुई आग बुझाई तूने ! तुझसे ऐसी अनोखी और बड़ी बात भी हो सकेगी,

इतना मैं नहीं सोच सकता था। सच, बड़ी बहादुरी का काम किया, तूने।"

रमिया ने बात सुनी, तो मत नहीं दिया। रलिया चला गया।

तभी जग्गू घर में आया। उसने रमिया से कहा—"सुना, रमिया! गाँव में अफ़वाह है कि रलिया ही जसपत की लड़की को ले गया था। अब मुझे मिला तो पूछने पर कहने लगा—'मैं कुछ नहीं जानता'।" वह बोला—"अरी, रमिया! यह रलियाराम बड़ा छलिया है! मक्कार है!"

रमिया ने बात सुनी, तो रहस्यभरी दृष्टि से जग्गू को घूरा। उसने तुरन्त ही कहा—"तो तुम्हें क्या!" वह बोली—"यह फ़िज़ूल की बात ही तुम्हें कहने को रह गई है क्या? यह तो हुआ नहीं कि जंगल जाकर गाय के लिए थोड़ी-सी घास ले आते। पर बातें करने और हुक्का पीने से फ़ुरसत मिले, तब तो! मैं कहती हूँ रलिया भी अच्छा आदमी बन सकता है। उसका यही तो कसूर है कि वह ग़रीब है और बेकार है। पर मैंने समझा है कि अच्छाई रलिया के मन में भी छिपी है। वह क्या किसी और ने देखी है!"

जग्गू ने रलिया की बात छोड़ दी और अपनी बात लेकर, जैसे स्वतः ही दोषी बन गया, उसने अपना कसूर मान लिया। किन्तु फिर भी उसने कहा—"तो मैं भी क्या करूँ रमिया, गाँव में आजकल बातों का बाजार गरम हो गया है। अभी तक तो जसपत की लड़की की बात थी, लेकिन अब तेरी और कल्लू की लड़की माला की बात भी चल गई है। तेरा सिर तो फटा, पर गाँव में तू प्रसिद्ध हो गई। और यह भी सुना तूने, उस दिन रात में जब हरदेवा और माला यहाँ से गये, तो उन्हें किसी ने रास्ते में देख लिया था। छज्जू बनिया भी अपनी दुकान के छप्पर के नीचे बैठा हुआ था। वे दोनों वहाँ से निकले थे, तो—"

रमिया बीच में ही झल्ला पड़ी—"तो हुआ क्या! क्या पाप हुआ! छज्जू खुद कमीना है। दाम ज्यादा लेकर सौदा कम देता है। वह गाँव की बहू-बेटियों की क्या इज्ज़त करता है? गुण्डा है! देखते नहीं, गाँव के लुंगाड़ों का उसके यहाँ जमघट लगा रहता है। उसकी दुकान पर जब देखो तब, ताश खिलता है—बदमाश कहीं का!"

उदास स्वर में जग्गू ने कहा—"रमिया, कहने वाले का मुँह नहीं पकड़ा जाता!"

रमिया ने बात सुनी तो बोली—"हरदेवा भला लड़का है। और मैं कहती हूँ, माला-सरीखी लड़की तुम्हारे ठाकुरों में भी नहीं मिलेगी। दिखा तो दे कोई ऐसी सुन्दर लड़की! जब उसने भरी चौपाल में खड़ी होकर अपनी कौम का पक्ष लिया, तो मुझे लगा जैसे दुर्गा या जगदम्बा अपने मठ से उठकर वहाँ आ गई

थी। वड़े भाग्य समझो उस कल्लू के, जो ऐसी लड़की उसके घर में पैदा हुई। हरदेवा कहता था कि वह वारह जमात तक पढ़ी है।"

जैसे झल्लाकर जग्गू ने कहा—"लोग तेरी वात भी पसन्द नहीं करते। कहते नहीं हैं तो क्या, यह तो सभी अनुभव करते हैं कि तूने ठाकुर का पक्ष नहीं लिया, डोम का लिया। अपनी जाति को नीचा दिखा दिया। वड़ी आई सत्य वोलने वाली! और यह नहीं जानती, इस दुनिया में नीति से चला जाता है···कभी सत्य भी चुल्लू में भरकर पी लिया जाता है।" वह वोला—"सुना नहीं तूने, देवताओं को वचाने के लिए विष्णु ने माया का रूप धारण किया था···उसी रूप से राक्षसों को छला था···उस अवस्था में ही अमृत-घट उड़ाया गया था!"

रमिया तुनक गई—"तो! कोई कुछ देने आयेगा, तो न देगा,—वस यही तो!" वह वोली—"मैं झूठ नहीं वोलूंगी। पाप को पाप कहूँगी, पुण्य को पुण्य। जो डरे वह मरे···मुझे क्या!"

जग्गू ने मानो मर्माहत वनकर कहा—"रमिया, सव वातें गरम वनकर नहीं देखी जातीं। यह गाँव है। यहाँ के भी कुछ नियम हैं, कायदे हैं। ठाकुरों के हाथ में ही गाँव के प्राण हैं। अपने भाइयों को छोड़कर क्या हम जीवित रह सकते हैं? इस डोम जाति का क्या, आज यहाँ, कल वहाँ······हाँ, इन्हें गाँव छोड़ते क्या देर लगती है।"

रमिया ने क्षोभ-भरे स्वर में कहा—"मैं सव समझती हूँ, तुम्हारे इस गाँव के कायदे-कानून! इस गाँव के आदमी चोर हैं, ठग हैं। अपनी लड़की तक वेचते हैं। उनसे···अरे, राम-राम! ऐसे हैं, इस गाँव के आदमी। जंगली हैं, कसाई हैं!" वह वोली—"और तुम इन डोमों की वात करते हो। उनके यहाँ फिर भी कुछ कायदे हैं, कानून हैं। पर तुम्हारे पास क्या! देखा, एक औरत का अपमान देखना भी डोम नहीं सहार सके। सव मिल कर आ गये।"

जग्गू कुटिल भाव से मुस्कराया—"तुझे अव भी गुस्सा आया है, रमिया! तेरा दिमाग़ भी असलीयत से दूर जा रहा है। मैं अव समझा कि तुझे डोमों से प्रेम है। भला क्यों? इसलिए कि वे ग़रीव हैं? पर उनमें कल्लू तो ग़रीव नहीं।"

रमिया ने कहा—"मैं एक का पक्ष नहीं लेती। वात गाँव की करती हूँ। मेरा वस चले तो मैं इस गाँव में आग लगा दूँ। एक-एक का मुंह नोच लूँ।"

वात सुनी, तो जग्गू ठहाका मार कर हँस पड़ा। उसने कन्धे पर चादर रख ली, खुरपा उठा लिया और लाठी लेकर वहाँ से चल दिया।

रमिया ने कहा—"देखना, जल्दी लौटना। गाय आती होगी, इसका ध्यान रखना।"

जग्गू ने बात सुन ली, पर बिना बोले वहाँ से चला गया।

पति के जाते ही, रमिया के मन में बात आई—तो क्या सचमुच ही, पार्वती डूब कर मर गई। सच ही, क्या वह पानी के पेट में चली गई। इतना मन में आते ही, रमिया को जैसे सभी कुछ कड़ुवा लगा। उसे अपना जीना भी भारी लगने लगा। उसी समय, उसके मन में शंका हुई कि कहीं यह रलिया तो उसे ठिकाने नहीं लगा आया। कई दिन में आया है। इस बदमाश को क्या आसानी से समझा जा सकता है! किन्तु रमिया के मन में यह बात जम नहीं रही थी। वह जैसे उसके मन से फिसल रही थी। जो हो, रमिया को लगा कि मानो उसके चारों तरफ़ आँधी उठी है। वह आँधी उसे उड़ाये लिये जा रही है। रमिया तिनके के समान बनी हुई उड़ी जा रही है। उस क्षण में ही, उसने यह भी अनुभव किया कि उस आँधी में अकेली वह स्वयं ही नहीं उड़ी है, बल्कि इस जगत् का समूचा नारी-समाज उड़ रहा है। मानो सभी नारियाँ ग्रस्त हैं, और दुःखी हैं। इस जगत् का समाज कराह रहा है। जहरीले धुएँ में उसका प्राण घुट रहा है, तड़प रहा है···।

उसी समय पड़ोस की दो औरतें वहाँ आईं। उनके पीछे कुछ और भी चली आईं। क्योंकि वही समय उनका फ़ालतू था। सभी घरों के आदमी अपने खेतों पर गये हुए थे। इसलिए कोई स्त्री चर्खा कात रही थी, कोई अपना कपड़ा सी रही थी और कोई कुछ औरतों के पास बैठी हुई बातें करने में लगी थी। चूँकि रमिया अभी स्वस्थ नहीं थी, इसलिए ऐसे फ़ुरसत के समय ही, औरतें उसके पास आतीं। निदान, जब वे औरतें आईं, तो रमिया को जैसे कुछ आधार मिला। क्योंकि वह एकाएक ही विषम बन गई थी। उसकी मानसिक गति क्षुब्ध थी। किन्तु जब उसने कई औरतों को आये देखा, तो वह एक को इंगित कर, छूटते ही बोली—"आओ जेठानी, बैठो।"

जिस औरत को रमिया ने जेठानी कहा, वही बोली—"अब कैसी तबीयत है? पहले से तो आराम है?"

रमिया ने कहा—"हाँ, अब ठीक हूँ। ज़ख्म भर रहा है।"

दूसरी बोली—"तू भी बच्चे-बच्चे की ज़बान पर आ गई। चोट तो लगी, पर प्रसिद्धि भी पा गई।"

रमिया बोली—"मैं इतना नहीं समझती। बस, यह जानती हूँ कि इस गाँव की चादर उतर गई।"

पहिली ने कहा—"यह तो तू ठीक कहती है, बहिन! सचमुच!"

एक अन्य बोली—"और भी सुना कुछ, पार्वती का अभी कोई पता नहीं

चला। उसकी माँ से पूछा तो कहती है कि ससुराल भेज दी।" उसने कहा—"पर मुझे तो दाल में काला नज़र आता है। पार्वती का बाप क्या इतना भोला है ? भला, लड़की ससुराल भेजनी थी, तो उसके श्वसुर के साथ क्यों न भेज दी ? ज़रूर, या तो वह भाग गई, या कुएँ में······।"

चौथी औरत जो सबसे बाद में आई थी, जल्दी से बोली—"राम ही जान सकता है, ऐसे लोगों की बातें ! हमारा तो सुनते भी दिल काँपता है। अब कलियुग ही तो है कि जिसमें बाप ही बेटी का गला काटता है !"

रमिया उस समय गम्भीर बनी थी। जैसे वह उन औरतों की बातों के अन्तराल में डूब चुकी थी। कहीं दूर जाकर खो गई थी। जो बात कभी उसके मस्तिष्क में नहीं आई, वही उसे आन्दोलित कर रही थी।

तभी एक ने कहा—"छज्जू भी अपनी लड़की का सम्बन्ध कर आया है। बात तो कुछ और ही सुनी जाती है। वैसे राम जाने क्या है ! इस गाँव की तो माया ही न्यारी है।"

रमिया बोली—"लोगों ने लड़कियाँ भी सोने की डली समझ ली हैं। छज्जू भी कम शैतान नहीं है। जसपत के रास्ते पर चलने की बात उसके मन में भी आ सकती है। तू कहती क्यों नहीं कि वह भी लड़की पर रुपया माँगता है !"

"और भी सुना, कल फ़कीरा के दोनों बैल खुल गये। बेचारे को हज़ार रुपये की चोट पड़ गई। उसकी तो कमर टूट गई !"

रमिया बोली—"यह मैंने भी सुबह सुना था। हाँ, अब यही तो होगा, इस गाँव में ! पिछले महीने रामदास के यहाँ चोरी हुई। चोरों ने दीवार तोड़ दी। गौने से लौटी उसकी लड़की के ज़ेवर तक उतार कर ले गये। यह कम है क्या ! यह गाँव चोरों की बस्ती बन गया है।"

"दिये जलते ही दरवाज़े बन्द हो जाते हैं, इस गाँव के ! पहले कुत्ते-बिल्ली का खटका रहता था, पर अब आदमी का रहता है। पड़ौसी ही पड़ौसी को मारता है ! लूटता है !" एक अन्य ने कहा।

उसी समय रमिया ने जैसे बरबस हो, अपने को भुला देना चाहा। उसने अपने सामने बैठी हुई एक बहू की गोद में बैठे बच्चे को लक्ष्य किया और कहा—"क्यों रे बदमाश !"

बच्चे ने बात सुनी, और अपना मुँह माँ की छाती से लगा लिया। वह शरमा गया।

रमिया ने बच्चे की माँ से कहा—"तू अब भी इसे गोद में लेती है, चलाया कर।"

उस बहू ने कहा—"नहीं चलता, अम्माजी ! नीचे उतारती हूँ तो रोता है। बस, गोद में चुप रहता है।"

उसके पास बैठी हुई औरत ने उसे टँकोरा—"क्यों री, तेरी सास कहती थी कि अब फिर बच्चा होने वाला है। क्यों, ठीक है ?"

बहू ने जल्दी ही उस बात को पकड़ लिया और कहा—"हाँ जेठानी, बात तो ठीक है। मेरी बड़ी परेशानी है।"

रमिया ने कहा—"तू दुबली भी बहुत हो गई है।"

एक बोली—"कितने बर्षों की है ! मेरी यशोदा के बराबर की है। पर लगती है कि जैसे बुढ़िया ! कल की तो बात है कि जब यह ब्याह कर आई थी। कितनी सुन्दर लगती थी, जैसे चाँद का टुकड़ा !"

रमिया ने साँस भर कर कहा—"यह औरत की ज़िन्दगी भी अजीब है। झंझटों से भरी है। घर का भी बोझ उठाये और बच्चे भी पैदा करे—हे राम ! अब तो औरत बच्चे पैदा करने वाली मशीन बन गई है।"

एक हँसी—"अच्छा तो है, घर बढ़ेगा, तो गाँव भी बढ़ेगा।"

दूसरी बोली—"ना, री ! आज तो यह भी बला है। लोगों को खाना तो मिलता नहीं, जीने का सहारा नहीं ! मेरा लड़का कहता था कि शहरों में औरतों ने ज़िन्दगी को चलाने का रास्ता बदल दिया है। उन्होंने भी बाहर जाकर काम करना शुरू किया है।"

तीसरी ने कहा—"अच्छा तो है, औरत भी अपने पैरों पर खड़ी होगी। ज़िन्दगी को समझेगी।" वह बोली—"कहा तो है किसी ने कि गाड़ी के दो पहिये हैं, एक औरत एक मर्द; तो फिर गृहस्थ की गाड़ी ठीक से चलेगी।" वह कहने लगी—"जब मेरे पहला बच्चा हुआ, तो मुझे खाने के लिए बीस सेर घी मिला था। फिर तो घटता गया। और अब हालत यह है कि तेल मिल जाय, तो भी ग़नीमत है ! कहने को घर पर भैंस बंधी है, पर दूध निकलते देर नहीं कि दूधवाला आकर ले जाता है। बच्चे छाछ को तरसते हैं। भैंस न हो, तो घर-भर को रोटी मिलनी भी कठिन हो जाय।"

रमिया बोली—"ग़रीबी बड़ी बुरी चीज़ है, लाडो ! सभी कुछ कराती है। पाप भी करा देती है। आज के ज़माने में औरत अगर सहारा दे सके, तो क्या बुरा है। अच्छा है। देखो न, कल्लू डोम की लड़की माला पढ़ने लगी, तो कैसी चतुर बन गई है।"

इतनी बात सुनी, तो उसने कहा—"न, जेठानी ! ऐसा न कहो, इन ठाकुरों से ! इज़्ज़त पर बट्टा लग जायगा। वैसे, देखो तो आदत सभी की बिगड़ गई है।

खर्चे वढ़ गये हैं। परेशान वने हैं। घर में वैठ कर रोते हैं।"

"वहू, महँगाई भी तो मुँह फाड़े खड़ी है। अव खेत की ज़मीनें भी उतना नहीं देतीं। और पेट पूरा माँगता है। मैं दूसरों की तो क्या कहूँ, मेरे अपने घर में एक रुपये का अन्न एक ही समय उठ जाता है। तभी तो लोग दूध वेचते हैं। गुज़ारा करते हैं। आज असली घी और दूध क्या किसी को मिलता है! कोटो-जम घर-घर में चल पड़ा है। भला उससे क्या आदमी पनपता है? हाड़-माँस की खोल में इस आदमी का प्राण जाने किस तरह उलझा रहता है।" रमिया की जेठानी ने कहा—"शहर की वात और है। वहाँ की हवा भी और! यहाँ पढ़ा-लिखा आदमी क्या करता है! वैल के साथ काम करने वाला तो वैल रहता है।"

रमिया ने साँस भरी और उस वात की पुष्टि कर दी।

जेठानी वोली—"तभी तो लोग लड़की वेचते हैं, चोरी करते हैं! भूखा आदमी सभी कुछ कर सकता है—खून भी करता है!"

रमिया ने वात सुनी, तो उसकी निगाह उधर ही उठ गई, पर वह वोली कुछ नहीं। किन्तु उसी समय दूसरी औरत ने वात कही—"न जी! अव लोगों की आदत भी वदल गई है। मैं अव भी पाँच सेर पीसकर उठती हूँ। घर का सभी काम हाथों से करती हूँ। पर देखती हो कि अव कितने घरों में चक्की चलती है, चर्खा चलता है! आजकल की वहुएँ क्या धरती पर पैर रख कर चलती हैं! यह तो ग़नीमत है कि इतने पर भी रोटियों के लाले हैं। नहीं तो ये छैलचिकनियाँ वनी रानियाँ आसमान में उड़ें और थेकली लगायें।"

रमिया हँसी—"तुझे वहुओं से वड़ी नाराज़गी है!"

वह वोली—"मैं दुखी हूँ, रमिया! तू तो देखती है, मेरी वहुओं को! सभी रानियाँ वनी हैं। मैं कुछ कहती हूँ, तो वात कानों पर टाल देती हैं। ज़्यादा कहूँ तो कहती हैं कि पीहर भेज दो। आये दिन मकर वनाये चूल्हे-चौके से भी जी चुराती हैं।" उसने कहा—"और तो और, मैं कभी सुनती थी कि शहर की औरतें अपने मुँह लाल-सफ़ेद रंग से रंगती हैं, पर अव तो देखकर हैरत मानती हूँ कि मेरे घर में ही वहुएँ कभी भी अपना पिटारा खोलकर वैठ जाती हैं और वारी-वारी से माँग-चोटी कर, जव मुँह पर पाउडर पोतती हैं, होठों पर लाली लगाती हैं, तो मेरे जी में आता है कि उनके मुँह नोच लूँ। मैं समझ नहीं पाती कि वह किस दुनिया में जाने की तैयारी करती हैं। मियाँ खेत खोदते हैं और उनकी वीवियाँ रानी वनती हैं···वाह रे, ज़माने!"

रमिया हँस कर वोली—"तेरी वहुएँ पढ़ी-लिखी हैं।"

वह तुनक कर वोली—"ख़ाक पड़े इस पढ़ने पर! वता तो, यह कौन-सी

कचहरी करने जायेंगी। रोटी न पायेंगी, चौका न देंगी तो क्या इनके लिए नौकरानी आयेगी ? मैं बताये देती हूँ—ये भूखी मरेंगी, चिथड़ों को तरसेंगी !"

रमिया ने कहा—"अरी, नई उमर है, बहिन ! उन्हें भी करने दे, अपनी मन-चीती।" वह हँस कर बोली—"तू सुना, अपनी बात ! मैंने तो देखे हैं, तेरे वे दिन, जब रोज तुझे मिरगी चढ़ती थी। जूती तक सुंघाई जाती थी। बता, अब कहाँ गये, वे भूत-प्रेत ! कह न, जवानी दीवानी होती है। दिमाग़ में आँधी भरी होती है। ऐसे समय, मर्द के समान, कोई औरत क्या धरती पर पैर रख कर चलती है ! सच, उसके आसपास की चलती हवा भी रुक कर उसे देखती है, उससे टकराती है और अठखेलियाँ करती है।"

रमिया की जेठानी ने कहा—"तेरे भी यही हाल थे, रमिया ! मैंने देखे हैं।"

रमिया ने जल्दी से कहा—"हाँ, हाँ, यही तो ! मेरे क्या, सभी के होते हैं। जवानी के दिन उड़ाये नहीं उड़ते, स्वयं उड़ते हैं···आँधी के समान निकल जाते हैं, वे दिन !"

सातवीं बात

छोटू और उसकी बहू का झगड़ा निपटा तो, परन्तु वह गाँव के दिल में गाँठ बन कर रह गया। गाँव का पटवारी, जमींदार और अन्य ठाकुरों का समूह, इस बात को नहीं भूल सका कि उन्हीं की जाति के हरदेवा ने नीच जाति के समक्ष ठाकुरों को झुक जाने के लिए बाध्य किया। उस घटना से यह स्पष्ट हो गया कि सामन्तवादी मनोवृत्ति का प्रभाव उस गाँव में अभी शेष था। वह उसकी मिट्टी में दबा था, व्यक्ति-व्यक्ति के हृदय में बोल रहा था। पटवारी और ज़मींदार को जग्गू मेहतो की बहू रमिया का व्यवहार भी साँप की तरह सूँघ गया। उस अवसर से लाला धनपतराय ने भी लाभ उठाया। उसने रमिया और जग्गू के प्रति पूर्णतया विष वमन किया। और उसका एकमात्र कारण यह था कि लाला को एक बार रमिया ने फटकार दिया था। उसने साफ़ मुँह पर कह दिया था कि तू सूदखोर है, लोगों की विवशता का लाभ उठाता है; गाँव का खून पीता है!

बारूद के ढेर में चिनगारी लग गई थी, विस्फोट होने वाला था। रमिया स्वस्थ हो चुकी थी। हरदेवा अपने कालेज चला गया था। उन दिनों परीक्षा-काल निकट था, इसलिए वह महीने में एक या दो बार गाँव आता था। वस्तु-स्थिति यह थी कि ऊपर से देखने पर गाँव में शान्ति थी, परन्तु जो विपक्षी और स्वार्थी दल था, उसकी गति-विधि सुप्त नहीं थी। आये दिन, चौपाल में जहाँ दूसरों को लक्ष्य करके बातें होतीं, वहाँ कल्लू की लड़की माला, हरदेवा और रमिया का भी उल्लेख किया जाता। आश्चर्य कि लोगों ने छोटू डोम और उसकी पत्नी को महत्व नहीं दिया, जब कि सभी बातों का सूत्रपात उन्हीं से हुआ। जब एक दिन यही बातें चलीं, तो उस समय पटवारी, लाला और ज़मींदार भी वहाँ उपस्थित थे। रमिया का ज़िक्र आते ही लाला ने कहा—"अजी, उसका मर्द कायर है; औरत से दबता है! रमिया ने जग्गू को गुलाम बना रखा है। वह घरवाली के सामने क्या बोल सकता है!"

लाला की बात सुनी, तो ज़मींदार हँसा। पटवारी ने कहा—"जग्गू सीधा

है। वह झगड़े से डरता है।"

लाला ने बात पकड़ी और कहा—"नहीं, जनाब! जग्गू भी पूरा सांप है। औरत को आगे कर देता है। बच्ची बच गई उस दिन, नहीं तो प्राण निकल जाते। लाठी का वार उछटता पड़ा था।"

पटवारी ने कहा—"लाला जी, वह भगवान ने अच्छा किया, नहीं तो हम लोगों को भी कचहरी-थाने में भागना पड़ता। तब न जाने कौन-कौन बंधता! हो सकता था कि हमीं लोगों को हवालात में बन्द होना पड़ता।"

लाला ने कहा—"कचहरी-थाने क्या अब नहीं जाना पड़ेगा। सुना नहीं, डोम लोग क्या करना चाहते हैं। कहते हैं हम ठाकुरों के कुएँ पर पानी भरेंगे। मंदिर में जायेंगे।" वह बोला—"उस दिन आये तो थे दो खद्दरधारी। सुनता हूँ-बड़ा लेक्चर दे गये, इन डोम-भंगी और चमारों को!"

ज़मींदार ने कहा—"वे सब बात बढ़ाना चाहते हैं। हमारा धर्म भ्रष्ट करने पर तुले हैं।"

लाला ने कहा—"और-तो-और, हरखू के लड़के हरदेवा ने भी लोगों से यही कहा है कि भगवान सभी का एक है···धरती माता सबकी एक···अधिकार सभी के एक···"

पटवारी बोला—"वह भी सींग कटाकर बछड़ों में नाम लिखाना चाहता है, लाला जी! दिखता है उसका पेट भर गया! बाप तो जन्मभर भूखों मरता रहा, पर बेटा ज़मीन से भी उछल कर चलता है। धर्म-अधर्म की बात करता है···पाप-पुण्य का नारा लगाता है···"

ज़मींदार बोला—"कुछ पढ़ गया है। शहरी बना है। वहाँ की हवा में उसका भी दिमाग़ बिगड़ा है।"

लाला—"हाँ, शहर में रहकर वहाँ की हवा लग गई है, बाबू बन गया है। अंग्रेजी के चार अक्षर क्या पढ़े, सिद्ध हो गया है!"

ज़मींदार—"सुना है, इस हरदेवा का विवाह भी किसी अच्छे घर में होने वाला है। किसी ने बात की है।"

वहीं पर बैठे एक अन्य ठाकुर ने कहा—"न, महतो! सभी झूठ है! भला ऐसे घर कौन लड़की देता है।" वह बोला—"लड़की वाला भी कुछ देखता है। घर, ज़मीन···"

ज़मींदार ने कहा—"नहीं, मुझे पता है। बात चली है।" वह बोला—"भैया, लड़का पढ़ा है। शक्ल-सूरत का अच्छा है। आजकल यही देखा जाता है।" उसी समय ज़मींदार ने अपने स्वर पर ज़ोर दिया और पटवारी तथा

लाला को लक्ष्य करके कहने लगा—"पर सवाल यह है कि पुरानी परम्परा को कैसे कायम रखा जाय। हमारा तो काम ही समाप्त हो गया। ज़मींदारी क्या गई, गाँव का चलन ही विगड़ गया। आज तो हर कोई गाँव का मालिक वन गया। गाँव के डोम-भंगी कुएँ पर चढ़ेंगे···मन्दिर में···राम राम !"

एक ठाकुर वोला—"खून हो जायेंगे, मेहतो !"

"पर भैया, समस्या का यह भी हल नहीं है।" पटवारी ने कहा।

ज़मींदार वोला—"सरकार ने कानून वना दिया है। इन खद्दरधारियों ने ईमान भ्रष्ट कर दिया है। धर्म लोप हो गया है !"

लाला ने कहा—"छोटी कौम के लोगों में संगठन है, हम में नहीं।"

ज़मींदार वोला—"मैंने एक दिन हरदेवा को वुलाया था। कहा था। पर वह तो अपनी वात पर अड़ा रहा। वरावर यही कहता रहा कि किसी का अधिकार मारना वुरा है। अव पुराना समय नहीं रहा। कम्वख्त, मुझी को उपदेश देने लगा और वताने लगा कि हिन्दू-जाति ने अपने छोटे भाइयों को गले नहीं लगाया, उनसे घृणा की है; उन्हें भूखों मारा है; अँधेरे में रखा है !"

लाला ने तीखे भाव से कहा—"और उन्हें खाने को क्या उनका वाप देता है !"

"हाँ, यही तो !" ज़मींदार ने कहा—"भला कोई पूछे इन सुधारकों से कि यदि हमारे घरों से और खेतों से इन्हें कुछ न प्राप्त हो, तो कैसे ये लोग वढ़ें और चलें। तव क्या इनका पेट भर सकेगा ?"

एक ठाकुर ने कहा—"आज तो गाँव में सभी-कुछ हो रहा है ! सुना नहीं, कि जसपत की लड़की पार्वती······"

पटवारी ने कहा—"मुझे रलिया की शैतानी लगती है। गाँव में वात उसी की चल रही है।"

लाला वोला—"रलिया इन्कार करता है। साफ़ कहता है कि मैं कुछ नहीं जानता।"

उसी समय पटवारी ने रहस्यपूर्ण दृष्टि से लाला की ओर देखा। उसने कहा—"सुना है, तुम्हें जग्गू से भी कुछ लेना है। देखते हो न, उसका खेत खूव हरा-भरा खड़ा है। अभी नालिश कर दोगे, तो तव तक······"

जल्दी से लाला ने कहा—"यही मैंने सोचा है।"

पटवारी वोला—"लाला, ज़हरीले दाँतों को जल्दी तोड़ देना चाहिए। इस वार जग्गू को खेत का दाना नहीं मिला, तो होश में आ जायेगा। रमिया भी समझेगी कि हम लोगों के खिलाफ़ चलने का क्या परिणाम हुआ।"

ज़मींदार ने आँख मारी और कहा—"हाँ, लाला, यह मौका अच्छा है।"

पटवारी ने कहा—"और मेहतो, तुम भी अपनी कसर निकाल लो, हरदेवा के बाप से! तुम जो खेत उससे लेना चाहते हो, अब ले डालो। मैं काग़ज़ों में तुम्हारा नाम लिख दूंगा। बस, मेरा मेहनताना···"

आतुर भाव में ज़मींदार ने कहा—"मुझे मंजूर है, पटवारी जी! मैं कल ही बेदखली क़ी दरख्वास्त दूंगा।"

लाला ने कहा—"मैं कल्लू को बुला कर कह दूंगा कि उसके जानवर मेरे खेतों की तरफ़ न जायें। अब यह सभी को कह देना है। वे अपना जुदा कुआँ खोदें और पानी भर कर पीयें।" वह बोला—"एक दिन सब ठाकुरों को बुलाकर समझा दो कि कोई डोमों को अपने खेतों पर न जाने दे। वे कुएँ पर भी पानी न भर सकें! कल्लू उनका चौधरी बना है। उसे भी पता पड़ जाय कि गाँव के खिलाफ़ चलने का कैसा परिणाम होता है। वह अपनी जाति का हिमायती बनता है···उसकी लड़की माला···।"

ज़मींदार ने कहा—"वह लड़की तेज़ है। खूब बोलती है। कम्बख़्त ने शक्ल-सूरत भी अच्छी पाई है।"

लाला ने इतनी बात सुनी, तो कहा—"भैया, आज वर्ण-संकरता फैल गई है। कहने को जातियाँ अलग-अलग हैं, पर क्या दुराव की कोई बात दिखाई पड़ती है। तुमने देखी नहीं, कल्लू डोम की औरत भी सुन्दर है। कल्लू ने शहर में कमाई की और यहाँ गाँव में ज़मीन खरीद ली। छोटा बरतन है, तो उसमें उफान भी जल्दी आ गया है। लड़की को पढ़ा रहा है। किसी बड़े आफ़ीसर के साथ उसका ब्याह करने का इरादा है।"

पटवारी ने प्रस्तुत वार्ता का एक ही पहलू लिया और कहा—"मुझे आसार अच्छे नहीं लगते। छोटी कौमों में संगठन हो रहा है, और बड़ी कौमों में द्वेष बढ़ रहा है। ऐसे काम नहीं चलेगा। मजदूर काम करना छोड़ देंगे।"

लाला ने कहा—"फिर पायेंगे क्या? करेंगे, तो खायेंगे, नहीं तो भूखों मरेंगे!"

ज़मींदार ने कहा—"हाँ पटवारी, यह तो दोनों के स्वार्थ की बात है। उनका स्वार्थ भी बड़ा है। रोटी-कपड़ा सभी को चाहिए। पैसा चाहिए।"

यों बात चली और बिना किसी निर्णय पर पहुँचे, बीच में रह गई।

वैसे, इस प्रकार, गाँव में आये दिन आग को किरोदा जा रहा था। दोनों ओर शिकायतें बढ़ रही थीं, द्वेष और अहंकार अपना काम कर रहा था। गाँव में कहने को स्त्री-पुरुषों का एक परिवार था, परन्तु उस परिवार के सभी सदस्य

पृथक्-पृथक् थे। वे सभी अलग-अलग रास्तों पर बढ़े जा रहे थे।

ऐसे ही दुर्बोध और कभी न देखे-सुने समय में, एक दिन, जब हरदेवा गाँव में आया, तो अपने एक खेत पर घूमते हुए, उसने अचानक ही, सामने से आती हुई माला को देखा। जब वह पास आई, तो अपेक्षाकृत माला शरमा गई। वह हरदेवा के सामने पहुँचते ही, बचकर निकल जाने लगी।

तभी हरदेवा ने कहा—"कहो, माला देवी, अच्छी तो हो! तुम्हारी पढ़ाई का क्या हाल है?"

माला ने कहा—"अपने खेत की तरफ़ जा रही थी।" वह बोली—"जी, पढ़ाई ठीक चल रही है मेरी!"

हरदेवा बोला—"खुशी की बात है कि तुम पढ़ रही हो। अच्छे नम्बरों से पास हो रही हो। यह भी सौभाग्य है तुम्हारा कि अपने माता-पिता की सहमति भी पा सकी हो।"

माला ने कहा—"यह काम इतना मेरे पिता का नहीं, जितना माँ का है और मेरे मामा का है। मेरे मामा सरकार के एक बड़े दफ़्तर में आफ़ीसर हैं। हज़ार रुपया प्रतिमास पाते हैं। वे ही मुझे खर्चा देते हैं।"

हरदेवा—"हाँ, हाँ, यह भी मैंने सुना था। बहुत सुन्दर। तुम भाग्यशालिनी हो। पिछले जन्म में अच्छे पुण्य करके आई हो।"

माला हँसी, वह अपने मधुर होठों से मुस्करा दी। किन्तु तत्क्षण ही, उसके हृदय की आग जैसे हवा का झोंका खाकर उभर आई। वह बोली—"बाबू, आप देखते तो हैं, इस गाँव की ज़िन्दगी को! कितनी गन्दगी है, कितनी सड़न है, यहाँ के समाज में! भला निर्धन और छोटी कौमों का यहाँ क्या मोल? जैसे पैर की जूती हैं, सब!" उसने कहा—"लोग कहते हैं कि भगवान है पर मैं सोचती हूँ निर्बल और निर्धन का भगवान नहीं। ऐसे समाज को इस धरती पर रहने का भी अधिकार नहीं। खेत के दानों का भी नहीं···।"

हरदेवा बोला—"माला देवी, अधिकार लिया जाता है, देता कोई नहीं। बड़ी कौमों के पास जो कुछ है, वह भी लिया गया है। कहूँ कि छीना गया है। उन लोगों में वे भी हैं कि जिन्हें ग़रीब बनाकर, अपना पेट भरा गया है।" उसने कहा—"देखती हो मुझे, मैं भी ग़रीब बाप का बेटा हूँ। मज़दूरी करता हूँ और पढ़ता हूँ। जो समर्थ हैं, उनकी दृष्टि में मैं भी शूद्र हूँ···अछूत हूँ। समझती हो न, निर्धनता इस जगत का सबसे बड़ा अभिशाप है। परन्तु जो स्वयं अपने को निर्बल और हीन मानता है, वह कायर है, अभिशापित है। और यह तो तुमने भी पढ़ा होगा कि यह जीवन एक साधना है,···योग की पूर्ति। जो

ऐसा करता है, वही जीवन पाता है, उसका आनन्द भोगता है। वही इन्सान जीवन की सिद्धि की पूर्णता के अर्थ समझता है।"]

किन्तु माला के मन में उस समय जैसे केवल मनुष्य की विवशता की बात थी—गाँव के लोगों की बात ! अतएव, वह उसी को लेकर बोली—"हरदेव बाबू, अभी परसों की बात है कि हमारी जाति की एक औरत दो घण्टे तक कुएँ पर एक घड़ा पानी लेने के लिए खड़ी रही, पर किसी ने भी पानी नहीं दिया। सभी ने इन्कार कर दिया। तब कोस भर जाकर वह जंगल से पानी लाई। बताइये, यह अमानुषिकता नहीं तो क्या है ! क्या ऐसा ही इन इन्सानों का समाज है ! सच, ऐसे तो इस इन्सान की जिन्दगी बेकार है। मेरा मन करता है कि ऐसे गाँव में आग लगा दी जाय। सब को भस्म कर दिया जाय। हमारी जाति के लोग कहते हैं कि यह गाँव छोड़ दिया जाय। जब पेट भरना है, तो कहीं अन्यत्र जाकर भरा जाय।"

हरदेवा के मन की स्थिति उस समय सचमुच ही दयनीय थी। उसके पास ऐसा कोई भी शब्द नहीं था कि जो माला से कहे और उसे शान्ति दे, उसे समझा सके। और जो माला के मन की और उसके जाति-भाइयों की समस्या थी, वह बातों से तो सुलझने वाली थी नहीं; उसके लिए कर्म चाहिए। उन्हें वस्तु की दरकार थी, केवल सहानुभूति की नहीं। निदान, हरदेवा ने साँस भरी और कहा—"माला देवी, यह अवस्था आज की नहीं है, पुरानी है। जो हमारे शत्रु थे, दुर्भाग्य से उन्होंने और बढ़ा दी है। वैसे मेरा मत यह भी है कि यहाँ जाति-वाद का विष इस प्रकार नहीं फैला था। इस देश की कमर तोड़ने के लिए ही, वह फैलाया गया। यह विदेशियों का काम था। इस प्रकार जातियों के मध्य खाई चौड़ी करके उन्हें अपना स्वार्थ पूरा करना था !"

माला की दृष्टि उस समय आकाश की ओर उठी थी। बात सुनी, तो वह हरदेवा की ओर देखकर उदास भाव से बोली—"शायद यही सत्य होगा !"

हरदेवा ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा—"नहीं, यही था !"

माला अपनी मधुर आँखों से हँसी—"हाँ, हाँ, यही !" किन्तु तत्क्षण ही उसने गम्भीर बनकर कहा—"हरदेव बाबू, वस्तुस्थिति भले ही यह हो, पर यह भी सत्य था कि बड़े लोगों ने अपने छोटे भाइयों का सदा शोषण किया ! आर्थिक दृष्टि से तो उन्हें दास बनाया ही; मानसिक, शारीरिक और आत्मिक दृष्टि से भी पंगु कर दिया। हाय ! कैसी विवशता है कि छोटी कौमों को कभी प्रकाश नहीं मिला, आत्मिक ज्ञान भी नहीं !"

यह सुन हरदेवा मुस्कराया। वह कुछ और माला के निकट हो गया।

सरस भाव से बोला—"तो तुम्हें गुस्सा है। बोलो, क्या तुम्हारे मन में कोई प्रतिकार का भाव है।" उसने कहा—"माला देवी, इस देश का समूचा समाज अँधेरे में पड़ा है। पथ से भटक गया है। इसे दिशा चाहिए।"

उस समय माला की उदास आँखों में चमक पैदा हुई। उसे कुछ प्रफुल्लता भी अनुभव हुई। वह हरदेवा की ओर देख, सरस भाव से मुस्करा कर रह गई। उसके गुलावी गालों पर लाली दौड़ गई।

किन्तु हरदेवा बोला—"यह जगत् भगवान का है। मनुष्य यहाँ आकर विविध प्रकार के खेल रचता है। एक शब्द में कहूँ तो अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखाता है। उत्थान-पतन का कर्म मनुष्य इसी के अन्तर्गत कर पाता है।"

एकाएक माला ने कहा—"तब भगवान क्या···उसका अस्तित्व···?"

हरदेवा बोला—"यह विषय दार्शनिकों का है, माला देवी! हमारा नहीं। हम तो अभी छोटी समस्याओं में बँधे हैं···यह रोटी, यह कपड़ा, यह हमारी जाति ···समझती हो न, इन समस्याओं ने ही हमारा मस्तिष्क विकृत बना रखा है। भला इस अवस्था में उदार और सहानुभूतिपूर्ण मनुष्य कहाँ! ज़मीन के छोटे-से टुकड़े पर खड़ा हुआ मनुष्य दुनिया को कैसे नाप सकता है। भौतिक पदार्थों में ईश्वरत्व कहाँ!"

"पर मेहतो, भला कितना बड़ा अन्तर है कि कहाँ डोम जाति के लोग और कहाँ ठाकुर···सभी साधनों से पूर्ण समाज···!"

"ओह, तुम बहुत अनमोल बात कह रही हो, माला देवी! मैं समझा, तुम्हारे मन में रोष है। प्रतिशोध की भावना है।" हरदेवा बोला—"एक बात कहता हूँ तुमसे, इसे अपने जाति-भाइयों से भी कहना। तुम्हारे समान वे सब अपना रोष यदि मेरा खून लेकर शान्त कर सकते हैं, तो करें। मैं प्रस्तुत हूँ। देखता हूँ तुम भी अँधेरे में हो।"

माला जैसे ज़मीन में गड़ गई। वह बरबस ही, आतुर बन कर बोली—"न, न, मेहतो! मैं कहती हूँ, लोग इस प्रकार कैसे जीवित रहेंगे। क्या भगवान को भी समझेंगे।" उसने कहा—"ठाकुर लोग तुम्हारे भी खिलाफ़ हो गये हैं। मेरा बापू कहता था कि तुमने उस दिन चौपाल में हमारी जाति की तरफ़दारी की, तो उससे कुछ लोग बिगड़े हुए हैं। भला हमारे लिए तुम्हें क्यों शत्रुता पैदा करनी चाहिए? सब की तरह तुम्हें भी अपने प्राणों से मोह करना चाहिए।"

बात सुनी, तो हरदेवा तुरन्त बोल पड़ा—"मैं इसकी चिन्ता नहीं करता, माला देवी! मैं भगवान को मानता हूँ। यह जीवन भी उसी का समझता हूँ।" उसने कहा—"वह मेरे कर्त्तव्य की बात थी। जो बात सत्य दिखाई दी, वही मैंने

कही थी। मुझे उससे डरने की आवश्यकता नहीं।"

माला मुस्कराई—"तुम धन्य हो, हरदेव बाबू! सचमुच तुम अपूर्व हो।"

जल्दी से हरदेवा ने कहा—"मैं अपने जीवन में यही मानता हूँ। यही अनुभव करता हूँ।"

माला बोली—"मैं एक बार तुम्हारे कालेज में गई थी। वहाँ तुम्हारा भाषण सुना था। वह मुझे बहुत पसन्द आया था। तभी मैंने तुम्हें प्रथम बार देखा था। वहीं पर किसी ने बताया था कि तुम मेरे ही गाँव के निवासी हो।"

हरदेवा हँस दिया—"तुम्हारा पिता कल्लू मुझे देर से जानता है। उससे ही तुम्हें मालूम हो जाता कि मैं ग़रीब माँ-बाप का लड़का हूँ। मैं स्वयं गाँव में बहुत कम लोगों से बोल पाता हूँ।"

माला ने कहा—"तुम ग़रीब नहीं हो, हरदेव बाबू! हृदय के धनी हो। तुममें मनुष्यता है, चेतना है, शक्ति है। बताइये, इसके अतिरिक्त मनुष्य को और क्या चाहिए? क्या यह धन छोटा है?"

हरदेवा हँस दिया। फिर तुरन्त ही वह गम्भीर हो गया। उसने कहा—"गाँव के नाते से हम सभी बँधे हैं, माला जी! कोई-न-कोई सम्बन्ध रखते हैं। मेरे योग्य कोई काम हो तो बताना। उस दिन छोटू और उसकी पत्नी के साथ जो कुछ हुआ, उसका मुझे देर तक ध्यान रहा। सुगमता से नहीं भूल सका।" साँस भर कर वह बोला—"वैसे लोग अब समझने लगे हैं। समय भी आ गया है। जो पुराना है, उसे अब कौन देखता है। यह इन्सान का समाज उसे भूलता जा रहा है। जिसमें सड़न है, बदबू उठ रही है, उसे समाज के शरीर से काट देना ही हितकर है। आज यही हो रहा है। देखती हो न, समाज रूपी शरीर का आपरेशन किया जा रहा है। सरकार ने भी उसी पर बल दिया है।"

माला ने भी साँस भरी और कहा—"मुझे सूझ नहीं पड़ता कि क्या होगा। अभी तो समाज सड़ रहा है···मर रहा है! लोग भगवान और भावना की बात करते हैं, पर मैं सोचती हूँ, जब इस समाज का प्राण निकल जायेगा, तब भगवान आये तो क्या! उस अवस्था में गाँव वालों को समझ आई तो क्या!" उसने कहा—"पता है, पिछले दिनों जब मेरी माँ बीमार पड़ी, तो गाँव का वैद्य टस-से-मस नहीं हुआ। रुपया लेकर भी घर नहीं गया। माँ की नब्ज़ पकड़ने के लिए तैयार नहीं हो सका। साफ़ कह दिया कि मैं शाम के वक्त रोगी को नहीं छू सकूँगा, नहाना पड़ेगा। बस, दवा दे दी और अपने घर बैठा रहा। जब कस्बे से इसाई डाक्टर आया, तो उसने देखा भी, दवा भी दी। बेचारा रात के बारह बजे लौट कर गया। बापू उसे फ़ीस देने लगा, तो वापिस कर गया।"

हरदेवा उस समय धरती पर खड़ा जैसे गड़ा जा रहा था। मानो धरती हिल रही थी। हरदेवा उसमें समा जाना चाहता था।

माला ने कहा—"भला, गाँव वाले क्या भगवान को मानते हैं, धर्म को समझते हैं ? मैं तो कहती हूँ कि सभी पाप का पेट भरते हैं।"

गम्भीर बनकर हरदेवा बोला—'गाँव के लोग कुछ नहीं मानते, माला देवी ! बस, पैसा चाहते हैं। अपने स्वार्थ को बड़ा मानते हैं। देखती नहीं हो, सभी अँधेरे में पड़े हैं। खूनी जानवर की तरह इन्सान की हड्डियों को चबा जाना चाहते हैं। मैं स्वयं अचम्भित हूँ कि ये लोग इन्सान कैसे कहलाते हैं !"

उसी समय माला जैसे चौंक गई। जैसे उसमें भी आत्म-हीनता की भावना जागृत हुई। उसने देखा कि दूरी पर गाँव का रलियाराम कन्धे पर लाठी रखे, उधर ही आ रहा है। माला को देख, वह किंचित् हँस दिया। उसी प्रकार हँसता हुआ वह हरदेवा के निकट आ गया। उसी से अल्हड़ भाव में बोला—"अछूतों के उद्धार की बात कर रहे हो, हरदेवा मेहतो ! अच्छा, अच्छा !" और वह ठहाका मार कर हँस पड़ा। तभी पास से निकलता हुआ, माला को लक्ष्य कर आगे बढ़ गया।

आठवीं बात

यों भी, स्वभाव से रलियाराम एक विचित्र व्यक्ति था। परिस्थितियों के झंझावात में पड़ कर वह कहीं-से-कहीं पहुँच गया था। वह जहाँ गाँव के लिए एक समस्या था, वहाँ अपने लिए भी कम कठोर नहीं था। जब से पार्वती उसके साथ जाकर ग़ायब हुई, तभी से, स्वयं रमिया और जग्गू के लिए भी, वह एक रहस्यपूर्ण इन्सान सिद्ध हो रहा था। इस बीच में रमिया ने बहुत चाहा कि रलिया साफ़ बता दे कि पार्वती सचमुच कूएँ में डूब कर मर गई अथवा उसी ने कहीं छिपा दी। रमिया को इस बात पर भरोसा था कि पार्वती डूब कर नहीं मरी। उससे रलिया ने पार्वती की बात को छिपाया है और उसे धोखे में रखा है, यह बात बार-बार रमिया का मन कह रहा था।

जसपत उन दिनों अधिक बेचैन था। वह अनुभव कर रहा था कि जैसे उसके चारों ओर हा-हाकार उठ रहा है। वह न किसी से बोलता था, न किसी के पास उठता-बैठता था। लगता था कि वह व्यक्ति ज़िन्दगी की तेज धारा में निःशक्त भाव से बहा जा रहा था।

किन्तु रलिया बेफ़िक्र था। वह दोनों समय भंग पीता और यार-दोस्तों में बैठकर हँसता-बोलता हुआ दिन बिता देता। लगता यह था कि रलिया के प्रति जिस प्रकार गाँव उदासीन था, उसी के समान, वह स्वयं भी अपने प्रति उपेक्षित बनने का प्रदर्शन करता था। परन्तु वास्तविकता कुछ और थी। सचाई यह थी कि वह अपने प्रति पूर्ण रूप से जागरूक था। इसी से, जब कोई उसके चरित्र का विश्लेषण करता, तो वह सहज भाव से मुस्करा देता। वह कहने वालों की बात का विरोध भी न करता। परन्तु यह लगता था कि जैसे रलिया ने अपने जीवन का संकल्प समझ लिया था। उसे प्राप्त करने के लिए भी कृत-संकल्प था। गाँव के लोग और पड़ोसी, इस बात को जानते थे कि रलिया जो कुछ है, उनके सामने है। वह न शिक्षित है, न सभ्य है। मानों नवयुग की सभी विशेषताओं की ओर से आँख मूंद कर, वह केवल उसके दोषों का ही प्रतिनिधित्व कर रहा है। जैसे वह पाप की पोट बन कर उस गाँव में आ पड़ा है।

कदाचित् यही कारण था कि गाँव का कोई भी व्यक्ति रलिया से मेल न बढ़ाता। केवल गाँव के कुछ युवकों का समुदाय ही उसका सखा था। गाँव की स्त्रियाँ भी उससे दूर रहतीं। बहू-बेटियाँ उसे गुण्डा मानतीं। किन्तु एक रमिया ऐसी थी कि जो रलिया से बोलती थी और अपने घर बैठाती थी। लेकिन जब पार्वती की बात उसके सामने आई, तो रमिया भी उसे ज़हरीला नाग समझने लगी। वह कब फुफकारे और कब काट ले, ऐसा भय भी वह अपने मानस में आये दिन उठता हुआ पाने लगी।

कदाचित् यही कारण था कि रमिया एकाएक ही इस निश्चय पर टिक गई कि रलिया ही पार्वती को फ़ुसला कर ले गया है। यह दुष्ट उसे या तो बेच आया है, या कहीं छिपा आया है। किन्तु इसी बात पर जग्गू ने रमिया से कसम ले ली कि वह इस बात को अपने पेट में रखेगी। कहीं कुछ कहा, तो अपने ऊपर भी मुसीबत ले लेगी। वह भी षड्यन्त्र की भागीदार बनेगी।

और रमिया के लिए यह बड़ी कठिन बात थी। अपने मन में किसी बात को छिपाये रखना, उसकी शक्ति से बाहर था। कई बार उसके मन में आया कि रलिया की करतूत सभी को बता दे। उसकी कच्ची हँडिया को फोड़ दे। उस पाप को छितरा दे। वह गाँव के बच्चे-बच्चे को बता दे कि देखो, इस रलिया में कितनी सड़न है, कैसी राक्षसी और भयावनी सूरत······पर वह मौन थी जैसे डरी हुई थी।

और सदा की भाँति रलियाराम तब भी रमिया के पास आता, हँसता और बोल जाता। रमिया उसकी प्रत्येक गति-विधि को घूरती और समझने का प्रयत्न करती। मानो वह उसकी दृष्टि में भयंकर जानवर था। वह ख़ूनी और लुटेरा था। लेकिन सचाई यह थी कि रलिया न ख़ूनी था, न लुटेरा था। वह केवल आदमी था। शरीर से जवान था। लड़ाकू स्वभाव का था और अल्हड़ था। वह पूर्ण निर्द्वन्द्व बना था। न्याय का अधिक पक्ष लेता था। जिससे कुछ खाया जाता, तुरंत खा लेता। रलिया परिस्थितिवश स्वभाव का बुरा हो सकता था, परन्तु नस्ल का अच्छा था। उसके हृदय में दया थी, ममता थी। जब पार्वती ने रोकर उससे सहायता माँगी, उससे अपने पिता की दुर्भावना व्यक्त की, तो वह एकान्त रूप से उसकी सहायता करने के लिए उद्यत हो गया। यही उसने रमिया से कहा था।

ऐसे ही समय, एक दिन, एकाएक ही, गाँव चौंक गया। रमिया का माथा भी ठनक गया। जसपत गिरफ़्तार कर लिया गया। इतना देख-सुनते ही, उसी समय, रमिया ने घर में आये रलिया को घूरा और तड़प कर कहा—"अरे कम्बख़्त!

अब भी छिपाता है ! मैं नहीं जानती थी कि तेरा मन इतना गहरा है···सच, तू तो कालकूट बना है !"

सुना, तो रलिया जैसे अल्हड़ भाव से हँस पड़ा। जो कुछ हुआ, मानो उसके लिए कुछ नहीं था। वह स्वाभाविक था।

रमिया ने कहा—"देख, अब भी बता दे। जरूर, पार्वती डूब मरी है। तूने मार दी है। उसी के कारण तो···"

रलिया ने कहा—"भाभी, तेरी बुद्धि खो चुकी है। तू चुप रह ! तमाशा देखती रह।"

"अरे, कसाई !" रमिया ने दाँत पीसे—"बता तो, यह जसपत क्यों पकड़ा जा रहा है ! किस दोष पर ? क्या पुलिस को पार्वती की लाश मिली है ?"

रलिया ने फिर भी ऊपरी भाव से बात को उड़ाने के अभिप्राय से कह दिया—"मैं नहीं जानता।"

और जसपत को थाने के सिपाही साथ ले गये। वह थाने पहुँच गया। उसी दिन गाँव को मालूम हो गया कि बेटी ने बाप पर मुकदमा किया है। ससुर भी पकड़ा गया है। एकाएक, गाँव में यह बात फैली, तो प्रश्न उठा, क्या ऐसा पार्वती ने किया ? किस प्रकार ? बाप-रे-बाप ! इतनी शहज़ोर निकली, पार्वती ! यहाँ तो लगती थी, बड़ी सीधी···भोली-भाली···!

उसी दिन की सन्ध्या में जब रलिया भंग का गोला चढ़ाये, लाठी हाथ में पकड़े रमिया के घर पहुँचा, तो रमिया गाय का दूध निकाल कर, उसे गरम कर रही थी। जग्गू चारपाई पर बैठा तमाखू पी रहा था। घर में आते ही, रलिया ने खाँसा और रमिया की ओर देखने लगा। उसकी आँखों में मुस्कान थी और होठों पर हास्य। मानों वह अपने किसी उद्देश्य में सफल होकर प्रसन्न बना था। उसे कुछ मिल गया था। वह शोख भाव से हँस रहा था।

रमिया ने कहा—"यहाँ क्या कोई घूंघटवाली बैठी है जो खाँसता है। बैठ जा ! बता तो, आज इतना खुश क्यों नजर आता है ?" यह कहते हुए उसने जिज्ञासा-भाव से रलिया की ओर देखा।

रलिया बोला—"भाभी, आज तू भी कुछ प्रसन्न लगती है। लहँगा भी नया पहना है···यह छींटदार ओन्ना···।"

रमिया तुनक गई—"मरदुवे ! ले-देकर आज तो नया कपड़ा पहनने को मिला है, सो भी तेरी निगाह में खटकता है। लाकर दे दिये हैं न, तूने दस-बीस थान ! खाली बात बनाता फिरता है !"

उसी समय जग्गू ने तमाखू भरा और नारियल रलिया की ओर बढ़ा दिया।

उसमें घूँट भर कर रलिया बोला—"भाभी, आज तो मन करता है कि दूध पीने को मिले। पर तू क्या दूध देगी! बस, भैया जग्गू को दूध पिला कर मोटा करना चाहती है। पता नहीं, इस जन्म में तू मुझ पर भी कभी खुश होगी या नहीं। सच, मुझे यही चिन्ता है। इस गाँव में केवल एक तुझसे डर लगता है। देखता हूँ कि तू मेरी भाभी भी है और माँ भी···।"

लेकिन तभी, रमिया के मन में पार्वती की बात उठ आई। जब उसने रलिया की बात सुनी, तो हँसी। आँखों से मुसकाई। [वह बोली—"पर आज मैं तुझ पर नाराज़ नहीं हूँ रे, रलियाराम! कल तक थी। तुझे डाकू और खूनी भी समझने लगी थी।"

रलिया ने सुना और ठहाका मार कर हँस दिया।

रमिया बोली—"पर मैं यह नहीं सोच पाती कि पार्वती ने इतना बड़ा पग कैसे उठाया? उसे किसने सहारा दिया?"

रलिया ने कहा—"चलो, तुम्हारा शक तो मिट गया। जसपत भी यही सोचने लगा था। बहुतों से उसने कहा था कि मैं रलिया को ज़िन्दा नहीं छोड़ूँगा। इसी से उसने मुझसे बोलना बन्द कर दिया था। शायद मेरी ताक में भी था।"

रमिया ने कहा—"तुझ पर गाँव भर को सन्देह था।"

जग्गू ने कहा—"यह अच्छा हुआ, रलियाराम! सन्देह का पर्दा हट गया। तू बच गया। तेरे सिर से पाप का बोझ भी उतर गया।"

उसी समय, रमिया ने एक गिलास दूध रलिया की ओर बढ़ाया। उसने कहा—"आज तूने भंग भी अधिक पी है। बोल नहीं पा रहा है। बता तो, यह भी क्या अच्छा है!"

रलिया ने कहा—"भाभी, आज मुझे खुशी है। भंग की खुश्की से गला सूख रहा है।" इतना कहते हुए उसने दूध का गिलास पकड़ लिया।

रमिया ने कहा—"रलियाराम, सच बात तो यह है कि मैं समझती थी, पार्वती को तूने छिपा दिया···तूने ही···!"

दूध पीकर रलिया ने कहा—"भाभी, तुझसे कुछ न छिपाऊँगा। अब बताता हूँ कि पार्वती को मैं ही अपने एक सम्बन्धी के यहाँ छोड़ आया था। उसके कई बच्चे हैं। बीबी है। वह एक थाने में सिपाही है।" रलिया बोला—"भाभी, जब पार्वती के ससुर ने उसे फटकार दिया, घर में नहीं घुसने दिया, तो तभी मेरे मन में आया था कि उस बूढ़े का गला घोंट दूँ। पर मैं तो पार्वती की समस्या लेकर गया था। पार्वती लौटी, तो रोती हुई! उसने आते ही कहा—'रलिया, तू मुझे मार दे!' तब मैंने उससे कहा—'तूने मुझ पर भरोसा किया है,

तो समझ ले, मैं तेरे लिए अपने प्राण दे दूंगा।' फिर मैं उसे अपने सम्बन्धी के यहाँ ले गया। उसने ही अदालत में पार्वती से अर्ज़ी दिलवा दी। बाप और ससुर के वारण्ट कट गये। अब देखना आगे क्या-क्या होगा।"

बात सुनी तो एकाएक जग्गू ने कहा—"वाह, रलियाराम!"

रमिया ने कहा—"मुझे तो तू ऐसा नहीं लगता था।"

रलिया बोला—"भाभी, वह समय ऐसा ही था। मेरे दुश्मन चारों ओर खड़े थे। मैं सतर्क था। पर अभी इस बात को फोड़ मत देना। किसी से कहोगी, तो जसपत पूर्णरूप से मेरा दुश्मन बन जायेगा।"

जग्गू ने कहा—"नहीं, नहीं!"

रमिया बोली—"रलियाराम, यह तूने भला काम किया। चलो, इस तरह पार्वती का उद्धार हो जायगा। समझ ले, तने इस जन्म में एक पुण्य का काम किया। गंगा में गोता मार लिया।"

रलिया ने बात सुनी तो वह गम्भीर बन गया। बोला—"न, भाभी! पार्वती का भाग्य अभी मँझधार में पड़ा है। उसका ससुर भी कसाई है। वह क्या सुगमता से उसे अपने घर में रखेगा!"

जग्गू ने कहा—"वह रखेगा और हाथ जोड़ेगा। उसकी जमीन का अधिकार पार्वती को मिलेगा।"

रलिया बोला—"उस दिन पार्वती की बुरी दशा थी। सचमुच, वह मरना चाहती थी। मैं साथ न होता, तो मर जाती।" उसने कहा—"उस दिन ही मैंने समझा कि[नारी सचमुच ही अबला है, दीन है! मनुष्य की कठोरता ने औरत का सभी कुछ हरण किया है।"]

रमिया ने कहा—"भैया, बाप के कारण पार्वती ठगी गई। तुझे पता है कि वह गर्भवती थी।" वह बोली—"तू सच कहता है रलियाराम, औरत की दशा कभी अच्छी नहीं रही। पुरुष द्वारा सदा सताई गई।"

रलिया उस समय गम्भीर था। उसके माथे पर बल पड़े थे, भवें चढ़ी थीं।

जग्गू ने कहा—"बेशक, यही बात है। आदमी घमण्डी है...पत्थर है!"

रमिया ने कहा—"आदमी जल्लाद है! जानवर है!"

बात सुनकर, जग्गू हँसा तो नहीं, पर रलिया की ओर देखने लगा।

रलिया ने कहा—"भाभी ठीक कहती है। मुझे भी आदमी यही लगता है। आदमी क्या कभी आदमी बना है!"

उसी समय रमिया ने साँस भरी और कहा—"और भी कुछ सुनता है? देखता है?"

रलिया ने कहा—"मैं सब देखता हूँ, भाभी ! खूब सुनता हूँ। याद रख, यह गाँव ऐसे ही मरेगा। आजकल पटवारी, जमींदार जोधराम और लाला का एक गुट बना है। उन्होंने सभी को फुसलाना शुरू कर रखा है। मुझसे भी कहा है। भाभी, लाला तुम पर भी दावा कर रहा है।"

रमिया ने कहा—"कर दे दावा ! रुपया होगा तो दिया जायेगा।"

रलिया ने कहा—"पटवारी और जमींदार ने उसे भड़काया है। तुमने उस दिन छोटू डोम की औरत का पक्ष लिया, तो यही उन लोगों को कलक रहा है। जैसे साँप का फन मसला गया और वह फूत्कार कर रहा है !"

रमिया ने कहा—"मैं नहीं डरती। करे, सो भरे ! भगवान मालिक है। वही न्याय करेगा।"

रलिया ने कहा—"भाभी, कुछ नहीं होगा। वैसे गाँव के लड़कों को भी भड़काया जा रहा है। पर मैंने तो उनसे कह दिया है कि जमाने को देखो। बाप-दादों की पुरानी लीक पर चलोगे तो ठोकर खाओगे। नया रास्ता चुनो। नया ज़माना देखो। देखना तुम, कोई भी इन लोगों का साथ नहीं देगा। पटवारी अपना उल्लू सीधा करता है। वह तो चाहता है कि गाँव में झगड़ा बढ़े। लोग कचहरी जायें। कुछ उसका भी दाल-दलिया बने। मैंने हरदेवा को वचन दे दिया है कि उसका साथ दूँगा। समय पर मैदान में कूदूँगा। अभी तो मैं इन लोगों से मिल कर रहूँगा और इनके कारनामों को समझूँगा। यों, सहज में, मैं भी देख लूँगा कि इन्सान कैसा पत्थर है···खूनी भेड़िया···!"

हँसकर जग्गू ने कहा—"तो तू उस्ताद हो गया है, रे, रलियाराम !"

रलिया बोला—"घी टेढ़ी उँगली से निकलता है, भैया ! जानते हो, पार्वती के लिए मेरे पचास रुपये लग गये हैं। वह मैंने लाला से लिये हैं। वहाँ पहुँचाये हैं। इस बीच में मेरा एक पैर यहाँ रहा और एक वहाँ। मैंने कोशिश यह की है कि कोई यह न जान पाये कि रलिया इस बीच बाहर अधिक रहा। कोई साज़िश करता रहा। सच जानो, मैं बीस-बीस कोस पैदल चला हूँ। कहीं रेल में और कहीं नाव में। अब तो मैं तन, मन और धन से पार्वती के लिए लग गया हूँ। आज भी सोचता हूँ कि ऐसा भाव मेरे मन में किस प्रकार आ गया···सच, मैं तो अपने-आप ही बदल गया···इस भाभी ने बदल दिया···"

रमिया बोली—"पार्वती की आत्मा तुझे आशीष देगी, रलियाराम !"

रलिया बोला—"सुना तुमने, पार्वती ने अदालत में लिखकर दे दिया है कि उसके बाप जसपत ने उसे बेचा और उसके ससुर ने खरीदा। अब बाप दूसरी जगह उसे बेचना चाहता है। ससुर उसे रखना नहीं चाहता।"

हर्षित होकर रमिया बोली—"खूब किया तूने। एक ही चाकू से दोनों की नाक कटेगी।"

रलिया ने कहा—"अभी नाक तो कटेगी ही, सजा भी होगी। बिरादरी में हँसी होगी। मलिकपुर गाँव में ऐसे लोग रहते हैं—यह बात भी दूर-दूर तक जायेगी।" वह बोला—"मैं अगर चाहूँ तो गाँव के पंचों को भी पकड़वा सकता हूँ। पार्वती के ससुर ने जब यहाँ आकर फ़रियाद की तो किसी के भी कान पर जूँ तक नहीं रेंगी। सभी ने कानों में तेल डाल लिया। उस बेचारे की बात एक कान से सुनी और दूसरे से निकाल दी। जसपत के पाप पर सभी ने पर्दा डाला। उसका पक्ष सबल रहा। लोगों ने पाप का समर्थन किया!"

जग्गू ने कहा—"सभी चोर और डाकू हैं! सच बात कोई नहीं कहता। बेचारा बूढ़ा कई दिन तक टक्कर मारता रहा। वह तो साफ़-साफ़ कह गया कि इस गाँव में ईमानदार नहीं···सत्य कहने वाले नहीं···!"

रलिया ने चलने के लिए लाठी उठा ली और कहा—"इस गाँव के लोग डाकू और चोर ही होते तो ठीक था! पर यहाँ के लोग तो शरीफ़ बनते हैं। अपने को सूर्यवंशी ठाकुर कहते हैं—राजा रामचन्द्र की सन्तान बताते हैं!" यह कहते हुए वह ठहाका मार कर हँस दिया।

किन्तु रमिया ने चिढ़कर कहा—"अरे, धूल पड़े इन लोगों पर! पूरे कसाई हैं—दोगले हैं! यहाँ न किसी की जात का भरोसा है, न बात का।"

जग्गू ने कहा—"यह पटवारी भी विष के बीज बोता है, पूरा जालसाज है! यही झगड़ा कराता है।"

रलिया उठ खड़ा हुआ और बोला—"समय आ रहा है कि जब इसका भी बिस्तर गोल होगा। जमींदारी गई, तो क्या अब यह रह सकेगा!"

रमिया बोली—"अभी तो मौज मारता है। पूरा नवाब बनकर रहता है। कहने को तीस रुपया तनख्वाह है, पर उसके घर में क्या दो सौ रुपये से कम प्रति-मास खर्च होता है!" उसने कहा—"चाहे किसी और के घर भैंस तो क्या, उसका बच्चा भी न हो, पर आज भी पटवारी के दरवाजे पर दो भैंसें बंधी हैं। नौकर रहता है। भला कोई है देखने वाला कि इतना बोझ वह कैसे उठाता है! रुपया कहाँ से पाता है! मैं कहती हूँ कि वह साँप बनकर गाँव के बच्चे-बच्चे को डँसता है···उसके जहरीले दाँतों में इन्सान का खून लगा है!"

रलिया ने अपनी लाठी को जमीन पर मारा और कहा—"भाभी, इस पटवारी ने गाँव खोखला कर दिया है! सभी को मुकदमेबाज बना दिया। जिसे देखो, वही अब रोज थाने और कचहरी जाता है। मेहनत की कमाई वहाँ नहर

वालों को दे आता है। पटवारी और लाला का खूब गठ-जोड़ है। पटवारी लाला को आगे बढ़ाता है और उसकी आड़ लेकर खुद भी खाता है।" यह कहते हुए रलिया चला गया।

उसी समय रमिया ने साँस छोड़ी और जग्गू की ओर देखा। जग्गू ने कहा—"तो यह कहो कि इस रलिया ने वह काम किया कि जो दूसरा नहीं कर सकता था। बड़ा छुपा रुस्तम निकला! एक तीर से दो निशाने मार बैठा। बहादुर आदमी सिद्ध हुआ।"

रमिया ने कहा—"चलो, पार्वती का उद्धार हो जायेगा। वह अपने घर में पहुँच जायेगी।"

जग्गू ने कहा—"उसकी ससुराल वाले भी अच्छे आदमी नहीं हैं। कहीं उसे मार न दें। नदी में न फेंक दें।"

रमिया ने कहा—"बच्चों का खेल नहीं है, मारना! अब वे सब बँध गये हैं। मामला अदालत में पहुँच गया है।"

जग्गू ने कहा—"पर पार्वती का यहाँ आना भी रुक गया। बाप का द्वार बन्द हो गया।"

रमिया ने चिढ़कर कहा—"ऐसे बाप के घर न आये, तो अच्छा!"

उसी समय जग्गू के मन में अपनी बात आई—लाला के रुपयों की बात। वह उसी को लेकर, जब रमिया से उल्लेख करने को उद्यत हुआ, तो उसने बर-बस ही, बात टाल दी और कह दिया—"अब डरने से क्या! ओखली में सिर दे दिया तो मूसल से क्या डरना···जिन्दगी है तो सभी देखना पड़ेगा······!"

नवीं बात

एकाएक, जैसे परिस्थितिवश ही, माला की जिन्दगी में तूफ़ान आ गया। वह सोच नहीं पाती थी कि किस तरह दिल में आई बात को निकाल दे और अपनी जातिगत स्थिति से बाहर की वस्तु को प्राप्त करने की इच्छा न करे। हरदेवा के पास पहुँचने की उसकी एकान्त अभिलाषा थी। वह उसकी जिन्दगी में खो जाने की बात सोचती थी। किन्तु वह रास्ता सरल नहीं था। माला के समक्ष कई प्रकार की रुकावटें थीं। वह अत्यन्त छोटी जाति में पैदा हुई थी और हरदेवा बड़ी जाति में—ठाकुर परिवार में! इस प्रकार वह उच्च वर्ण से सम्बन्धित था और माला निम्न वर्ण से। यह पथरीली दीवार जो उन दोनों के मध्य में खड़ी थी, माला न तोड़ सकती थी, न लांघ सकती थी। निदान, वह अपने मन के तूफ़ान को बरबस ही रोके हुए थी। जैसे वह लाचार थी! दरिया के किनारे खड़ी हुई ललचाई दृष्टि से दूसरा किनारा देख रही थी। किन्तु दरिया गहरा था। वह पार नहीं जा सकती···! लेकिन उस बार, माला के मन का तूफ़ान इतना तीव्र हुआ कि वह कांप उठी। वह उसके साथ उड़ गई। पार जाने के लिए गहरे दरिया में कूद पड़ी। लोक-लाज, धर्म-अधर्म और मान-अपमान की सभी शृङ्खलाएँ जैसे माला को रोकने में असमर्थ हो गई। पथरीली चट्टान को लांघ कर माला हरदेवा के पास पहुँचने में समर्थ बन सकी।

वह दिन का समय था भरा दोपहर था। किसान भी जंगलों से लौट आये थे। माला कालेज की छुट्टी के कारण घर पर ही थी। वह अपने घर के बाहर नीम के पेड़ तले चारपाई पर पड़ी थी। देर से पढ़कर, वह सुस्ता रही थी। उसकी परीक्षा समीप थी। तभी उसके कानों में आवाज़ पड़ी, कोई चिल्लाया—"हाय! हाय! बड़ा अन्याय हुआ! बेचारा हरदेवा···"

सुना, तो एकाएक माला चीख पड़ी—"क्या···क्या···!"

एक औरत ने उसके समीप आकर कहा—"हरदेवा मार दिया, री, माला! ठाकुरों ने उससे बदला लिया। हमारा पक्ष लेना उसकी जाति से सहन नहीं किया गया···उन अन्धों ने······!"

लेकिन उस औरत की पूरी बात माला नहीं सुन पाई। वह हवा के परों पर तैर गई। तुरन्त भाग पड़ी।

उसकी माँ ने चिल्लाया—"अरी, माला!"

बाप ने पुकारा—"सुन री, माला!"

किन्तु माला नहीं रुकी। वह नहीं मुड़ी। भागती हुई हरदेवा के घर पहुँच गई। वहाँ गाँव-भर एकत्र था। सभी के मन में हा-हाकार था। क्षोभ उठा था। परन्तु उस भीड़ को देख माला रुकी नहीं। भीड़ उसे देख, स्वयं हट गई। लोग "अरे, अरे, अन्धी है" कहते रह गये, पर माला वहाँ पहुँच ही गई जहाँ हरदेवा खून से लथपथ चारपाई पर पड़ा था। उसके बदन पर कई घाव आये थे। वह बेहोश था। मारने वाले ने निश्चय ही गंडासे से वार किया था। वहाँ जाते ही, कटी डाल की तरह माला पछाड़ खा गई और हरदेवा के पैरों में झुकती हुई करुण स्वर से कराह उठी—"अरे, हरदेवा!"

उस भीड़ में से किसी ने चिल्लाया—"लड़की, तुम लोगों के कारण ही यह काण्ड हो गया···हाय, इतना भयानक···"

सुना, तो माला चीख पड़ी—"लो, मैं भी उसी जाति की हूँ, मुझे ही मार दो। मेरा भी अन्त कर दो!" और उसने तभी आँचल में मुँह डाल, फफक कर रोना शुरू कर दिया।

उसी समय वहाँ रमिया आ गई। उसने छूटते ही कहा—"आज हरदेवा है, कल मैं, परसों तू!" वह बोली—"अरी, जानती नहीं है, यह गाँव ज़ालिमों का हो गया है! कसाई बन गये हैं, लोग!"

रमिया के पीछे-पीछे जग्गू भी दौड़ता हुआ आया और चिल्ला पड़ा—"अरी, रमिया!"

रमिया ने उसी तीव्रता से कहा—"मुझे मालूम है, यह काम किसका है। किसने इस बेचारे हरदेवा को मारा है!"

जग्गू पास आ गया। वह क्रोध में था। उसने तैड़ से रमिया के मुँह पर तमाचा मारा और फिर भभक उठा—"जान से मार दूँगा, तुझे! बोले जा रही है, बके जा रही है, कलमुँही! चण्डालिनी!"

किन्तु उसी समय रमिया का क्रोध भी फूट पड़ा। जैसे सर्पिणी का मुँह मसलने का प्रयत्न किया गया। उसने कहा—"हाँ, हाँ, कहूँगी। यह बेचारा हरदेवा······"

जग्गू उस समय सचमुच ही पागल बन गया। जैसे उसका पुरुषत्व जाग गया। उसने रमिया के सिर के बाल पकड़ लिये और दाँत किटकिटा कर

बोला—"तू मरेगी···तू मुझे भी मारेगी···!"

लेकिन रमिया वहाँ से हिली नहीं। वह जमीन पर बैठ गई। और जग्गू उसे वहाँ से हटाने पर तुला था। उसे भी कदाचित् उसी दिन क्रोध आया था। वह उसी समय पुरुष बना था। आज तक उसने रमिया की बात सुनी थी, परन्तु उस समय अपनी सुना रहा था। उस बात को सुनने के लिए रमिया को बाध्य कर रहा था। जब रमिया नहीं चली, नहीं उठी, तो जग्गू ने उसके सिर के पकड़े हुए बालों को खींचा। उसे घसीटा। रमिया चिल्ला रही थी, मैं इस गाँव को जलवा दूँगी···राख का ढेर बनवा दूँगी···यह जमींदार, यह पटवारी···यह लाला···मैं जानती हूँ, इनकी हरामजदगी···"

रमिया के भाग्य से, उसी समय वहाँ पर एक ओर से दौड़ता हुआ रलिया आ गया। उसने जग्गू को रमिया के बाल खींच कर ले जाते देखा, तो आव-देखा-न-ताव, जग्गू के हाथ पर लाठी का वार किया और चिल्ला पड़ा—"यह मेरी भी भाभी है,—माँ है, अब कुछ कहा, तो सिर फोड़ दूंगा!"

रमिया ने कहा—"आज यह कसाई बन गया है!"

रलिया बोला—"औरत को मारता है! बहादुर बना है! नीच!"

किन्तु जग्गू भी उस समय आपे में नहीं था। उसने भी चीखकर कहा—"रलिया, तू न बोल! तू रास्ते से हट जा!"

रलिया ने कहा—"ले मैं खड़ा हूँ, मुझे मार दे!"

मानो जग्गू हताश बन गया। वह निर्बुद्धि हो गया। पहाड़-सरीखा रलिया उसके और रमिया के बीच में खड़ा था। तभी वह गिड़गिड़ाया—"रलिया, मैं ग़रीब हूँ। कमज़ोर हूँ। और यह रमिया······"

रलिया ने कहा—"हाँ, ठीक है! पाप को पाप ही कहना पड़ेगा। तू कब तक छिपायेगा, कब तक डरेगा! भाभी ठीक कहती है। दो-चार लोगों ने गाँव को बिगाड़ दिया है। इस बड़े तालाब को गन्दा कर दिया है, कुछ मछलियों ने। अब उनका भी समय आ गया है। उन्हें मरना पड़ेगा। तू जा! डरता है, तो घर बैठ।" और तभी रलिया हरदेवा की चारपाई की तरफ़ बढ़ गया। उसने देखा कि उस चारपाई के पायताने हरदेवा के पैरों पर सिर रखे मान्ना बैठी है। वह सिर झुकाये है। सिरहाने हरदेवा की माँ है, बाप है। एक ओर कल्लू और उसकी औरत खड़े हैं। उसकी जाति के अन्य लोग भी खड़े हैं। उस समय यह नहीं देखा गया कि कल्लू की लड़की किस आधार पर बैठी थी और अपने किस सम्बन्ध का निर्वाह कर रही थी। वहाँ पूरा गाँव खड़ा था। तभी रलिया ने देखा कि हरदेवा मरा नहीं, जिन्दा है। साँस आ रहा है। उसी

समय कुछ सिपाहियों को लिये थानेदार आ गया। उसने तहक़ीक़ात की। सभी हक़ीक़त सुनी और लिख ली। हरदेवा पुलिस-लारी में शहर के अस्पताल भेज दिया गया। उसी दिन गाँव से सात-आठ आदमी भी गिरफ़्तार किये गये, जिनमें एक जीवन मेहतो भी था।

थानेदार लौट गया, तो सभी अपने-अपने घर चले गये। कल्लू और उसकी औरत भी माला को ले गये। घर जाकर कल्लू ने माला को सम्बोधित किया और कहा—"तुम्हारा यह काम नहीं, माला! यह अधिकार भी नहीं!" वह बोला—"बता तो, तेरे मन में क्या आया…क्यों भाग कर गई, उस हरदेवा के पास!" उसने कहा—"सभी हँस रहे थे। मेरी पगड़ी उछाल रहे थे। मेरे मुँह पर कह रहे थे, खूब पढ़ाया-लिखाया है, इस कल्लू ने अपनी लड़की को! और लड़की ने साथी भी अच्छा चुन लिया है…राम-राम!" वह अपने स्वर पर ज़ोर देकर बोला—"अब न सुनूँ यह बात…कभी देख न पाऊँ…हाँ, गँडासे से गला काट दूँगा। जिन हाथों से तू पाली-पोसी है, उन्हीं से मार दूँगा!"

अपने पिता से बात सुनी, तो माला मौन बनी रही। वह नहीं बोल सकी। वह सिर झुकाये बैठी रही। आश्चर्य कि उसकी आँखें तब भी बहती रहीं।

माँ ने कहा—"माला, तू क्यों गई थी, भाग कर! न, बेटी! ऐसे तो आग और बढ़ेगी। लोग कहेंगे कि……।"

सरस स्वर से कल्लू ने फिर कहा—"बेटी, यह बिरादरी का मामला है। बड़ी कौम वाले तो कहेंगे ही, हमारी जाति के लोग भी चुप नहीं रहेंगे। हम पर उँगली उठायेंगे।"

तभी, अपनी वेदना से भरी आँखें माला ने अपने बाप पर उठा दीं। वह तड़प कर बोली—"हरदेवा हमारी कौम का पक्ष लेने के कारण ही मारा गया है, बापू! फिर भी हम चुप रहें। वह हमारे कारण मारा जाय, तो उसके पास भी न जायें! यह मुझसे नहीं होगा। मैंने उसे समझा है। छोटू के मामले में उसका रूप देख लिया है। वह हृदय का उदार है। उसकी आत्मा में चेतना है, प्रकाश है।"

किन्तु इतना सुनकर भी, कल्लू खीज गया। उसका चेहरा पहले ही भयावना था। उसके बदन का रंग भी अत्यन्त काला था। उसकी बड़ी-बड़ी आँखें थीं। वे प्रायः सुर्ख़ रहतीं। उस समय भी वे भयावनी बनी थीं। परन्तु जब माला ने हरदेवा के घायल होने की बात कही, तो कल्लू एकाएक नहीं बोल पाया। क्योंकि जब उसने भी हरदेवा को जाकर देखा था तो सचमुच, उसका भी दिल काँप गया था। उसके मन में तभी आया कि यह लड़का नहीं बचेगा, मर

जायेगा। आज नहीं तो कल दम तोड़ देगा। इसलिए माला की बात सुनकर, उसे रोष तो आया, लेकिन उसे रोक गया। उसने अत्यन्त नम्र और सहानुभूति-पूर्ण बनकर कहा—"बेटी, कुछ नहीं कहा जा सकता! बात आपस की है, कोई और भी मामला होगा। तू तो बस इतना समझ ले कि इन ठाकुरों से हमारा मेल नहीं हो सकता।"

माला ने कहा—"नहीं, बापू! मेल जरूर होगा। हरदेवा सरीखे दो-चार हों तो इस गाँव का उद्धार हो सकता है। मैं समझती हूँ बात वही है। वह तभी से चल रही है। हरदेवा सभी की निगाह में काँटा था, खटक रहा था!"

कल्लू बात सुनकर मौन रह गया। वह नहीं बोल सका। जैसे उसके पास कोई शब्द नहीं रहा।

किन्तु माला की माँ ने कहा—"यह सच भी हो, तो तुझे नहीं जाना चाहिए था, बेटी! भला, वहाँ तेरा क्या काम था!" वह बोली—"वहाँ पर खड़े लोग कह रहे थे, जैसे हमें सुना रहे थे कि यह माला और हरदेवा...हाँ, उनकी बात का यही तो मतलब था कि दोनों में प्रेम है...दोनों एक शरीर हैं और एक प्राण। और वे सब कहने वाले खिलखिल हँस रहे थे! बुरी तरह दांत निपोर रहे थे!"

रोष में, कल्लू ने कहा—"तूने मुझे नहीं बताया। एक-एक के दांत तोड़ देता। ईंट मार देता, उन दाँतों पर!"

माला की माँ का नाम दुलारी था। वह बोली—"इससे भी क्या लाभ था! बात बढ़ती, कीचड़ उछलती। हमारी बदनामी होती। जवान लड़की, बिना ब्याही...हेठी तो हमारी होती! हमारी बिरादरी भी हँसती। जाने कब-कब के वैर-भाव निकालती!"

तभी कल्लू ने गम्भीर बनकर कहा—"हाँ, बेटी! मैं इसीलिए तुमसे कहता हूँ। समझाता हूँ। वह रास्ता तेरा नहीं...हमारा नहीं!"

यों दिन गया, रात आ गई। उस दिन गाँव में श्मशान सरीखी शांति थी। जैसे कोई मर गया था। दिन छिपते ही लोगों के घर बन्द हो गये थे। लेकिन जब दीये जले, तो तभी कन्धे पर लाठी रखे, रलिया कल्लू के घर के द्वार पर पहुँच गया। कल्लू उस समय थोड़ी-सी शराब पीकर बैठा था। बोतल में थोड़ी थी, तो उसे पेट में उँडेल चुका था। उस दिन वह दिन भर परेशान रहा। उसकी लड़की ने जैसे उसका दिमाग़ खराब कर दिया। किन्तु जब उसने अपने द्वार पर रलिया को आया देखा, तो वह तुरन्त सजग हो गया। वह झट से खड़ा हो गया और बोला—"आओ, लम्बरदार! कहो, कैसे आये?"

रलिया उसके दरवाजे में प्रविष्ट हो गया। देखा, माला एक ओर उदास बैठी थी। उसकी माँ एक टूटे हुए खटोले में पड़ी थी। वहाँ एक धुंधला-सा दीया टिमटिमा रहा था। कल्लू को देख, रलिया हँसा और बोला—"तो कल्लू चौधरी, इस वक्त घोड़े पर सवार हैं! बादशाह सलामत बने हैं!"

कल्लू झेंप गया और बोल पड़ा—"हाँ, जिजमान, थोड़ी-सी पी ली थी। पड़ी थी।"

रलिया ने कहा—"सो ही तो! भई, तू बादशाह है। पास में पैसा है। भला कितना समझदार है तू कि लड़की को पढ़ाता है। सन्तान को इतनी चतुर बना दिया है। इस गाँव में तो लोग अपने लड़के नहीं पढ़ाते, पर एक तू है कि लड़की को उसी के पैरों पर खड़ी कर रहा है।"

बात सुनी, तो कल्लू ने रलिया की ओर देखा। वह अपनी प्रशंसा सुनकर मूँछों पर हाथ ले गया। उन्हें मरोड़ने लगा।

फिर उसी समय माला ने एक मूढ़ा लाकर रख दिया। रलिया बैठ गया। तभी वह बोला—"सुन कल्लू चौधरी, मैं तेरे पास काम से आया हूँ। सुनेगा न, मेरी बात! या अधिक पी गया है!"

कल्लू ने कहा—"नहीं, सरकार! पूरा नशा कहाँ हुआ है। रोटी तो मिलती नहीं, फिर शराब का नशा कैसे हो सकता है!" वह बोला—"एक रिश्तेदार के लिए लाया था। वही बची पड़ी थी। आज हाथ लग गई।"

रलिया ने कहा—"अच्छा तो है, चलो, पी डाली। अब तू बूढ़ा भी हो गया है। कोई नशा चाहिए। पर तूने आज यह तो देख लिया कि इस गाँव के लोग······।"

"हाँ, लम्बरदार! बेचारा हरदेवा······"

रलिया ने कहा—"मैंने सुना है, तूने अपनी लड़की को भी बुरा-भला कहा। भला, यह अच्छा है क्या! तेरी लड़की किसी से बोले, तो क्या पाप है। अरे, पाप तो कहने वालों के दिल में बसा है। वह उन्हीं के मन में बोलता है। क्यों, समझता है न इस बात को?"

कल्लू ने जल्दी से अपना सिर हिलाया—"हाँ, जिजमान, मैं समझता हूँ। मानता हूँ। देखता भी हूँ।"

रलिया ने कहा—"कल्लू, ये बड़ी कौम वाले सब अन्धे हो गये हैं। तुम्हें क्या आदमी समझते हैं। जानवर मानते हैं···माटी का ढेला···!"

कल्लू ने कहा—"लम्बरदार···!"

"हाँ, भाई कल्लू! भगवान के राज्य में सभी एक हैं। सभी उसकी औला-

हैं। यह जमीन सबकी है।"

कल्लू बोला—"पर सरकार, छोटी कौम वालों को तो लोग पैर की जूतियां समझते हैं।"

रलिया ने अपना पैर पटक कर कहा—"रे, पागल! तुम्हें यह कहना और मानना भी सिखा दिया है। बड़ी कौमों ने तुम्हारा सभी कुछ छीन लिया है। रोटी भी छीनी और धर्म भी छीन लिया!"

कल्लू ने फिर सिर हिलाकर कहा—"तुम ठीक कहते हो, मेहतो!"

रलिया बोला—"देख, मैं तुझसे कहने आया हूँ, कोई तुम्हारी जाति के किसी आदमी को बुलाये, फुसलाये और गवाही देने के लिए कहे तो स्वीकार न कर लेना। मैं तुझे यह भी बता जाता हूँ कि हरदेवा बच जायेगा। उसके माँ-बाप के साथ मैं भी शहर गया था, अस्पताल पहुँचा था। वहाँ हरदेवा बोला था। थानेदार को उसने सभी-कुछ बता दिया।"

यह बात सुनी, तो कल्लू की स्त्री दुलारी भी उठ आई। बोली—"भला हो, मेहतो तुम्हारा! अच्छी खबर सुनाई।"

रलिया खड़ा हो गया और बोला—"बस, तुमसे जो कहना था वह कह दिया। सचेत रहना। लोभ में न आ जाना। अभी यहाँ जाने कैसा-कैसा गुल खिलेगा।"

उसी समय माला उठी और बाहर चली गई।

कल्लू ने कहा—"भगवान ने हरदेवा को बचा दिया—"वाह-वाह!"

रलिया बोला—"मारने वाले से बचाने वाला बड़ा है, कल्लू! अब मैं जाता हूँ। तू आराम कर।"

रलिया चल दिया। वह अभी उस घर से निकला ही था कि बाहर खड़ी माला उसके सामने पड़ी और बोली—"तो मेहतो, बच जायेगा न हरदेवा? सच!"

रलिया यह देख, भावनामय बन गया। उसने माला की ओर देखकर कहा—"हाँ, री! हरदेवा बच जायेगा।" वह मुस्कराया—"जब भगवान की उस पर कृपा है तो वह क्यों न बचेगा। जा, बैठ घर में। वह जल्दी आ जायेगा।" और रलिया तेज चाल से चल वहाँ से आगे बढ़ गया। वह रास्ते में अपने-आप बोला—"हरदेवा भाग्यवान है कि जो बरबस ही, इस सुशीलमयी बाला माला से परिचय पा गया'''और यह कल्लू चौधरी, कैसा नसीब पाया है इसने भी, जिसके घर में माला सरीखी समझदार होनहार लड़की ने जन्म पाया है। ईश्वर ने इस कन्या को रूप भी कैसा दिया है, मानो आकाश से अप्सरा उतर

आई हो। यदि यह माला किसी राजघराने में उत्पन्न हुई होती, तो इसे धरती पर पाँव भी न रखना पड़ता। आज यह किसी राजमहल को देदीप्यमान कर रही होती।' रलिया के सामने दूर तक अन्धेरा था—अन्धा पथ—पर वह हर्षित भाव में निर्बाध रूप से लाठी कन्धे पर रखे अपने घर की ओर बढ़ा जा रहा था।

दसवीं बात

उस दिन गाँव के व्यक्तियों ने हरदेवा को जब ज़रा-सी बात पर मौत के मुँह जाते हुए देखा, तब इस अवसर पर उन्हें यह भी देखने को मिला कि सीधा और भोला जग्गू अपनी स्त्री रमिया के लिए कालरूप बन गया। उसने गाँव के बीच रास्ते पर रमिया को अपमानित किया। किन्तु गाँव वालों को उस समय यह देखकर भी अत्यन्त अचरज हुआ कि स्वभाव की रूक्ष और गुस्सैल रमिया पति के सामने ऐसे झुक गई कि जैसे डरी बिल्ली। जिसने सदा पति पर शासन किया, पति को अपने इशारों पर चलाया, वही रमिया उस समय सिर के बाल पकड़ कर खचेड़ी गई—पूर्णरूप से अपमानित हुई!

और यह सब क्यों था? जग्गू को एकाएक ही इतना गुस्सा क्यों आ गया? बात साफ़ थी। जग्गू नहीं चाहता था कि उस कीचड़ में रमिया भी फँसे और जग्गू को भी खैंचे। क्योंकि जग्गू ने इस बात को समझ लिया था कि जातिवाद के प्रश्न पर रमिया ने चौपाल में जो-कुछ कहा, वह ठाकुरों ने पसन्द नहीं किया। जग्गू उसी से डरा था। और जब उसने हरदेवा की वह करुण तथा पीड़ित अवस्था देखी तो उसका मन एकाएक दहल गया। उसके मानस का चोर सामने आ गया। जग्गू ने समझ लिया कि यह उस प्रतिक्रिया की पहली किश्त है। दूसरी रलिया···तीसरी कल्लू की लड़की माला···।"

निश्चय ही, जग्गू के मन में यह बात जड़ बन गई कि एक दिन इसी प्रकार रमिया पर भी प्रहार होगा, वह जंगल के किसी खड्ड में मार कर फेंक दी जायेगी और उसका अपना घर बरबाद हो जायगा, वह अकेला रह जायेगा। रमिया नहीं रही, तो वह क्या देर तक जीवित रह सकेगा···।

और यह सच था। जग्गू देर से इस बात को जानता था कि रमिया पेट की गहरी नहीं, काली नहीं। जो बात सामने आती है, उसे रोक नहीं सकती। किसी का दुःख-दर्द नहीं देख सकती। जग्गू को इस बात का पता था कि रमिया दूसरों के दुःख में सदा दुखी बनी है, रोई है। उससे कुछ हो सका है तो करने से भी पीछे नहीं रही। यद्यपि रमिया ने कभी यह बताने की चेष्टा नहीं की,

परन्तु उस दम्पति के जीवन में ऐसे अनेक अवसर आये कि जब रमिया ने अपना खाना दूसरों को दे दिया। अपना दिन भूखे रहकर काट दिया। कभी जग्गू ने कहा भी तो तुरन्त उसकी बात को टाल दिया।

ऐसी उदार और गुस्सैल स्त्री को पाकर जग्गू अपने-आप में सुखी था। वह अपने-आप से भी बेखबर था। कदाचित् यही कारण था कि जब हरदेवा के नाम पर जग्गू रमिया के प्रति कठोर बन गया, तो वह उस दिन घर में नहीं गया। गाँव में भी नहीं रहा। वह उसी दिन की सन्ध्या तक अपने गाँव से कई कोस परे पहुँच गया। रमिया के गाँव चला गया। क्योंकि उसने जो कुछ किया, वह अप्रत्याशित और उसके लिए अकल्पित था, असहनीय भी था। उसकी ज़िन्दगी में वह पहला अवसर था कि जब उसने रमिया पर हाथ छोड़ा था। लेकिन जब वह जोश उतरा, तूफ़ान का ज़ोर कम हुआ, तो जग्गू को ऐसे लगा जैसे उसने आज सबसे बड़ा पाप किया है, वह आज ठगा गया है, रमिया के समक्ष अपराधी बना है। इसलिए, जग्गू ऐसा साहस नहीं कर सका कि घर में जाये, रमिया के पास जाकर बैठे, उससे कुछ अपनी कहे, कुछ उसकी सुने।

लेकिन जब दूसरे दिन प्रातःकाल रलियाराम जग्गू के घर पहुँचा, तो वह उसको वहाँ न देख, आश्चर्य-चकित रह गया। पड़ोस की एक प्रौढ़ा वहाँ बैठी थी। रमिया चारपाई पर पड़ी थी। उसे बुख़ार था, कराह रही थी।

रलिया को देख, पड़ोसिन ने कहा—"अरे रलियाराम! देख तो जग्गू कहाँ गया है! कल से नहीं आया। इस रमिया को बुख़ार है। इसका शरीर गरम तवे की तरह तप रहा है।"

रलिया ने बात सुनी तो जैसे उसके पैर के नीचे की ज़मीन निकल गई। उसने रमिया का हाथ देखा तो सचमुच भभक रहा था। यही देख, रलिया ने कहा—"मेहतो रात से नहीं आया, कहाँ गया?"

पड़ोसिन ने कहा—"यही तो चिन्ता है! तू ही देख, वह कहाँ चला गया। उसने कल जो कुछ किया, कहीं बैठा हुआ उसी का पश्चात्ताप कर रहा होगा।"

रलिया ने कहा—"मेहतो ने कल अच्छा नहीं किया! वह इन्सान से जंगली जानवर बन गया था। मुझे तो उस समय लगा कि वह गाँव के पाप से डर गया। उस बोझ से जग्गू मेहतो भी नीचे दब गया।" यह कहते हुए उसने साँस भरी और बोला—"अच्छी बात है, मैं ढूंढूंगा। हरिया कह रहा था कि जग्गू मेहतो उसे बाँगरपुर के पास मिला था। उसने टोका नहीं, राम-राम करके आगे निकल आया।"

उसी समय रमिया ने कराह कर रलिया की ओर देखा। उस अवस्था में

ही उसने कहा—"तू मेरे बाप के घर जा, रलियाराम ! वहीं गया होगा तेरा भैया। कह दीजो, तूने जो कुछ किया, अच्छा किया। अब घर चल। देख, साथ लाना। पीछे न छोड़ आना। नहीं तो, हाँ, तेरे भैया ने क्या कभी मुझ पर हाथ छोड़ा था ? सदा मेरी बात मानी। पर भगवान जाने, कल उस पर कैसे भूत सवार हो गया। राक्षस बन गया था !"

रलिया ने कहा—"भाभी, मेहतो तेरा आदर करता है।"

"अरे, मैं जानती हूँ, रलियाराम ! समझती हूँ।"

रलिया ने कहा—"मैं आज ही जाऊँगा। शाम तक वहाँ पहुँच लूँगा।"

उसी समय रमिया ने चाहा कि वह हरदेवा की बात पूछे, किन्तु रलिया ने स्वयं ही कहा—"भाभी, हरदेवा भी बच गया। तुझे पता नहीं, रात में फिर थानेदार गाँव में आया था। वह पटवारी, ज़मींदार और लाला को भी पकड़ कर ले गया।"

पड़ौसिन बोली—"रमिया को पता है। मैंने ही बताया है। मुझे रात में ही पता चल गया था। मोटर-भरी पुलिस आई थी। डोमों के पुरवे में छोटू, कल्लू और उसकी लड़की माला का भी बयान हुआ था। बात रमिया की भी चली थी पर किसी ने थानेदार से कह दिया कि रमिया को बुखार है। जग्गू गाँव में नहीं है।"

रलिया ने कहा—"बात बढ़ गई है। आगे चल पड़ी है। कल क्या हो, कोई नहीं जानता।"

पड़ौसिन बोली—"भैया, दुर्गति हो रही है ! लोग भूखे हैं, पर फिर भी आदमी नहीं बनते। कुत्तों की तरह भौंकते हैं और काटने को दौड़ते हैं।"

रलिया ने कहा—"अरी, ताई ! भूखे हैं तभी तो लड़ते हैं। कुत्ते बने हैं। एक-दूसरे पर झपटते हैं।"

ताई ने कहा—"भैया, इस गाँव पर तो भगवान का कोप है। अब तो भले आदमियों का यहाँ रहना भी मुश्किल हो गया है।"

रलिया बोला—"लोगों ने बड़ा जाल डाला था। कइयों को मारने की सोची थी। पर समझती हो न ताई, मारने वाले से बचाने वाला बड़ा है। एक हरदेवा को मारा, तो वह भी बच गया। बस, उसे कुछ दिन अस्पताल में जरूर रहना पड़ेगा। घर उसका भी बरबाद हो जायेगा। चार-पाँच महीने से पहले वह क्या उठेगा। उसकी पढ़ाई छूट जायेगी। बूढ़ा बाप रो-रोकर मर जायेगा।

ताई ने कहा—"राम-राम ! कसाई बन गये हैं लोग ! मैंने हरदेवा को देखा, तो देखा नहीं गया। जैसे किसी ने खून से भरा मटका उसके सिर पर उँडेल

दिया हो उसे कपड़ों सहित तर कर दिया था। बता तो, क्या गँडासा मारा था या लाठी······?"

रलिया ने कहा—"उसे लाठी से मारा था। उस पर पीछे से हमला हुआ था। हरदेवा मरा हुआ ही समझ कर छोड़ा गया था।"

रमिया ने तभी फिर कराह कर कहा—"अरे रलिया! देखना, मारने वालों का नाश हो जायेगा। उनमें से कोई न बचेगा।"

रलिया कड़वे भाव से मुसकाया—"भाभी, यह बाद की बात है। अभी तो गाँव मर रहा है। देख, तुझे भी बुखार चढ़ा है। जग्गू भैया से तेरा भी···!"

रमिया ने कहा—"अरे, मैं औरत हूँ। अपने मर्द के सामने झुकना मुझे भी आता है।"

रलिया हँसा—"यह तो तेरी नई बात थी, भाभी! मैं न देखता तो भरोसा भी न कर पाता।"

पड़ौसिन ने कहा—"अरे, यह भी होना था। जग्गू को क्या गुस्सा आता है! जाने कैसे आ गया।" वह बोली—"यह रमिया भी तो हर जगह टाँग अड़ाती है। सबके सामने बोलती है। भला इसे क्या पड़ी थी!"

इतनी बात सुनकर रमिया कुछ कहती कि रलिया बोल पड़ा—"न, ताई! भाभी को बोलना था। उस दिन चौपाल में भी इसने सच्ची बात कही, न्याय का पक्ष लिया। कल हरदेवा की जो हालत थी, उसे देख कर तो पत्थर भी पसीज जाता। जग्गू भैया ने अच्छा नहीं किया। वह तो जैसे पागल बन गया था!"

रमिया ने कहा—"तेरा भैया तो औरत को भी मात कर गया!"

पड़ौसिन ने कहा—"अरी पगली! तो तेरा मतलब है कि मेहतो दूसरे की आग में कूद पड़ता। वह सबसे मिल कर चलता है, यह क्या बुरा है! भले आदमी का यही काम है।"

रमिया चिढ़ गई—"यह कायरता है! आदमी के लिए क्या यह शोभनीय है! सच को सच कहना क्या पाप है?"

रलिया हँसा—"सच, भाभी! तूने ठीक कहा। हरदेवा के साथ गाँव में तेरी भी चर्चा है। भैया जग्गू को हर कोई ग़लत बता रहा है।"

रमिया ने साँस भरी—"न, रे रलियाराम! मैं ऐसा भी नहीं सुनूंगी। मैं क्या अपने को अच्छा मानती हूँ। आदत पड़ गई है, रुकती नहीं। कोई बात सामने आये तो मेरी ज़बान बन्द नहीं होती।" उसने कहा—"ला, एक घूंट पानी तो दे। अब मेरा बुखार उतरेगा। और देख, हँडिया में दूध रखा है, तू पी ले। आज शाम तक ज़रूर पहुँच जाना। कल दोपहर तक आ जाना।"

रलिया ने लोटे में पानी लिया और रमिया को दिया। उसने कहा—"तू दूध पीना, भाभी, मैं नहीं।"

"अरे, नहीं! आज मैं कुछ नहीं लूंगी। तू पी डाल, पड़ा रहेगा। जब तेरा भैया यहाँ नहीं, तो कौन पियेगा।" ......"देख, तेरा भैया गया है ससुराल, पर कुरता भी शऊर का नहीं पहन गया। वह तो बाहर-ही-बाहर चला गया। घर में भी नहीं आया। जैसे मैं पकड़ लेती। बदला चुकाती।"

रलिया जोर से हँसा—"तेरा कोई भरोसा नहीं, भाभी! जब गाँव तुमसे डरता है, तो जग्गू मेहतो भी......।"

"अरे, नहीं रलिया! वह भी कहीं होता है! मैं इतनी मूर्ख हूँ क्या! मेहतो मेरा पति है—देवता है! कल उसने जो कुछ कहा, उसका भी उसे अधिकार था।"

रलिया ने गिलास में दूध भर लिया और पी लिया। उसी समय उसने डकार ली और बोला—"भाभी, तेरा रूप भी नहीं समझा जाता! कभी तो पूरी चण्डिका बनती है, कभी खालिस ममता की मूरत। बता तो, अब तूने कौन-सा रूप अख्तियार किया है?"

रमिया ने कठिनाई से कहा—"रलिया, मैं भी औरत हूँ। मैं इसीलिए सोहागिन हूँ कि मेहतो है। वही तो मेरा सहारा है। मैं उसके प्राणों की सेज पर सो सकी हूँ। उसकी पिछली बीमारी में मैंने जितना कष्ट उठाया, वह क्या हर कोई औरत उठा सकती है?"

पड़ोसिन बोली—"हाँ, रे रलियाराम! रमिया ने बड़ी दौड़-धूप की। जग्गू मेहतो को बचाना इसी का काम था। इसने क्या कभी जंगल की घास खोदी थी! पर इसने घर भी देखा, और बाहर भी।"

रलिया ने कहा—"यह सभी जानते हैं, भाभी! लोग तेरी तारीफ़ करते हैं। जग्गू भैया भी बहुत बार कह चुका है कि तू है तो वह है; नहीं तो ज़िन्दा रहना भी उसके लिए दूभर हो जायगा।"

रमिया ने कहा—"पर अब मैं बता दूंगी कि मैं भी औरत हूँ। घर में बैठना जानती हूँ।"

रलिया हँस पड़ा—"मैं तेरा मन समझता हूँ भाभी। अच्छा, मैं जाता हूँ।"

रमिया ने कहा—"देख, साथ लाना।"

रलिया चलता हुआ बोल गया—"हाँ, हाँ, छोड़ कर नहीं आऊँगा।" इतना कह वह चला गया।

उसी समय पड़ोसिन ने कहा—"यह सांड भी यों ही फिरता है! तेरे-मेरे घर ताकता है। इसकी माँ रोज़ भौंकती है पर यह उसकी एक नहीं सुनता!"

रमिया ने कहा—"जब तक साँड को खाना मिलता है, तब तक वह कुछ नहीं करेगा। वह बैल बनकर हल में नहीं जुतेगा।" यह कहते हुए उसने करवट ली और पड़ौसिन को देखकर बोली—"इस रलिया को फ़िक्र क्या है ! चैन की छानता है। गाँव-भर इसे बुरा कहता है, पर मैं जानती हूँ कि यह बुरा नहीं है।"

पड़ौसिन और अधिक चिढ़ गई। वह बोली—"घर में काले सिर की होती, किसी खूँटे से बँधा होता तो यह भी सिर झुका कर चलता। मेहनत-मजदूरी करता। जाने, तू कैसे अच्छा मानती है ?"

इतनी बात सुनकर रमिया ने कुछ नहीं कहा, उसने तब अपना मत देना पसन्द नहीं किया।

पड़ौसिन ने कहा—"अब तो गाँव का रूप ही बिगड़ गया। किसी बड़े-छोटे की लिहाज-शरम नहीं रही। जवान लौंडे सरे-आम जाने कैसे-कैसे गाने गाते हैं। कुएँ-पोखर पर जाकर सीटियाँ बजाते हैं और जवान लड़कियों को ताकते-फिरते हैं। सुनती है न तू, अब तो छोटे-छोटे बच्चे भी गीत गाने लगे हैं। हमारा पाँच बरस का छुटकू कल तुतलाता हुआ गा रहा था—"बालम आय बसो, मोरे मन में !" और यह कहते हुए वह ताई अपने मुँह के कुछ टूटे हुए दाँतों से खिलखिला कर हँस पड़ी।

इतना सुना, तो रमिया भी हँसी। वह पड़ौसिन की ओर देखने लगी।

पड़ौसिन बोली—"हाँ, री, रमिया ! मैंने उससे पूछा—"क्यों रे, वह कौन-सा बालम है, तो शरमा गया। मेरी गोद में मुँह छिपा लिया।" वह कहने लगी—"रमिया, मैं तो हैरत करती हूँ इन जवान लड़कियों पर, कि खेत पर जाती हैं, तो सिर की माँग निकाल कर, होंठ रचाकर, माथे पर बिन्दी लगा कर ! भला कोई पूछे इनसे कि अरी, वहाँ खेत पर कौन तुम्हारा रूप देखेगा। पर आज तो हवा ही ऐसी चल पड़ी है ! चाहे खाने को कुछ न मिले, पर रूप जरूर सँवारा-बना हो। खाक पड़े ऐसी बुद्धि पर ! और यह भी कैसी बात कि इन लड़कियों और बहुओं का पहनावा भी आज अजीब तरह का बन गया है। हाँ, आज तो सभी-कुछ नया दिखाई देता है···पुराना जैसे बिलकुल मिट गया। मैंने अपनी बहू से कहा कि अरी, सुबह को जल्दी उठा कर, स्नान करके दो मिनट भगवान का नाम भी ले लिया कर। पर उसने बात सुनी और दाँत निपोर कर हँस दी। मन में तो मेरे आया कि उन दाँतों में ईंट मार दूँ और तोड़ दूँ।"

रमिया ने साँस भरी और कहा—"अब कोई कहने वाला और सुनने वाला नहीं रहा। लोग शहरों को गन्दा बताते थे, पर अब तो गाँवों में भी नंगा नाच

शुरू हो गया है। भगवान का नाम लेना, भला अब किसे पसन्द आने लगा।"

पड़ौसिन बोली—"हाँ, यही तो ! कोई कहे, तो पिटे···मरे ! इसी से तो वह बेचारा हरदेवा······।"

रमिया कराही और बोली—"हाँ, जेठानी ! अब यही हो रहा है। कहने वाला लोगों की आँखों में खटकता है। मेहतो मुझे इसीलिए तो रोकता था। उसका कहना भी ठीक था। जब मैं नहीं रुकी, तभी तो उसे गुस्सा आया। सीधा-सादा आदमी भी कठोर बन गया, भला उसका क्या दोष था ! वह तो मेरा अपराध था।"

ग्यारहवीं बात

एक दिन एकाएक ही, मलिकपुर में यह समाचार आया कि पार्वती मुक़दमा जीत गई। मुक़दमे का निर्णय उसके पक्ष में हो गया। मजिस्ट्रेट ने पार्वती को ससुराल की ज़मीन में से आधा हिस्सा देने का निर्णय किया। जसपत और पार्वती के ससुर को चार-चार मास का कारावास-दण्ड मिला। इसलिए कि उन्होंने बाज़ार की वस्तु के समान, लड़की बेची और ख़रीदी, जो समाज के प्रति नैतिक अपराध था। निश्चय ही, उस निर्णय से पार्वती की जीत थी, वह प्रसन्न हो सकती थी; किन्तु स्थिति इसके विपरीत थी। जिस धरती पर वह खड़ी थी, वह अत्यन्त कमज़ोर और जीर्ण थी। मानो पार्वती के बोझ से वह हिल रही थी। उसके एक ओर खाई थी और दूसरी ओर कुआँ। वह न बाप के यहाँ जा सकती थी, न ससुर के यहाँ। वे दोनों घर उसके लिए बन्द थे। मजिस्ट्रेट ने अपने निर्णय में यह भी लिखा कि जब पार्वती निर्दोष है, पिता द्वारा ठगी गई है, तो उसके ससुर और पति को उदार बनना चाहिए। वे पार्वती को स्वीकार करें और अपने घर में ही आश्रय दें।

जिस दिन यह निर्णय हुआ, तब रलियाराम भी वहाँ उपस्थित था। वह अपने साथ कुछ अन्य युवकों को भी ले गया था। अदालत के कमरे से जैसे ही पार्वती बाहर निकली, त्यों ही उसके पति ने तेज़ स्वर में कहा—"तू ज़िन्दा रही, तो मैं अपनी मूँछें मुँडा दूंगा! तूने डायन बनकर मेरे बाप को डसा है, तो तुझे भी इसका फल भोगना पड़ेगा।"

पार्वती उस समय मौन थी। वह देखती थी कि समाज की सहानुभूति उसके साथ थी, कानून भी उसके पक्ष में था; परन्तु उसके पति ने जो-कुछ कहा, जब वह उसका उत्तर नहीं दे सकी, तो और कोई भी आगे नहीं बढ़ा। अपितु हुआ यह कि जब उसका बाप और ससुर हाथों में हथकड़ियाँ पहने पुलिस के पहरे में जेल की ओर चले, तो बरबस ही, उन्होंने कुछ व्यक्तियों की सहानुभूति को प्राप्त कर लिया। कचहरी के आँगन में खड़े एक व्यक्ति ने कहा—"वाह! वाह! कैसा ज़माना है, लड़की ने बाप और ससुर दोनों को जेलखाने पहुँचा दिया!"

दूसरा बोला—"अरे, जनाब ! औरत की जब तक लाज है, तभी तक औरत है; नहीं तो फिर,...हां,..." और वह खिलखिला कर हंस पड़ा।

तभी पार्वती के कानों में एक स्वर पड़ा—"सांप की मौसी बन गई है, यह छोकरी ! जिन्होंने पाल-पोस कर बड़ा किया अब उन्हीं को खा रही है...नाश करने पर तुली है..."

उस अवस्था में, मानो कोई भी पार्वती के कृत्य का समर्थक नहीं था। वह निरुपाय थी। चूंकि उसके पिता और ससुर को सजा हो गई, इसलिए, अपराधी सिद्ध होकर भी, समाज की सहानुभूति उन्हीं ने प्राप्त कर ली थी। इस प्रकार लगा कि वह समूचा समाज ही अपराधी था...चोर, डाकू और खूनी का समर्थन करता था...!

फलस्वरूप, उस अवस्था को देखते ही, पार्वती का माथा चकरा गया। वह तुरन्त कचहरी के आंगन से दूर हो गई। जब वह अपने ठिकाने पर पहुँची, तो तभी रलिया वहां आया। उसके साथ गांव के और भी लड़के थे। रलिया को देखते ही, पार्वती ने जैसे आहत होकर कहा—"अरे, अब और क्या होगा, रलिया-राम ! इतना तो हो गया, अब आगे क्या !"

रलिया बात सुनकर एकाएक नहीं बोल सका। मानो वह स्वयं पार्वती के मर्मस्थल से निकली बात का अर्थ समझने लगा। उसने सिर झुका लिया। सच-मुच, उस समय पार्वती की अवस्था को देखकर वह भी विचलित हो गया। क्योंकि जिस लड़की के लिए बाप का भी और ससुराल का भी—दोनों घर बन्द हो गये, वह अब कहां जायेगी, यह प्रश्न अनायास ही रलियाराम के मस्तिष्क में घूम गया।

किन्तु तभी गांव के एक अन्य युवक ने कहा—"पार्वती, चिन्ता की बात क्या है। जब पैर बढ़ाया है तो उसे रोकने से नुकसान भी हो सकता है। सुना नहीं, कचहरी में सभी तेरी तारीफ़ कर रहे थे। कह रहे थे, तूने जो कुछ किया, समय के अनुसार किया।"

पार्वती बोली—"वहीं पर कुछ ऐसे भी तो थे कि जो मेरा काम अच्छा नहीं बता रहे थे। मैं अब गांव में नहीं रह सकती।"

उसी समय रलिया ने अपना मुंह उठाया। उसने कहा—"पार्वती, मैंने इसका भी रास्ता खोजा है। चाहे, तो तू इसी शहर में रह जा। यहां एक आश्रम है। अनाथ और असहाय लड़कियों को वहां पढ़ाया और दस्तकारी का काम सिखाया जाता है। तू भी कुछ पढ़ लेना और कोई काम सीख लेना। तुझे ज़मीन मिलेगी, उसका मुनाफ़ा यहीं बैठी प्राप्त करती रहना। उसे जोड़ना और अपने काम में लाना।"

पार्वती ने जैसे पीड़ित और सहमे भाव से कहा—"रलियाराम, मैं खो गई हूँ। इस संसार की भीड़ में रास्ता भूल गई हूँ। मैं मति-भ्रष्ट बन चुकी हूँ।"

रलिया ने बात सुनी, तो वह हँसा नहीं, वरन् गम्भीर बन गया। वह सामने की ओर देखने लगा। निश्चय ही, वह पार्वती की बात के अन्तराल में डूब गया।

उसी समय वह सिपाही, जो रलिया का नातेदार था, वहाँ आया। उसने कहा—"पार्वती कल आश्रम में चली जायेगी। वहाँ के मैनेजर ने मान लिया है। मैं आज ही उससे मिला था।"

तभी रलिया ने पार्वती की ओर देखा। उसने जैसे आँखों से ही कुछ कहना और सुनना पसन्द किया। स्थिति यह थी कि वह उस अवस्था में अपने को परोक्ष में रखना चाहता था। गाँव के जो लड़के उसके साथ आये थे, वह उनसे स्पष्ट कहना पसन्द नहीं करता था कि पार्वती ने जो कुछ किया है, उसमें वह भी हिस्सेदार है। अपितु वह यह बताना पसन्द करता था कि सभी के साथ वह भी केवल दर्शक बन कर आया है।

किन्तु तभी जैसे तड़प कर पार्वती ने कहा—"मैं मरना चाहती हूँ, रलिया-राम! इस मायावी संसार से दूर होना चाहती हूँ।"

रलिया ने कहा—"पर मैं ऐसा नहीं समझता। जिन्दगी का मोह तेरे पास भी है। वह तुझे भी सता रहा है। तेरे मन को पकड़ रहा है।"

बात सुनी, तो पार्वती ने जैसे निरुपाय बनकर अपना सिर झुका दिया।

गाँव के एक लड़के ने कहा—"हम तुझे शाबाशी देने आये हैं, पार्वती! तूने बड़ा काम किया। अपनी और बहनों का भी रास्ता साफ़ कर दिया। अब तू भूल जा कि कोई तेरा बाप था, कोई पति या ससुर था। वे सब तेरे सगे-सम्बन्धी नहीं थे, शत्रु थे। तेरा मोल-तोल कर रहे थे। अपने स्वार्थ का पेट भर रहे थे।"

तभी पार्वती ने फिर रलिया की ओर देखा। उसने कहना चाहा कि यह सब तूने कराया है। तूने मुझे कहीं-से-कहीं पहुँचा दिया है। किन्तु रलिया की आँख का इशारा पाकर उसने कुछ नहीं कहा। रलिया खड़ा हो गया। वह साथियों सहित वहाँ से जाने लगा। उस अवस्था में ही उसने कहा—"तू आश्रम में चली जाना, पार्वती! वहाँ सुख से रहेगी। तुझे शांति मिलेगी।"

पार्वती का सिर झुका था। उससे कुछ नहीं कहा गया। जब रलिया फिर आने की बात कह कर वहाँ से चल दिया, तो तभी, रास्ते में उसके एक साथी ने कहा—"क्यों रलियाराम, आश्रम में भी तो दुराचार होता है। वहाँ भी लड़कियों को ठगा जाता है।"

रलिया ने बात सुनी, तो रास्ता चलते हुए, वह ऊपर आकाश की ओर देखने लगा। वह एक पक्षी को लक्ष्य करता हुआ बोला—"दुराचार तो सभी जगह होता है, भाई। मन्दिरों में भी, मस्जिदों में भी!" उसने विषादभरी हँसी हँस कर कड़ुवे भाव में कहा—"जब आदमी का स्वार्थ जागता है तो उसका विवेक नष्ट हो जाता है। वह तब सभी कुकर्म करने को तैयार होता है। कथा में पण्डित जी से मैंने यही सुना था और अब आज वही दिखाई देता है।"

युवक ने कहा—"इसी प्रकार आदमी औरत को भी ठगना चाहता है?"

अपने स्वर पर जोर देकर, रलिया बोला—"चाहता नहीं, ऐसा करता है। आदमी इस नारी जाति के साथ जाने कब से अन्याय करता आया है।" उसने कहा—"मैंने इतना भी पण्डितजी से सुना था कि मनुष्य नारी को परावलम्बी बना चुका है। शोषक बनकर उसका शोषण कर चुका है। इस पार्वती को देख, मैंने जो कुछ सुना था वह सत्य पाया। अब जैसे कोई मुझे झिझोड़ता है। कोई मेरे दिमाग़ में कील ठोंकता है!"

युवक हँसा—"आजकल तू भी कुछ अजीब बनता जा रहा है, रलियाराम! तेरा हँसना और बोलना भी बनावटी लगता है। बता तो, तू क्या मन में कुछ और रखता है?"

रलिया ने कहा—"भैया रविदास, सच, कुछ दिनों से मेरा मन जैसे रोना चाहता है···चीखना, चिल्लाना मुझे सूझता है। कभी-कभी तो यह भी मन में आता है कि जो सामने आये, उसका सिर फोड़ दूँ, उसे मार दूँ।"

"भला ऐसा क्यों? किसलिए? क्या पार्वती के कारण?"

रलियाराम बोला—"हाँ, भाई! इस पार्वती की बात ने भी मेरे मन की दिशा बदल दी है। गाँव में जो-कुछ हो रहा है, वह भी, जैसे मेरे मन को झिझोड़ता है। मुझे लगता है कि हममें राक्षस बोलता है। जर, जोरू और ज़मीन के झगड़े को छोड़ यहाँ और कुछ नहीं दिखाई देता। जैसे आदमी इन तीन धाराओं में बहा जा रहा है···इसका अस्तित्व लोप होता जा रहा है···।"

उन साथियों में से एक बोला—"पर यह बताओ कि अब इस पार्वती का क्या होगा? वह भी जवान है, सुन्दर है। भला वह अकेली किस प्रकार रह सकती है! वह भी तो···हाँ,···।"

रलिया ने घूर कर उस युवक की ओर देखा। वह तुरन्त बोला—"अरे मूर्ख! पार्वती अपने रास्ते से नहीं बहकेगी। जब उसने इतना रास्ता ठीक-ठीक पार किया है, तो आगे भी···"

युवक हँस पड़ा—"तू तो सदा जंगली और मूर्ख बना रहेगा, रलियाराम!

समझता नहीं, इतना तो उसने किसी की मदद से कर लिया। पर आगे? अरे, यह जवान पार्वती पूरा रास्ता नहीं पार कर पायेगी, भाई! उसे भी साथी चाहिए। औरत की यह सबसे बड़ी विवशता है कि टिकने के लिए उसे कोई सम्बल चाहिए···सहारा चाहिए, मेरे भाई।"

रलिया स्वयं रूखे भाव से हँस दिया—"मैं इतना नहीं समझता। औरत को कमज़ोर नहीं मानता।"

उस साथी ने चुटकी ली—"हम समझते थे कि तू···"

रलिया ने बात को रोक दिया—"मुझे क्यों कीचड़ में खचेड़ते हो, भैया! रहम करो।"

साथी ने सुना, तो दूसरे के साथ खिलखिला कर हँस पड़ा। उसी दिन उन्होंने गाँव में पहुँच कर पार्वती का समाचार गाँव भर में प्रचारित कर दिया। बात एक ने सुनी, तो दूसरे से कही। मानो सभी ने अचरज किया, एक-दूसरे की ओर देखा।

जिस समय पार्वती की बात रमिया के कानों में पड़ी, तो उस समय वह जंगल से आई थी। गाय के लिए कुछ चारा लिये थी। जग्गू उस समय घर पर नहीं था। जग्गू के पास जो थोड़ी-सी ईख थी, वह पेरी जा रही थी। वह अपने गन्नों का गुड़ बनवा रहा था। इसलिए, उन दिनों उसे कोल्हू पर ही रहना पड़ता था।

पार्वती का समाचार जिसने दिया, वह मुहल्ले की एक बुढ़िया थी। सुनते ही, रमिया ने तपाक से कहा—"भगवान सभी की सुनता है।" वह बोली—"देखा चाची, इससे सिद्ध होता है कि निर्बल का भी भला होता है। भगवान सहायता करता है। बेचारी पार्वती को सभी ने तंग किया। बाप ने ठगा और ससुर ने दुत्कारा। अब पता तो पड़ा कि बेटी के ब्याह में···"

अवसर की बात कि उसी समय पार्वती की माँ उधर से आ निकली। उसे पहले खबर मिल गई थी। उसका भाई आया हुआ था। वह कचहरी गया था। उसी ने गाँव में आकर सब बात बता दी थी। वैसे पार्वती के झगड़े से पहले रमिया और पार्वती की माँ में खूब पटती थी। दोनों प्रायः एक जगह बैठतीं और बातें करती थीं। किन्तु जब पार्वती का झगड़ा आरम्भ हुआ, तब न तो रमिया उसके घर गई, न पार्वती की माँ आई। किन्तु उस समय, जब रमिया ने बात कही और वह पार्वती की माँ ने सुन ली, तो वह तुरन्त बोली—"चलो, तुम्हारे दिल में तो ठण्डक पड़ गई। मेरे घर में आग लगी, तो तुम्हें हाथ सेंकने को ठौर मिल गया!"

रमिया इतनी बात सुनने के लिए तैयार नहीं थी। तुरन्त बोली—"भली

बात किसे न अच्छी लगेगी ! तुमने लड़की के व्याह में रुपया लिया। फिर उसका ज़ेवर हड़प लिया···शरम नहीं आती कि पैदा की हुई लड़की न दीन की रक्खी, न दुनियाँ की ! अब चली है, बात बनाने !"

पार्वती की माँ चीख़ पड़ी—"तो तेरे बाप या ख़सम का तो कुछ नहीं लिया। मेरी लड़की थी, जो बेची भी, गिरवी भी रखी, तू कौन !"

रमिया ने हाथ नचाया और मुँह मटका कर कहा—"हाँ, हाँ, तभी तो बाप और ससुर आज जेलखाने गये हैं ! अरी, डूब मर चुड़ैल, किसी कुएँ-पोखर में !"

पार्वती की माँ का नाम गेंदो था। वह तुरन्त चिल्लाई—"डूबे मेरी जूती ! तू डूब जा···तू जाकर मर जा, बेशरम ! सौ नकटों की नकटी ! उस दिन ख़सम ने बीच गाँव में चोटी पकड़कर खेंची थी। तब भी तो यही जबान कतरनी की तरह चल रही थी, तेरी ! तब भी तो किसी की छाती पर नमक मला गया होगा···ज़माने भर में भौंकती हुई कुतिया······!"

इतना सुनना था कि रमिया ने पास पड़ा डण्डा उठा लिया। वह क्षण समीप था कि जब रमिया दो कदम आगे बढ़ कर हाथ में पकड़ा हुआ डण्डा गेंदो के सिर में मार देती। किन्तु इतनी देर में तो मोहल्ला औरतों से भर गया था। एक जवान लड़की ने रमिया को पकड़ लिया और उसका डण्डा छीन लिया। तभी उस लड़की ने गेंदो की ओर देख कर कहा—"जा, जा, पार्वती की माँ ! अब क्यों झगड़ा बढ़ाती है। नाक तेरी कटी है···आदमी तेरा जेल गया है···लड़की तेरी···!"

गेंदो फिर गरज पड़ी—"मेरी नाक क्यों कटी, तेरी कटेगी···तेरी माँ की कटेगी !"

एक बुढ़िया बोली—"हाँ, हाँ, तेरी नहीं कटेगी ! गाँव की कटेगी।" उसने कहा—"अब जो भी सुनेगा, वह यही तो कहेगा कि मलिकपुर के ठाकुरों की एक लड़की ने······!"

गेंदो ने तेज़ स्वर में कहा—"मेरी ओर से तो मर गई, पार्वती ! उसकी लाश निकल गई···वह फुंक गई ! अब तुम रोओ उसके लिए। मेरा रोये गूँठा !"

एक औरत ने हँस कर कहा—"वाह-वाह ! ख़ूब तूने बात कही ! नसकुल, तेरी भी आँखों की शरम उतर गई···अरे, मर जा, चुड़ैल !"

रमिया ने कहा—"बेशर्म हो गई है !"

"हाँ, मैं तो हो गई ! तू भी हो जा ! तू भी मर जा !"

इतना सुनना था कि मोहल्ले भर की औरतों ने जोर का ठहाका उठा। गेंदो अपनी बात कहते हुए, घर की ओर चल दी थी। तब, सभी दोनों ने

तालियाँ वजा दीं। वे औरतें शायद कुछ देर और उसी प्रकार खड़ी रहतीं किन्तु तभी एक बुज़ुर्ग सिर पर चारा रखे वहाँ आया। उसको देख, वहुओं ने घूँघट काढ़ लिये। लड़कियों ने भी वोलना वन्द कर दिया। जव वह आगे वढ़ गया, तो तभी, अपने दरवाज़े पर वैठी हुई रमिया ने सभी को सुनाया—"देखा, इसे कहते हैं, चिकना घड़ा कि जहाँ पानी नहीं ठहरता!"

एक ने अपने घर के दरवाज़े पर से कहा—"राम-राम! ऐसी वात, जो न कभी देखी, न सुनी!"

रमिया ने कहा—"अभी क्या है। और देखना। यहाँ जो-कुछ न हो जाय, वही थोड़ा! पापियों से गाँव भरा है। यहाँ दुरात्माओं का जन्म हुआ है।"

उसी समय एक स्त्री वहाँ आई और रमिया के पास वैठकर वोली—"अरी रमिया! तूने भी सुना क्या, कल्लू डोम की लड़की अपना व्याह नहीं कराती। मैं तो इतना भी सुनती हूँ कि उसने माँ-वाप से साफ़ कह दिया है कि जव तक हरदेवा अस्पताल से न उठ आयेगा, तव तक वह व्याह नहीं करेगी।"

रमिया ने वात सुनी, तो अपना मत नहीं दिया। उसने तव भी पड़ौसिन की ओर जिज्ञासा-भरी दृष्टि से देखा।

पड़ौसिन ने कहा—"क्यों रमिया, तो क्या माला और हरदेवा···ठाकुर और डोम···हे परमात्मा!"

रमिया ने तुरन्त ही, गम्भीर वनकर कहा—"तो इसमें पाप क्या है, जेठानी। सुना नहीं तूने, 'जात-पाँत पूछे नहीं कोई, हर को भजे, सो हर का होई'!" और उसने फिर अपनी आँखें ऊपर हरे आसमान की ओर उठाकर कहा—"माला सरीखी लड़की इस गाँव में दूसरी नहीं होगी···हरदेवा सरीखा भी नहीं।" उसने साँस भरकर कहा—"भगवान उन दोनों का भला करे!" वह वोली—"डोम भी राजपूत हैं, विन्दो की माँ! कल्लू जाति का चौधरी है। उसके पास पैसा है। सुना नहीं, माला का मामा वड़ा अफ़सर है। पूरे हज़ार रुपए महीने में पाता है। भला माला हरदेवा से क्यों व्याह करेगी? किसी वड़े घर जायेगी। किसी अफ़सर की वीवी वनेगी।"

"तव यह क्यों···हाँ, देखा नहीं उस दिन, घायल वने हरदेवा के पास उस माला ने रो-रोकर जैसे सभी को वता दिया था कि वही उसका मीत है,—उसका अपना ही एक! वोल तो, क्या यही था न, उसका मतलव?"

रमिया ने वात सुनी और पेट में उतार ली। वह स्वयं माला की उस आस्था में डूव गई, जैसे उसी में लीन वन गई···।

बारहवीं बात

समूचे देश के समान, मलिकपुर गाँव की भी काया पलट रही थी। पुराने विचार मिट रहे थे और नये उठ रहे थे। हरदेवा और माला की कथा चारों ओर फैल गई। मानो उन दिनों उस गाँव का प्रत्येक समाचार अलौकिक था और हृदय पर अपना असर छोड़ जाता था। पार्वती का किस्सा भी घर-घर में सुनाई पड़ता। आश्चर्य यह था कि उन सभी किस्सों में रमिया का नाम विशिष्ट रूप से लिया जाता। गाँव के स्त्री-पुरुष, छोटे-बड़े सभी का यह विश्वास बन गया कि आये दिन घटित होने वाली घटनाओं में रमिया का प्रभाव अवश्यम्भावी है। कदाचित् लोगों के इस विश्वास का एक कारण यह भी था कि रमिया स्त्री तो थी, परन्तु उसने पुरुषों के अधिकार भी प्राप्त कर लिये थे। जब से माला का प्रश्न छिड़ा, हरदेवा घटना का शिकार बना, तब से रमिया के घर उन सभी स्त्री-पुरुषों का आना-जाना रहने लगा कि जिन्हें नवयुग के उस प्रथम चरण के प्रति पूर्ण आसक्ति थी और किसी विशेष बात के सफल होने की संभावना पर विश्वास था तथा वह आवश्यक अनुभव होती थी। ऐसे लोग निश्चय ही, गाँव की सरमायेदारी, समन्तशाही और उच्चवर्ग के लोगों की पाशविकता से तंग आ गये थे। समय के साथ, उसे घृण्य समझने लगे थे। और यह स्वाभाविक बात थी कि लोगों में अधिक संख्या नवयुवकों की थी। जो उनमें प्रौढ़ और वृद्ध थे, वे एक औत्सुक्य भाव से ही, उस मण्डली में उठते-बैठते। वैसे जिस परिवर्तन की सम्भावना उनके समक्ष उद्घोषित की जा रही थी, वस्तुतः उससे वे एकान्त रूप में सहमत नहीं थे। कहा जा सकता था कि ऐसे व्यक्ति न विरोधी थे, न समर्थक। वे तटस्थ बनकर ही, नवयुग के उस आवाहन का चमत्कार देखने में तल्लीन थे।

उसी समय, एक दिन, गाँव में फिर शोर उठा और सुना गया कि अछूत कहा जाने वाला वर्ग कुएँ पर चढ़ेगा। वह समूह मन्दिर में जायेगा। किन्तु गाँव की उस समय अजीब स्थिति थी। जो सामन्तवादी थे, वे जेल में थे। विरोध करने वाले तो बहुत थे, परन्तु आगे बढ़ने वाला कोई न था। फलस्वरूप, एक

दिन गाँव में ढोल पीटा गया। समस्त हरिजन कुएँ पर चढ़े। उन्होंने पानी भरा। वे मन्दिर में गये, वहाँ प्रसाद बाँटा गया।

वह दृश्य, सचमुच ही, उस गांव के इतिहास में अलौकिक और दर्शनीय था—नितान्त कौतूहल से पूर्ण। जिस समय गाँव के हरिजन कुएँ पर चढ़े और उनसे सवर्णों को पानी पिलाने के लिए कहा गया, तो देखा यह गया कि कोई भी ठाकुर या अन्य उच्च जाति का पुरुष या स्त्री-वर्ग में से भी कोई आगे नहीं बढ़ा। जो व्यक्ति नगर से आये थे, वे एक ओर खड़े थे। वे सवर्णों को प्रोत्साहन दे रहे थे और बता रहे थे कि ये हरिजन तुम्हारे भाई हैं। ये तुम्हारे ही प्राण हैं। इन्हें गले लगा लो। तुमने आज तक इनका महत्त्व नहीं समझा तो अब समझ लो। हरिजन विशाल हिन्दू जाति के विशिष्ट अंग हैं, इसलिए, समूचे शरीर को स्वस्थ तथा बलिष्ठ रखने के लिए, इस अंग की उपेक्षा न करो। इनके हाथ का पानी पियो, प्रसाद खाओ।

माला उस दिन वहाँ विशेष रूप से उपस्थित थी। वह पढ़ने नहीं गई थी। उस समय पानी पिलाने का काम उसी को सौंपा गया था। एक श्वेत धोती पहिने हुए उसका रूप निखर आया था। आत्मा का तेज मुंह पर बोल रहा था। उसके हाथ में लोटा था। वह खड़ी थी। सामने खड़े सवर्णों को बुला रही थी। किन्तु जब कोई नहीं बढ़ा, किसी का पैर नहीं उठा, तो वहाँ पर एकत्र हुए समस्त गाँव ने आश्चर्य से देखा कि रमिया आगे बढ़ी है। वह माला के पास पहुँची है। अपने दोनों हाथों की ओक लगाकर, उससे पानी पिलाने के लिए कह रही है। निःसन्देह, रमिया उस समय प्रसन्न थी। वह गद्‌गद् होकर सभी ओर देख रही थी। जिस मन्थर-गति से वह आगे बढ़ी, उससे लगा कि वह अपने मन से भी दृढ़ थी। उसकी आत्मा की चेतना उसे प्रोत्साहन प्रदान कर रही थी। मानो देखी-सुनी रमिया के स्थान पर कोई और रमिया आ गई थी—उसकी आत्मा में प्रवेश कर चुकी थी।

तभी सवर्णों में शोर उठा—"अरे, रामप्यारी—रमिया—जग्गू मेहतो की घरवाली···"

किसी ने कहा—"राम-राम ! अब इतना भी करने पर तुल गई है, यह रमिया ! जाति को डुबोना चाहती है ! धर्म का नाश···!"

"और देखो न, उस जग्गू मेहतो को, कैसा गुमसुम खड़ा है। जैसे बच्चा बना है—निरा अनजान ! मरदुआ कहीं का !"

एक बोला—"तब पता चलेगा बच्चू को, जब हुक्का-पानी गिरेगा ! कोई पास भी न बैठायेगा !"

किन्तु लोगों का धैर्य तो टूट चुका था। वह नहीं रुक सकता था। उसमें बल नहीं था। मानो सभी की आत्मा में कम्पन था, पाप बोल रहा था। उस समय हृदय चीख उठा था। वह बालू की दीवार कि जिसमें रमिया ने ठोकर लगाई, बलात् भड़भड़ा कर गिर पड़ी। जब जनता ने रमिया को माला के पास जाते हुए देखा उसी समय लाठी कन्धे पर रखे रन्दिया भी आगे बढ़ आया और लोगों को सुनाता हुआ बोला—"ठहर भाभी, मैं भी माला के हाथ का पानी पीऊँगा। मैं जग्गू भैया को भी—"और वह जग्गू को साथ ले कुएँ के समीप पहुँच गया। किन्तु तब तो ऐसे लगा जैसे दरिया के बाँध में दरार पड़ गई है। बाँध टूट चुका था। गाँव के अधिकांश युवक और युवतियाँ माला के हाथ का पानी पीने के लिए आगे बढ़ गये। वे उतावले हो गये। उस भीड़ में प्रौढ़ और वृद्ध भी मिल गये। मानो वे सभी प्यासे थे, सभी आतुर थे। उसके बाद ही, मन्दिर से प्रसाद बाँटा गया जो सभी ने लिया। जैसे एक पाप था, जो चुपचाप ही, उस समाज में सम्पन्न हो रहा था। मानो उस समाजरूपी शरीर का फोड़ा रिस रहा था और उसमें मवाद पड़ गई थी। वह फोड़ा टीस पैदा कर रहा था। किन्तु योग्य चिकित्सक के अभाव में उसका उपचार नहीं हो पा रहा था। वह प्रदर्शन जैसे रोगी के शरीर में आपरेशन सिद्ध हुआ। जो दुराव, भय और लोक-चर्चा की दुर्भावना से ग्रस्त समाज एक-दूसरे से दूर था, वह पल मारते में एक बन गया। दुराव और ऊँच-नीच का भेद मिट गया। उस घिनौनी और अमानवीय परम्परा को ज्यों ही रमिया ने तोड़ देने के लिए आगे कदम बढ़ाया त्यों ही सभी ने स्वीकार किया मानो गाँव का बच्चा-बच्चा एक ही जाति, एक ही धर्म और एक ही मानवता के सूत्र में आबद्ध हो गया।

इसके उपरान्त जलसा हुआ और भाषण सुनने का कार्यक्रम बना। मन्दिर के आँगन में ही वह सम्पन्न हुआ। शहर से आये हुए वक्ता ने इस बात को स्वीकार किया कि हम सभी का पथ-प्रदर्शन जग्गू मेहतो की पत्नी ने किया। इसका फल यह हुआ कि जलसा समाप्त होते ही रमिया को युवकों ने पकड़ लिया और कन्धों पर बैठा लिया। उस समस्त भीड़ ने रमिया को पूरे गाँव में घुमाया। उसके नाम का कई बार जयघोष भी किया गया।

यों वह कार्यक्रम पूरा हुआ। दिन समाप्त हो गया। जब रात आई तो अपना नारियल पीते हुए जग्गू ने कहा—"ले, रमिया! तुझे प्रसाद मिल गया। लोगों ने आज जिस प्रकार तेरे नाम का जयघोष किया, चौपाल में लोग कह रहे थे कि रमिया की भलाई का यही पुरस्कार था। सुनने कहा, मेहतो, तेरी घरवाली ने सभी के दुःख में हाथ बँटाया।" यह कहते हुए जग्गू हँसा—"लोग

कहते है कि मैं वड़ा भाग्यवान हूँ। रमिया को क्या पाया, मैंने कारूँ का खज़ाना पा लिया।"

वात सुनकर, रमिया भी हँसी और वोली—"तो वस, खज़ाना तो पा ही लिया तुमने, अव क्या करोगे, खेत गोड़ कर!"

उसी समय लाठी की खुट-खुट करता हुआ रलिया भी वहाँ आ पहुँचा। मोहल्ले का रामलखा भी आ गया।

रलिया ने कहा—"देख भाभी, आज ज़रूर दूध पीऊँगा। भंग का वड़ा गोला खा आया हूँ। खुश्की वढ़ रही है।"

रमिया ने कहा—"तू ऐसे ही रहेगा, मर जायगा!"

रलिया हँसा—"अव जन्म भ्रष्ट तो करा ही दिया, तूने! भला कोई हुक्का पीने देगा!"

रामलखा ने कहा—"ऐसा तो सभी ने किया। ईमान सभी का गया।"

रमिया वोली—"आज ही ऐसा लगता है, कल नहीं। भला पहली वातें आज कहाँ हैं!"

रामलखा वोला—"आदमी कुछ खोता है, कुछ पाता है। पुरानापन क्या देर तक रहता है!" उसने कहा—"चाची, यह हिन्दू धर्म भी पूरा वनावटी है। पैसे वालों के इशारे पर चलता है। सुना नहीं, जनार्दन पण्डित क्या कहते थे। वे तो कुएँ से दूर खड़े चिल्ला रहे थे—'धर्म भ्रष्ट हो गया!' कलियुग क्या आया, यहाँ तो सभी कुछ लिप-पुत कर एकाकार वन गया!"

रलिया वोला—"कल्लू चौधरी पण्डितजी को दस रुपया दक्षिणा दे तो वे वहाँ भी खीर-पूरी खा आयेंगे। सूर्य के प्रकाश में न जायँगे, तो अँधेरे में हाथ मार आयेंगे!"

रामलखा ने कहा—"ये व्राह्मण लोग भी पैसे वालों के दास वन गये हैं। आज तक गाँव में ज़मींदारों को खुश करते रहे। आज भी ढोंग की रचना में लगे हैं।"

रमिया वोली—"मुझे तो यह भी नहीं रुचता कि व्राह्मण को न्यौता खिलाकर पुण्य होता है। भला भंगी और व्राह्मण में अन्तर क्या है?"

जग्गू ने कहा—"नहीं, रमिया! यही तो समझ का फेर है। व्राह्मण और भंगी में ज़मीन आसमान का अन्तर है। व्राह्मण पवित्र है, देवता है।"

इतना सुना, तो रलिया खिलखिला कर हँस दिया।

रमिया ने कहा—"तुम तो ऐसे ही रहे। इतनी उम्र पाई पर इतना भी नहीं समझ सके। भला क्यों है व्राह्मण देवता! कौनसी भलाई की वात करता है, व्राह्मण! मुझे तो वुरा लगता है।"

रलिया उस समय गम्भीर बना था। वह लाठी पर ठोड़ी टेके हुए था। जब उसने रमिया की बात सुनी, तो बोला—"जग्गू मेहतो, सच पूछो तो भलाई का काम भंगी करता है, पाख़ाना उठाता है; सफ़ाई करता है। और ब्राह्मण··· वह मुफ़्त का खाता है; धर्म का झूठा राग अलापता है। तुम्हारा यह जनार्दन पण्डित क्या धर्म जानता है! मैं तो कभी उसका सुबह मुँह देख लेता हूँ तो उस दिन रोटी भी नहीं पाता। दिन भर भूखा मरता हूँ।"

तभी जग्गू ने अत्यन्त विनीत बनकर कहा—"न, भाई! ब्राह्मण तुम्हें धर्म की बात बताता है, मंदिर में पूजा करता है। तभी तो उसे पुजारी बनाया जाता है। वह वेदों का पण्डित कहाता है।"

रामलखा बोला—"ऐसा नहीं, मेहतो! वैसे यह अधिकार सभी का है। ब्राह्मण को पैदा करने वाला भगवान चाण्डाल को भी पैदा करता है। यहाँ सभी के काम हैं। सभी की विशेषता है। यह बड़ी जाति सभी से बनी है। इस संसार को बनाने में सभी का हाथ है।"

रमिया ने जग्गू की बात लेकर कहा—"पर इसमें ज़िद की क्या बात है! जब तुम दूसरी कौमों के हाथ का खाते-पीते हो, तो भंगी-चमार के हाथ का क्यों नहीं? यह तो सरासर अपराध है कि जो तुम्हारा सफ़ाई का काम करे, उसी को दूर करो। उसे छूने से डरो, भला क्यों? क्या यह अन्याय नहीं है? पाप नहीं है? समय पर वही काम हमें भी करना पड़ सकता है।"

जग्गू ने कहा—"अच्छा भागवान! मैं तो तेरे पीछे-पीछे ही चल दिया। पी आया पानी, उस डोम की छोकरी के हाथ का!"

रमिया ने हंस कर कहा—"मुझे पता है, तुम्हारे मन में चोर था। रलिया ने तुम्हें खेंचा था।"

रलिया भी हँसा—"भाभी, इस ज़माने में औरत ही सब-कुछ है। मैं तो शहर में देखता हूँ कि बाबू मोटर में बैठता है, और बीबी मोटर चलाती है। बाबू घर में रहता है और बीबी दफ़्तर में जाकर नौकरी करती है। जग्गू भैया भी घर में रहे और तू घास खोद कर लाये, तो बुरा क्या है! आजकल औरत सभी रास्तों पर आगे चलती है। वह भागती है, दौड़ती है।"

झिड़ककर रमिया ने कहा—"चुप रह, बातें बना रहा है।"

"नहीं, भाभी! तेरी कसम।" रलिया ने कहा—"आज शहर में यही दीखता है। सच, मुझे तो अच्छा लगता है। और क्या मैंने तुझे यह बताया नहीं कि पार्वती का मुकदमा जिस अदालत में था, उसमें मजिस्ट्रेट आदमी नहीं, औरत थी। पूरी जवान, बड़ी सुन्दर।"

रमिया ने हँस कर कहा—"अरे बातूनी !"

रामलखा बोला—"चाची, आज गाँव भर में तेरी चर्चा है। अब तो यहाँ देर से तेरा ही नाम चल रहा है।"

किन्तु उसी समय, उस घर के छोटे से आँगन में खुशी की जगह चिन्ता का वातावरण बन गया। बात यह थी कि पहले दिन रलियाराम शहर गया था। अस्पताल में हरदेवा के पास भी पहुँचा था। वहाँ जाकर उसने देखा कि हरदेवा की अवस्था अच्छी नहीं थी। उसे बार-बार ऑक्सीजन दिया जाता था। उसके शरीर में खून भी चढ़ाया गया। उसके माँ-बाप परेशान थे। जब रलिया ने हरदेवा की स्थिति का वर्णन किया तो रमिया भी उदास बन गई। जग्गू भी कुछ नहीं बोल सका। उस अवस्था में ही, रामलखा ने बताया कि हरदेवा चला गया, तो उसके घर का दीपक तो बुझ ही जायेगा, साथ ही, इस गाँव का इतिहास भी बदल जायगा। सब का मुँह काला हो जायगा। उसने यह भी कहा कि इस झगड़े में पाँच आदमी अवश्य सज़ा पायेंगे। लाला, पटवारी और ज़मींदार नहीं बचेंगे। जीवन मेहतो लम्बा जायगा।

इतनी बात सुनकर, जग्गू ने कहा—"बस, जीवन जायगा, उसके साथी जायँगे। लाला, पटवारी और ज़मींदार छूट जायँगे।"

रलिया ने कहा—"यही मेरा अनुमान है।"

जग्गू बोला—"ये लोग बाहर आकर एक-एक से बदला लेंगे।"

बात सुनी तो रमिया झल्ला पड़ी—"खाक बदला लेंगे ! अधमरे बन कर निकलेंगे, जेलखाने से ! देखना, अब कुछ भी न बोल सकेंगे ?"

रलिया ने कहा—"लाला का कई हज़ार रुपया उठ गया है। उसने थानेदार की जेब में खूब भरा है।"

रमिया बोली—"पटवारी की दोनों भैंसें बिक गईं। उस दिन देखा उसकी बहू को, मुँह पर मक्खियाँ उड़ रही थीं। कहाँ तो पहले लप-लप बकरी की तरह मुँह चलाती हुई पान चबाती थी। बात भी करती, तो हाथ चलाती। मुँह और आँखें मटकाती थी। चुड़ैल मग़रूर इतना करती कि जैसे ज़मीन से ऊपर चलती दिखाई देती।"

जग्गू ने कहा—"ज़मींदार के लड़के ने भी अपना एक खेत बेच दिया है।"

रामलखा विषाक्त भाव से हँसा—"मेहतो, देखना, सभी कुछ बिक जायगा। बेचारा ग़रीब हरदेवा निरपराध मारा गया है !"

रमिया ने कहा—"उसका शाप सभी को ले डूबेगा।"

रलिया उस समय दूसरी बात सोच रहा था। वह हँसा नहीं, अपितु, गम्भीर

भाव से रमिया की ओर देखकर बोला—"चलो, बिल्ली के भाग्य से छींका टूट गया। लाला जेल क्या गया, जसपत का मुकदमा भी बीच में लटक गया। वह खारिज हो गया। लाला तुम पर भी दावा करना चाहता था, वह भी रुक गया।"

जग्गू ने कहा—"हम तो इस बार उसके रुपये दे देंगे। हम छल नहीं करेंगे।"

उसी समय रमिया ने जिज्ञासा के भाव से रलिया की ओर देखा। जैसे उसने रलिया को एक बार फिर समझना चाहा। तभी उसने कहा—"अरे रलिया, उस पार्वती का अब क्या होगा, रे! वह कहाँ है?"

रलिया ने कहा—"भाभी, सुना था कि वह किसी आश्रम में है। वहाँ पढ़ रही है, काम सीख रही है।"

रमिया ने कहा—"उसके पेट में तो बच्चा था।"

"हाँ, सुना तो था।"

रमिया बोली—"अरे रलिया! वह अभी अबोध है! बच्ची है! भला अभी उसकी उम्र क्या है!"

इतना सुना, तो रलिया ने रमिया की ओर देखा। जैसे वह कुछ और सुनना चाहता था। उसी समय रामलखा उठकर चल दिया।

तभी रलिया ने कहा—"भाभी, एक बात कहता हूँ, मुझ पर अविश्वास न करना। मुझे पार्वती से कुछ नहीं लेना-देना। यह तो मुझे आज भी अचरज होता है कि मैं कैसे इतना बड़ा काम कर सका। जाने भगवान ने कैसा चमत्कार मेरे मन में पैदा कर दिया।"

रमिया ने कहा—"देख, पुलिस के आदमी भी अच्छे नहीं होते। तू शहर जाकर देखना, मालूम करना।"

जग्गू ने कहा—"हाँ, रलियाराम! पार्वती गाँव की लड़की है, बिरादरी की है। वह हमारी भी कुछ लगती है।"

रमिया ने कहा—"जब तक मुकदमा था, तब तक वह छिपी रही, यह तो ठीक था। पर अब वह गाँव भी आये, तो क्या उसे कोई रोकेगा। जसपत जेल से आये तो उसे भी समझाया जायगा! तू पार्वती की खबर लेना।"

रलिया खड़ा हो गया। जाने लगा। वह आश्वासन देकर चला गया।

तेरहवीं बात

निःसन्देह, रमिया के मन का सन्देह व्यर्थ नहीं था। पार्वती नगर में जिस व्यक्ति के घर पर टिकी हुई थी, वह स्वयं ऊँचे विचारों का व्यक्ति नहीं था। जब उसने देखा कि पार्वती को जमीन मिलेगी और यह स्वतन्त्र रह सकेगी, तो उसने स्वतः ही चाहा कि वह सुन्दर युवती उसे प्राप्त हो। उसी अवसर पर रलिया के मन की स्थिति भी अत्यन्त दुरूह थी। जैसे बार-बार उसके मानस में कोई बड़ा झंझावात खड़ा होता और उस समूचे बवंडर को उड़ाकर कहीं दूर ले जाना चाहता। वस्तुस्थिति यह थी कि रलियाराम अविवाहित तो था ही, साथ ही, चरित्र से सात्विक भी नहीं कहा जा सकता था। वह इस बात को भूला नहीं था कि अविवाहित अवस्था में, पार्वती ने अपने बचपन का एक लम्बा समय उसके साथ खेल-कूद में बिताया था। एक बार पार्वती ने अपनी गुड़िया बनाई थी और उसने गुड्डा, तब उन दोनों का विवाह भी सम्पन्न किया था। उस बचपन में ही पार्वती अनेक बार उससे लड़ी भी थी, और फिर मेल करने के लिए आतुर भी बनी थी।

किन्तु उस यौवन-काल में, जब एकाएक ही पार्वती पर विपत्ति आई तो यह एक अलौकिक और अभूतपूर्व बात हुई कि वह आवारा और अल्हड़ प्रकृति का रलियाराम उसके प्रति सद्भाव्य ही बना। स्वयं उसको छलने के लिए लालची नहीं बन सका। कदाचित् उसका आत्मिक और नैतिक बल भी उस समय जाग गया। उसके जन्मगत संस्कार भी सहायक सिद्ध हुए। उस अवस्था में वह जितना भी पार्वती को सहयोग दे सका, वह निश्चय ही, उसके किन्हीं भले संस्कारों का प्रसाद था। जिसके लिए रमिया की प्रेरणा भी सहायक बनी। वह भी उसे बार-बार कुरेदती और उत्साहित करती रही। उस अवसर पर वह रलिया को सदा बताती कि भला बनना ही इन्सान का काम है। कदाचित् यही कारण था कि वह गाँव भर की समस्त औरतों में रमिया का आदर करता था। उसकी प्रत्येक बात मान लेता, झिड़कियाँ भी सह लेता। रमिया का वह अपनी माँ से भी अधिक आदर करता था। उसे गुरु भी मानता और वात्सल्य-

मयी माता भी समझता था।

फलस्वरूप जब उस रात में रमिया ने अपने घर पर रलिया के समक्ष एकाएक ही पार्वती की बात उठाई तो वह घर जाते-जाते एकदम बेचैन हो गया। सचाई यह थी कि उसके पास ऐसा कोई निर्णय नहीं था कि अब वह पार्वती के लिए अपने किस कर्तव्य का आश्रय ले, कौनसा कार्य सम्पादित करे। यदि वह चाहता, तो पार्वती को साथ लेकर कहीं दूर जा पहुँचता, वह उसकी असमर्थता और हीनता का पूर्ण लाभ उठाता परन्तु ऐसा उसने नहीं किया। एक बार भी पार्वती से नहीं कहा। उसके मानस में जो हीन भावना देर से परिव्याप्त थी, वह जब भी सिर उठाती, रलियाराम से कुछ कहना चाहती, तो वह अत्यन्त क्रूर तथा बर्बर बनकर उसका मुँह कुचल देता। मानो वह रलिया, किसी योग की साधना करने का अभ्यास कर रहा था। वह अपने जीवन में एक ऐसा परीक्षण करने के लिए प्रस्तुत हुआ कि जिसके लिए वह अयोग्य था—सर्वथा हीन! परन्तु फिर भी वह ऐसा करना चाहता था। मानो यही उसकी आत्मा का सन्देश था। साक्षात् भगवान उसके मन में आकर उसका नेतृत्व कर रहा था। अपनी इच्छा और आकांक्षाओं की पोट बगल में दबाये हुए भी, पार्वती को बिलकुल अपनी मुट्ठी में पाकर भी, रलिया ऐसा साहस नहीं कर सका कि उससे कहे—ऐ पार्वती! आ, हम-दोनों इस जगत् की भीड़ में खो जायें। एक दूसरे के जीवन में मिल जायें। बचपन में हमने जिस गुड़िया-गुड्डे का ब्याह रचा था, उसे अब सार्थक करें—उसे मान लें। हम दोनों की आत्मा और शरीर एक हो जायें। लेकिन अपने मन की उस अवस्था में ही, अपने अन्तःप्रदेश के उस झंझावात में उड़ते हुए ही, रलियाराम जब-जब नगर में पहुँच कर पार्वती से जाकर मिला, तब-तब उसने पाया कि उस यौवनमयी पार्वती के सुन्दर होठों पर आदमी को आकर्षित करने वाली मुसकान नहीं, अपितु विषैला और कषैला भाव ही उन होठों पर विराजमान है। पार्वती की वे मधुर आँखें कि जिन्हें कभी रलियाराम भी लालचभरी दृष्टि से देखता था, उस समय न हँसती दिखाई पड़तीं, न बोलतीं। अपितु, रलिया को देखते ही, पार्वती रो पड़ती। वह तुरन्त ही उससे उन आँखों द्वारा जैसे अपने मन की वेदना का बखान करना चाहती।

फलस्वरूप, पार्वती के मानस की ऐसी स्थिति देखते ही, रलियाराम जैसे बरबस ही, आसमान से पृथ्वी पर गिर पड़ता। वह सूर्य के खुले प्रकाश में उस पार्वती को देखकर भी, उसके मानस में समाहृत उस वेदना को समझ लेना चाहता जिसके कारण उसकी आँखों में आँसू और होठों पर पीड़ा थी। वह

पार्वती की व्यथाओं से उस पीड़ित संसार में स्वयं भी खो जाता। एक वार नहीं, कई वार ऐसा हुआ कि पार्वती को रोती देख, रलियाराम स्वयं भी रो पड़ा। वह उसे समझाता, वार-वार वताता कि वह अकेली नहीं है, उसके साथ भगवान है। वह स्वयं है। वह पार्वती के लिए अपने प्राण दे सकता है। वह अनेक वार पार्वती को वता चुका था कि मेरा-तेरा साथ वचपन का है, गाँव का है, इन्सानियत का है। तुझे विपत्ति में देख, मेरा कर्तव्य मुझे टंकोरता है। मेरा भगवान भी मुझसे कुछ कहता है।

लेकिन पार्वती की उस अवस्था के साथ, अन्य किसी ओर से रलियाराम को यदि चेतना प्राप्त हुई, तो वह रमिया थी। उस स्थिति में ही, रलिया को यह भी देखकर अच्छा लगा, मानो उसे जीवन में एक नया ज्ञान प्राप्त हुआ कि मेरे समान यह अपढ़ और लड़ाकू देहातिन रमिया जव अपनी आत्मा की वाणी सुन सकती है, तो मैं क्यों नहीं! अतएव, रमिया की वात भी वह याद रखता कि पार्वती विपत्ति में है, मदद माँगती है। उसे धोखा न देना। आदमी रहना, राक्षस न वन जाना!

कदाचित् एक यह भी कारण था कि रलिया जव-जव शहर जाकर पार्वती से मिला, तव-तव वह उसके दुःख-सुख की वात मालूम करने के अतिरिक्त और कुछ न कह सका। उसने कुछ कहना भी नहीं चाहा। वह उसे सान्त्वना देने और आगे भी सहायक वना रहने की वात कहता रहा।

किन्तु उस रात में जव रमिया ने पार्वती की वात उठाई, तो रलियाराम सारी रात देर तक करवटें वदलता रहा। सुवह होते ही, वह शहर की ओर चल पड़ा। दोपहर होते-होते वहाँ पहुँच गया। उसके जिस सम्वन्धी अर्थात् पुलिस सिपाही के यहाँ पार्वती ठहरी थी, वहीं जाकर उससे मिला। किन्तु उस समय रलिया को यह देखकर अत्यन्त विस्मय हुआ कि पार्वती ने रलिया को देख, मुँह से तो कुछ नहीं कहा, अपितु जार-जार रोना आरम्भ कर दिया। जव रलिया ने उसका कारण जानना चाहा, तो वह अपने स्वर पर झटका-सा देकर पीड़ित भाव से वोली—"रलियाराम, मेरा भाग्य फूटा है। तेरा यह सम्वन्धी भी मुझे अन्धेरे में डालना चाहता है। मेरा जीवन नाश करने की वात सोचता रहता है!"

रलिया ने इतनी वात सुनी, तो उसे तैश आ गया। क्रोध से उसका मुँह सुर्ख हो गया। उसके होठ फड़क उठे।

पार्वती ने कहा—"मेरे लिए अव कहीं भी ठौर नहीं है, रलियाराम! वस, नीचे धरती है, ऊपर आसमान।"

रलिया ने कहा—"चल, उठ। इस घर से निकल।" और वह स्वयं खड़ा

हो गया। उसी समय पार्वती को साथ लेकर बाहर चल दिया।

पार्वती ने कहा—"पर कहाँ···अब किस ओर ?"

"मैं तुझे आश्रम में ले चलूँगा, पार्वती ! वहाँ कुछ सीख लेना। अपने पैरों पर खड़े होने की बात समझ जाना।"

जैसे निरुपाय बनकर पार्वती चल दी। वह उस मकान से बाहर हो गई। उस नगर के कई बाजार उसने पार किये और फिर एक आश्रम के द्वार पर पहुँच गई। वहाँ जाकर रलिया ने मैनेजर से पार्वती का परिचय कराया, सब हक़ीक़त बताई। उसने पार्वती को वहाँ दाख़िल करने के लिए निवेदन किया। उसी समय उसने मैनेजर और वहाँ की व्यवस्था को समझने का प्रयत्न किया। उसने देखा कि प्रौढ़ आयु का वह मैनेजर किसी नवाब से कम नहीं लग रहा था। वह मसनद के सहारे बैठा हुआ था। फ़र्शीदार हुक्का उसके सामने रखा था। रलिया की बात सुनी तो उसने अपनी आँखों पर लगे सुनहरे फ्रेमदार चश्मे के अन्दर से झाँका और पार्वती को देखा। तभी उसने बताया कि यह आश्रम आम नहीं है, विधवा स्त्रियों के लिए है। फिर भी उसने पार्वती की अवस्था को देखकर, उसे आश्रम में दाख़िल कर लिया। फ़ार्म भर दिया गया। जब पार्वती आश्रम में प्रविष्ट हो गई, तो उसने आँखों में आँसू भरकर रलियाराम की ओर देखा। वह उस समय भी दुःखी थी, वेदना से पीड़ित थी। यह देख, रलिया ने कहा—"शांति से काम ले, पार्वती ! तू यहाँ अपना कुछ समय और बिता ले। मैं आया करूँगा। तेरा ससुर जेल से आयेगा, तो उससे भी मिलूँगा, तेरे बाप से भी कहूँगा। उसे समझाऊँगा।"

पार्वती ने कहा—"अब मैं उन देखे-बरते घरों में नहीं जाऊँगी, रलियाराम ! ससुराल के गाँव में भी नहीं घुसूँगी।"

रलिया ने हाथ में ली हुई लाठी को पत्थर पर बजाया। उसने कहा—"पर तेरे हिस्से की जमीन का भी तो कुछ होगा। बता उसका निपटारा किस तरह किया जायगा ?"

पार्वती ने कहा—"मैं कुछ नहीं लूँगी, रलियाराम ! अब तो मौत लूँगी—मर जाऊँगी !"

पार्वती ने फिर कहा—"तेरा सम्बन्धी सिपाही भी लम्पटी निकला। वह इतनी मदद भी मतलब से करता रहा। पता है, वह इधर कई दिनों से मेरे पीछे पड़ा रहा। उसकी औरत भी मुझे फुसलाती रही। उनके कोई बच्चा नहीं है। बीमार रहती है। अपने आदमी का दूसरा विवाह देखना चाहती है। इसी-लिए मुझे समझाती रही···कमीनी औरत !"

रलिया ने आतुर बनकर कहा—"हाँ, पार्वती ! उसके मन में भी लालच होगा। घर का काम करने को औरत मिलती, तेरी जमीन मिल जाती। स्वार्थ ही तो इस दुनिया में भरा है। नहीं तो यहाँ किससे, किसका क्या नाता है ! आदमी मतलब देखकर ही बात करता है, सम्बन्ध जोड़ता है।"

उसी समय आश्रम की सेविका आई और वह पार्वती को अपने साथ ले जाने लगी।

रलिया ने कहा—"चिन्ता न करना। मैं आऊँगा, मिलूँगा। कोई बात हो तो पत्र लिखवा देना। मुझे बुला लेना।" वह चला गया। उसी दिन वह फिर गाँव पहुँच गया। किन्तु उस दिन रलिया के मन में चैन नहीं था। वह इस बात को पूर्णरूप से समझ चुका था कि पार्वती जिस रास्ते पर चली है, वह भी उसके लिए उपयुक्त नहीं, अनुकूल नहीं। और रलिया देख रहा था कि उसमें स्वयं इतनी शक्ति नहीं कि वह पार्वती के बोझ को स्वयं उठा ले। उसे जितना सहयोग दे सकता था, उसने दिया। अब आगे नहीं चलेगा। पार्वती को अकेली ही छोड़ देगा। वह पीछे रह जायेगा। उसे आगे जाने देगा।

जब दूसरे दिन वह रमिया से मिला, तो उसने सभी-कुछ बता दिया। सुनकर, रमिया एकाएक कुछ नहीं कह सकी। उसका पति जग्गू भी उस वार्ता को सुनकर, पार्वती की समस्या में डूब गया।

रलिया ने कहा—"मुझे वह आश्रम का मैनेजर भी भला नहीं लगा। मुझे ऐसे लगा कि जैसे वह सुन्दर शरीर धारण किये, उसे कपड़ों से सजाये, कोई छद्म-वेशी था···कोई घिनौना और क्रूर राक्षस ही अपना रूप छिपाये बैठा था। उसने बड़ी तीखी दृष्टि से पार्वती को निहारा था।" वह बोला—"भाभी, शहरी आदमी ठीक से नहीं समझा जाता···सरलता से नहीं ! इस बहुरंगी कपड़े में सभी दोष छिप जाता है। चोर और डाकू भी सन्त-महात्मा लगता है !"

रमिया ने जैसे चिढ़कर कहा—"अरे, औरत के लिए इस धरती पर जगह नहीं है। देखता नहीं, जिस तरह बिल्ली आँख मूँदे बैठी रहती है, पर अपना शिकार देखते ही, कान उठाकर झपटती है, ठीक इसी तरह आदमी भी सुन्दर औरत और पैसा देखकर, कुछ से कुछ बन जाता है···जैसे देवता से राक्षस··· सच, पार्वती इस भरे संसार में अकेली है ! आज उसका कोई नहीं है। उस पर विपत्ति की मार पड़ रही है। अपने ही पराये बन गये हैं···माँ-बाप और ससुराल वाले ही···!

रलिया ने प्रश्न किया—"अब उसकी माँ क्या कहती है ? क्या वह लड़की को भूल चुकी है ?"

रमिया ने तुरन्त ही, मुंह विचका कर कहा—"वह महा नीच है। बात करो तो लड़ती है; गालियाँ देती है। उस दिन मेरे मन में तो आया था कि सिर फोड़ दूँ, गला घोंट दूँ ऐसी चुड़ैल का !"

जग्गू ने कहा—"तुम्हें लड़ने से क्या मतलब ! न समझे, तो जाय भाड़-भट्टी में !"

रलिया ने गम्भीर स्वर में कहा—"पर इस समस्या का निस्तार भी होना चाहिए। बोझ मुझ पर पड़ा है। जब शहर जाकर पार्वती को देखता हूँ, तो सच, दिल दुखता है। मेरे शरीर का रोंया-रोंया खड़ा हो जाता है।"

रमिया ने कहा—"जसपत आयेगा, तो बात बनेगी। उससे ही कहा जायगा। वह समझ लेगा।"

जग्गू ने कहा—"हाँ, उसकी समझ में आ जायेगा।"

रलिया उठकर चल दिया। वह बस्ती से निकल कर जंगल की ओर बढ़ गया। जब वह एक जुते हुए खेत के किनारे पहुँचा, तो तभी, तीन-चार किसानों ने उसे देखकर रोका। पास बुलाया। उसे देखते ही, एक बोला—"अरे, रलियाराम ! सुना ना, उस जसपत की लड़की का क्या हाल है ? मुकदमा तो वह जीत गई, पर अब क्या करेगी ? क्या शहर में रहेगी अकेली ?"

रलिया ने कहा—"भाई, मैं कुछ नहीं जानता। तुम्हारी तरह मैं भी नहीं समझता।"

एक ने तभी आँख मारी और कहा—"अरे, हमें सब पता है, रलियाराम ! काम तेरा है। मुकदमा भी तूने ही लड़ाया। यह तो तेरी बहादुरी की बात है कि उस लड़की को सहारा दिया। बाप और ससुर को जेलखाने भिजवा दिया। पर अब क्या···हाँ, आगे···?"

रलिया खेत की मिट्टी के एक ढेले को लाठी से तोड़ रहा था। उसने बात सुनी, तो बोला—"भैया, मेरा कोई हाथ नहीं। वह लड़की क्या करेगी, मैं यह भी नहीं जानता।"

एक ने कहा—"हम कहते हैं कि जब उसको और कोई ठौर नहीं, तो क्यों नहीं उसे अपने घर में रख लेता। तेरा भी घर बस जायगा।"

रलिया ने कहा—"नहीं ! नहीं ! यह कैसे होगा। गांव की लड़की गांव में कैसे रहेगी ! एक घर की लड़की···एक की बहू···ना रे, चेतराम ! मुझे पड़ोस की दुश्मनी नहीं लेनी। जसपत भी इस जहर को हजम नहीं कर सकेगा।"

चेतराम ने कहा—"उल्लू है, तू तो ! शहर में तो ऐसे ही ब्याह-शादी होते हैं। मुसलमानों में तो दूध ही बचाकर रिश्ता कर दिया जाता है। किसी के घर

में फूफी की लड़की, किसी की मामी की…हाँ, रलियाराम! यह सौदा अच्छा रहेगा। चुपड़ी और दो-दो, तेरा खर्च भी न होगा और घर भी बस जायगा। कोई इसे पाप नहीं समझेगा। तेरा दोष भी नहीं मानेगा।"

रलिया ने बात सुनी, तो हँस दिया। वह दूसरी ओर देखने लगा।

चेतराम बोला—"और सुना, अब हरदेवा के मुकदमे का क्या होगा? सुनते हैं, लाला का बहुत रुपया खर्च हुआ। अरे, हाँ, बता तो, हरदेवा बच भी जायगा…सच, बेचारा हरखू! उसका लड़का न रहा तो वह भी न रहेगा, …जल्दी ही मर जायगा!"

रलिया ने कहा—"भाई, भगवान जो करेगा, वही होगा।"

"हाँ, रे! यह तो ठीक है, पर आज तो आदमी ही भगवान बन गया है। ज़मीन और आसमान के कुलावे मिलाने लगा है। खुद परेशान बनकर दूसरे को भी परेशान कर रहा है।"

रलिया ने कहा—"आदमी समझदार अधिक हो गया है! अब यह बदल चुका है। आँखें चार बन गई हैं, हर आदमी की!"

उसी समय आसमान में उड़ता हुआ एक हवाई जहाज़ उधर से निकला। उसकी घुर्र-घुर्र की आवाज़ सुनकर, सभी ने ऊपर मुँह उठाकर देखा। रलिया बोला—"देखते हो न, हवा के परों पर आदमी तैरता है। घण्टों का रास्ता मिनटों में पार करता है। आदमी सात-समुन्दर के ऊपर उड़ता चला जाता है!"

उनमें से जो युवक था, उसने कहा—"हाँ, रलियाराम! सचमुच! और तूने देखा होगा, मुझे भी शहर में ही देखने को मिला कि एक आदमी बात कर रहा था और दूसरा जाने कहाँ से—कहीं दूर से जवाब दे रहा था। ऐसा ही है, उस मशीन का नाम…मैं भूल गया…"

रलिया ने हँस कर कहा—"टेलीफ़ोन।"

"हाँ, हाँ, टेलीफ़ोन। भई, बड़ी अजीब चीज़ है, वह भी। मैं तो देर तक खड़ा-खड़ा देखता रहा। वह लाला बड़े ज़ोरों से बोल रहा था। किसी पर गुस्सा भी हो रहा था। शायद कोई सौदा कर रहा था।"

चेतराम ने कहा—"अरे, मैंने तो एक बार वह टेलीफ़ोन वकील के कमरे में देखा था। जब वकील उठकर दूसरे कमरे में गया, तो तभी, उसकी लड़की वहाँ आई और हँस-हँस कर थिरकती हुई बात करने लगी, अपनी किसी साथिन से। बस, मैंने नाम ही सुना। ऐसा ही था, उसका नाम—हाँ, सावित्री। फिर तो उसने अंग्रेज़ी में देर तक गिट-पिट की। जब वकील फिर उस कमरे में आया, तो वहाँ से गई। ज़रूर, वह लड़की कोई डिगरी प्राप्त कर चुकी होगी।

सच, मैं तो मुंह ही देखता रहा उसका, कितना सलीका और शऊर था, उसमें। कोई कह सकता है कि वह घूंघट काढ़ने वाली औरत बनेगी। पूरी मेम साहब ! भला वह गांव की औरत की तरह घर का चूल्हा, चक्की और बर्तन मांजने का काम कर सकेगी···अरे, राम···राम !"

रलिया ने बात सुनी तो खिलखिला कर हंस पड़ा। उसी अवस्था में उसने कहा—"भैया, अब ज़माना बदल गया है। इन्सान की बात भी हवा के परों पर तैरती है और आदमी भी। देखता नहीं कि एक मशीन सौ आदमियों का काम करती है। जितना बैलों का चारा तुम आठ घण्टे में काट पाते हो, उतना मशीन बीस मिनट में काट कर रख देती है। इसी तरह शहर का आदमी बदला है, तो वहाँ की औरत भी बदल चुकी है। जिन्दगी को देखने की निगाह भी उनकी दूसरी हो गई है !"

चेतराम बोला—"मैं तो कुट्टी की मशीन ला रहा हूं, रहट भी लगवा रहा हूं।"

रलिया ने कहा—"अब तो सभी ऐसा करेंगे। दूसरे गांवों में तो आटा पीसने की भी चक्की लग गई है। शहरों में मशीन आई, तो समझो, गांवों में आते क्या देर लगती है !"

चेतराम ने कहा—"लेकिन इससे आदमी बेकार हो जायगा, रलियाराम !"

रलिया ने कहा—"होगा ही ! अब तो यह करना ही पड़ेगा! आदमी मशीन के साथ नहीं भाग सकेगा। मशीन का मुकाबला तो मशीन से ही करना पड़ेगा।"

तीसरा व्यक्ति जो देर से खड़ा बातें सुन रहा था, बोला—"और वह रेडियो भी कभी सुना रे, रलियाराम ! खूब बोलता है। बड़ा मज़ा आता है।"

रलिया ने कहा—"शहर जाता हूं, तो खूब सुनता हूं। हमीरपुर के चौधरी के यहाँ है। वह बैटरी से चलता है।"

उस व्यक्ति ने कहा—"क्यों रलियाराम, भला कैसे आते हैं ये गाने···ये बोलने वाले ? एक दिन तो मैंने लाउड स्पीकर से एक बड़े नेता का भाषण सुना था।"

रलिया बोला—"भैया, यह चमत्कार की बात है ! आज के युग की बात। कहते हैं लोग कि विज्ञान है यह। पर मैं उसे नहीं समझता। यह भी सुना है कि आसमान में लहरें दौड़ती हैं। वे हवा पर चलती हैं। रेडियो उन्हीं को पकड़ता है।"

उस व्यक्ति ने कहा—"वाह-वाह ! पूरी करामात है !"

रलिया हँसा और वहां से आगे बढ़ता हुआ बोला—"यही आज के युग की करामात है, भैया ! तभी तो आदमी बदल रहा है···सभी कुछ बदल रहा है··· ज़िन्दगी को देखने का तौर-तरीका भी दूसरा हो गया है।"

चौदहवीं बात

शहर से चली बात गाँव में आती और चारों ओर फैल जाती। वह बिजली के करंट के समान आदमी को छू देती और चौंकाती। हरदेवा के साथ की गई मार-पीट में जो व्यक्ति गिरफ़्तार हुए, उनमें अधिकांश की ज़मानत हो गई। लोगों की फ़सल कट गई और दाने घर में आ गये। जसपत भी जेल की अवधि पूरी करके घर लौट आया। वह जेल में बीमार पड़ गया था, इसलिए दुर्बल था। मानो सचमुच ही, उसने कोई चोरी की थी, इसलिए चुपचाप ही आया और घर में बैठ गया। लगा कि जसपत के पास कोई बड़ा इरादा था। जेल से वह किन्हीं विशिष्ट विचारों की पोटली बाँध लाया था। फलस्वरूप, वह प्रतिक्रियावादी बना था।

उन्हीं दिनों की बात है कि ज़मींदारी खत्म होने का कानून पास हुआ और वह सर्वत्र लागू कर दिया गया। ज़िले में, या देश में, कहाँ डाका पड़ा, लूट हुई और खून किया गया, यह सब आये दिन गाँव वालों को सुनाई देने लगा। उन्हीं दिनों गाँव की चौपाल पर सरकार की ओर से एक रेडियो लगा दिया गया था। मलिकपुर में एक पंचायत स्थापित हुई और उसका सरपंच बनाने के लिए लोगों में संघर्ष आरम्भ हो गया। लगता था कि उस चुनाव पर लोगों में विवाद बढ़ेगा, पुराना वैमनस्य फिर जाग उठेगा। किन्तु उस समस्या का हल करने के लिए लोगों ने जिस चतुराई से काम लिया, वह सचमुच ही अभूतपूर्व रहा। नगर के एक नेता ने आकर उस विवाद को शान्त किया और रमिया के सिर पर सरपंची का सेहरा बाँध दिया। निश्चय ही, इस प्रकार का प्रयत्न रलिया और उसकी जवान पार्टी का था। गाँव की हठधर्मी को शान्त करने का भी यही तरीका बेहतर था। जब रमिया का नाम आया, तो किसी ने भी चूँ नहीं की। उस औरत के समक्ष सभी का सिर झुक गया। यों, सुगमता से लोगों ने जैसे उस पंचायत को भी खेल समझ लिया। किन्तु जो देर से गाँव के सिरमौर बने थे, उनके दम्भ को मारने का इससे श्रेष्ठ उपाय उस समय दूसरा नहीं था।

किन्तु रमिया ऐसा नहीं चाहती थी। वह अपने को उस पद के लिए अयोग्य

मानती थी। जग्गू को इस बात का भय था कि अब गाँववाले हमसे और अधिक जलेंगे, खार मानेंगे, कुढ़ेंगे; क्योंकि जग्गू अपने को ऐसा भाग्यशाली व्यक्ति नहीं मानता था कि गाँव में उसका या उसकी घरवाली का सम्मान हो। वह अपने को निर्धन और असहाय समझता था। यद्यपि उसका घर पिछले कुछ समय से लोगों के बैठने का स्थान बन गया था, लेकिन जब रमिया सरपंच बनी, तो उन लोगों का भी आना-जाना आरम्भ हो गया जिन्हें कभी भी, उस घर में आना न शोभनीय प्रतीत होता था और न प्रिय ही लगता था। ऐसे व्यक्तियों में पटवारी, जमींदार और लाला धनपतराय भी थे। यों, हवा का रुख बदला और रमिया के जीवन का दृष्टिकोण; जिन्दगी को चलाने और समझने का रास्ता भी बदल गया। भाग्य की बात थी कि जग्गू के खेतों से उन दिनों इतनी प्राप्ति हुई कि लाला का रुपया दे दिया गया और जग्गू अपना नित्य का काम भी सुगमता से चलाने लगा।

उस अवस्था में ही, एक रात जब घर में कोई बाहर का आदमी नहीं था, तब चारपाई पर पड़े हुए जग्गू ने रमिया को टँकोरा और कहा—"सुनती है, यह पंचायत भी एक तमाशा बन गई है। हमारा भी तमाशा हो गया है!"

रमिया ने बात सुन ली और मत नहीं दिया।

जग्गू फिर बोला—"रमिया, तेरे लायक यह काम नहीं, शोभनीय भी नहीं! बता तो, हमें इससे क्या मिलेगा! बैर ऊपर से बढ़ेगा।"

रमिया ने फिर भी जग्गू की बात का उत्तर नहीं दिया। उसने बात को पी लिया।

जग्गू बोला—"हरदेवा का मुकदमा भी चल पड़ा है। इस महीने में ही पहली पेशी होगी। वह अपना बयान देगा। भगवान ने अच्छा किया कि हरदेवा बच गया। सुना है कि अब अस्पताल में चलने लगा है। दस-बीस दिन में घर भी आ जायगा।" यह कहते हुए जग्गू चौंका और बोला—"अरी सो गई? ओ, रमिया!"

रमिया ने करवट बदली और कहा—"सो जाओ। मुझे नींद आ रही है।"

जग्गू ने दुलार के स्वर में कहा—"ओहो, नींद आ रही है!" और वह बोला—"जी, हाँ, सरपंच का सेहरा जो बँधा है। भई, बड़ा काम है, इन रामप्यारी देवी जी के ऊपर!"

किन्तु रमिया ने जवाब फिर भी नहीं दिया। वैसे जग्गू की बात उसने सुन ली। वह उसके पेट में उतर गई। इसके बाद जग्गू भी सो गया।

दूसरे दिन के प्रातः काल में जब जग्गू कहीं बाहर से आया, तो देखता है कि

रमिया के पास रलिया और रामलखा मौजूद हैं। उन दिनों रामलखा रमिया का मुन्शी बन गया था। लिखने-पढ़ने का काम वही करता था। पंचायत से उसे कुछ मिलने का भरोसा था।

उसी समय रलिया कह रहा था—"भाभी, तूने लोगों को देवता समझ लिया है, क्या! इस गाँव के लोग पूरे राक्षस हैं, राक्षस! अपनी जात के एक ही कमीने!"

बात सुनी, तो रमिया मुस्करा दी—"हाँ, रलियाराम! मैं भी जानती हूँ। इतना समझती हूँ। इस गाँव में पैदा नहीं हुई तो क्या, पूरे बीस वर्ष यहाँ बिता चुकी हूँ।"

रलिया ने कहा—"तो कहना क्या है! अब क्या करना है!"

रमिया ने कहा—"मैं अभी कुछ नहीं कहती। हरदेवा आयेगा तो उससे बात करूँगी। तभी तो सब बात समझूँगी!"

रलिया ने जग्गू को देखकर कहा—"सुना, क्या कह रही है भाभी! कहती है, हरदेवा का झगड़ा यहीं समाप्त हो जाय। भला कोई पूछे इससे, पुलिस का मामला है। मुकदमा उसी ने बनाया है। उसने चालान किया है। लोग जमानत पर हैं।" फिर उसने रमिया की ओर देखकर कहा—"तूने की न औरत वाली बात! आखिर है तो औरत ही···दब्बू और कमज़ोर···दया, ममता वाली!" वह बोला—"मैं तभी कहता था, सरपंच कोई तगड़ा आदमी बने। ज़हरीले साँप को दूध पिलाने से तो उसका ज़हर बढ़ता है, वह और मोटा बनता है। उसी साँप के काटने से तो आदमी मरता है।"

रमिया ने मुस्करा कर कहा—"रे, रलियाराम! सरपंच भी तुम लोगों ने मुझे बना दिया। ज़मीन से उठाकर ऊपर बैठा दिया।" यह कहते हुए रमिया गम्भीर बन गई और बोली—"और भैया, मैं तो हूँ ही औरत, तब इसमें अचरज की क्या बात! मैं लड़ने-मरने की बात नहीं कह सकती। और अब तो मेरे मुँह से ऐसी बात निकलना कभी भी शोभनीय नहीं···।"

रामलखा उस समय मौन था। गम्भीर बन गया था। जग्गू भी अपना नारियल भर कर बैठा था।

तभी रामलखा ने कहा—"रलियाराम! चाची का कहना हल्का मत आँको। देखते हो ना, गाँव में आग लगी है। गाँव जल रहा है। यही हालत रही, तो जल्दी ही, सभी कुछ जल जाने वाला है!"

इतना सुनकर, रलिया भी गम्भीर बन गया। वह चारपाई पर बैठा हुआ, जूते से धरती कुरेदने लगा।

रमिया ने कहा—"हरदेवा मान जाय, तो सभी कुछ ठीक हो जायगा। मुकदमा रद्द हो सकेगा। नहीं तो इस प्रकार गाँव में रंजिश बढ़ेगी। लोगों का पैसा भी बरबाद होगा। कल मैंने लाला, जमींदार और पटवारी तीनों को बुलाया था। उनसे बात भी की थी।"

चौंक कर रलिया ने पूछा—"तब···क्या कहा उन्होंने ?"

रमिया बोली—"उन्होंने तो कहा कि जैसा कहोगी, वैसा करेंगे।"

जग्गू—"उनका भी बहुत पैसा खर्च हुआ। मामला गहरा है। किसी का छूटना क्या आसान है ! देखते हो ना, इस महँगाई में सभी गाँव मालदार बन गये, पर यह गाँव कूड़े का ढेर बना है ! यहाँ का किसान भूखा है। हाँ, भैया, लड़ाई को दबाना अच्छा है। गाँव में प्रीत बढ़े, तुम सभी को ऐसा ही प्रयत्न करना चाहिए।"

रलिया ने कहा—"मेहतो, मैं इन साँपों को जानता हूँ कि ये किस तरह फुँफकारते हैं। समय पड़ने पर काटते हैं। इनके काटे की दवा भला किसके पास है !"

रमिया हँसी—"अरे, तूने तो इन लोगों से भी लाभ उठाया है। लाला से खूब रुपया लिया है। पटवारी और जमींदार भी तेरी पीठ सहलाते हैं !"

रलिया बोला—"लाला अपनी गरज के लिए रुपया देता है। और वे लोग कितने गहरे हैं, मैं जानता हूँ। ये सभी भाई को भाई से लड़ाना चाहते हैं। धरती के इस छोटे से टुकड़े पर बसे इस गाँव को इन्हीं लोगों ने तबाह किया है, एक को दूसरे का दुश्मन बना दिया ! लाला समझता है कि मैं इतना बुरा हूँ कि उसका भी सिर जब चाहूँ तोड़ सकता हूँ। इसी से वह कभी-कभी मेरे सामने टुकड़ा डालता है। चालाकी से काम लेता है। समझता है कि दस आदमियों का खून पीया, एक को दो बूंद दे दीं तो अपना उल्लू सीधा करने में आसानी रहेगी। सच, वह पूरा कमीना है !"

रमिया ने कहा—"मूर्ख ! फिर भी उसके पास जाता है। इतना समझ कर भी दास बनता है !"

"भाभी, यह भी मेरा स्वार्थ है ! भला मेरा कौन-सा बड़ा रोजगार है।"

रमिया बोली—"नहीं, तू भी अपना रास्ता बदल दे। जानती हूँ कि तू इधर-से-उधर बातें फैलाता है। जब आदमी के पास कोई काम नहीं होता, तो समय काटने के लिए वह व्यर्थ की बातें करता है। भला, तुझे लोगों ने दूसरों की बुराई-भलाई की बातें करने से क्या लाभ ! गन्दा पानी उछलता है; तो उससे बदबू फैलती है, गांव की शांति नष्ट होती है।" उसने कहा—"लोग चौपाल

में बैठकर यही बातें करते हैं। कोई भलाई की बात नहीं करता। दूसरों की बुराई या नुक्ताचीनी करके अपना समय बरबाद करते हैं। पूरे जंगली बने हैं!"

उसी समय रलिया कुछ कहने चला था कि तभी, कल्लू चौधरी और उसकी औरत वहाँ आये। वे अन्दर आकर बैठ गये। देखकर रमिया ने कहा—अरे, क्यों? कैसे आये तुम दोनों?"

कल्लू ने कहा—"ठकुराइन, हमारी तो बड़ी मुसीबत में जान आई है। तुम्हीं समझाओ ना, उस माला को! कहती है, मैं ब्याह नहीं करूँगी। कुएँ में डूब मरूँगी!"

उसकी औरत बोली—"सयानी लड़की है। सभी-कुछ समझती है। मारने-धमकाने की बात भी···।"

रमिया ने कहा—"तो ब्याह की ऐसी जल्दी क्या है! क्या वह बुढ़िया हो रही है।"

जग्गू बोला—"वाह! माँ-बाप को तो फ़िक्र है। सिर से बोझ जितनी जल्दी उतर जाय, उतना ही ठीक।" उसने कल्लू की ओर देखा—"क्यों रे, कोई बात भी कहती है वह?"

कल्लू ने कहा—"लड़की हमारा मुँह काला करना चाहती है। मुझे लगता है कि मेरे हाथों···।"

रमिया ने कहा—"कल्लू, धीरज से काम ले। चिन्ता न कर। मैं भी उसे समझाऊँगी, पूछूंगी। वह गाँव की और लड़कियों सरीखी गँवार नहीं, पढ़ी-लिखी है, समझदार है।"

कल्लू बोला—"तुम्हारा भगवान भला करे, ठकुराइन। मुझे बड़ी चिन्ता है। वैसे उसका रिश्ता एक ऊँची जगह से आया है। लड़का सरकार के दफ़्तर में नौकर है। कई सौ रुपये तनख्वाह पाता है। माला के मामा ने देख लिया है।"

रलिया ने कहा—"कुआँ प्यासे के पास आ गया है, क्यों?"

कल्लू ने तुरन्त कहा—"हाँ, मेहतो। बात यही है।" वह बोला—"उस लड़के से भी माला के मामा का दूर का सम्बन्ध है। जाना-पहचाना है। सुना है कि वह काफ़ी पढ़ा है।"

रलिया ने कहा—"शहर के आदमी गँवार थोड़े ही होते हैं, पढ़े-लिखे होते हैं। और तुम्हारी माला क्या किसी गँवार के घर जायगी, वह खुद पढ़ी है। वह भी शहर में रहना पसन्द करेगी।"

कल्लू बोला—"पर मेहतो, अब तो जाने उसके मन में क्या आ गया है। पढ़ाई में भी उसका मन कम लगता है। नहीं तो, उसका मामा कहता था,

अभी और पढ़े। पर गाँव के रंग-ढंग देखकर मुझे अच्छा नहीं लगता।"

उस समय, प्रस्तुत वार्ता में रमिया की दिलचस्पी नहीं थी। उसने बात खत्म करनी चाही और इच्छा व्यक्त की कि कल्लू चला जाय। क्योंकि उसकी जो समस्या थी, वह रमिया की देखी-समझी थी। वह बात उससे भी नहीं सुलझ सकती थी। तभी उसने रलिया की ओर देखा और उसे आँखों से चुप हो जाने के लिए कहा। उसी समय, उसने कल्लू को सम्बोधित किया—"अच्छा, कल्लू, मैं कभी माला से बात करूँगी। उसे बुला लूँगी। तू जा।"

उसकी स्त्री ने कहा—"मालकिन, बात सुलझा दो, नहीं तो हमारी नाक कटेगी। लड़की समझती नहीं है। हवाई किले बना रही है।"

रमिया ने कहा—"हाँ, हाँ, मैं उससे बात करूँगी। वह अभी और पढ़े, यह भी उससे कहूँगी।"

कल्लू चौधरी की बहू बोली—"ठकुराइन, माला का मामा सुनेगा तो बुरा मानेगा। उसने बड़ा रुपया दिया, इस माला को पढ़ाने के लिए। अपनी बिरादरी को छोड़ कर भला लड़की का व्याह दूसरी जगह करना क्या शोभा देता है! और हम ऐसा चाहें भी, तो दूसरा कैसे मान सकता है। अपनी जाति की इज्जत रखना सभी को भला लगता है।"

रलिया ने कहा—"पर आज ज़माना दूसरा है। देखती नहीं, इस जाति के सवाल को मिटाया जा रहा है। इस छोटे से गाँव में पड़ी है ना तू, बाहर निकल कर देखे, तो पता चलेगा। छोटे से घर में रहकर समझती है कि अँधेरा है, सूरज नहीं निकला है'। पर बाहर निकल कर देखे तो मालूम पड़े कि सूरज निकला है, चारों ओर प्रकाश फैला है।

कल्लू ने कहा—"मेहतो, हम इतने समझदार कहाँ हैं! गाँव में पड़े हैं!"

रमिया ने फिर बात तोड़नी चाही—"अच्छी बात है। मैं भी कोशिश करूँगी। माला भली लड़की है, उसे समझाऊँगी। वह अपनी जाति से बाहर जाने की बात न सोचे, यह भी कहूँगी।"

दोनों उठ लिये और चले गये।

तभी रमिया ने जग्गू और रलिया की ओर देखा। उसने जैसे समझना चाहा कि अब···हाँ, इस समस्या का अब कैसे अन्त होगा?

किन्तु रलिया हँस कर बोला—"भाभी, फूस के झोंपड़े में आग लग गई है। अब वह क्या सहज में बुझने वाली है!"

रमिया भी हँसी—"अरे, मरदुए! आग किसने लगाई?"

रलिया ने जग्गू की ओर देख कर कहा—"भाभी, यह बताना कठिन है। पर

इतना कहता हूँ कि उस दिन चौपाल पर ही, दोनों ने एक-दूसरे को समझ लिया था, जैसे पहचान लिया था। संसार की इस रीति को भला कैसे भुला दिया जायगा!"

रमिया ने कहा—"रे, रलियाराम! यह बुरा है। यह तो पेटभरों का धन्धा है। मैं जानती हूँ कि हरदेवा ने इस लड़की से कुछ नहीं कहा होगा। उसे अभी ऐसी सुध कहाँ। और यह भी बताये देती हूँ कि कल्लू चौधरी की लड़की ने भी उसको कुछ नहीं कहा होगा। पर उसने उस दिन समूचे गाँव को यह ज़रूर बता दिया कि वह हरदेवा से प्रेम करती है। उसे अपना मानती है।"

रलिया बोला—"भाभी, मेरे मन मे तो अब भी एक बात है कि माला ने जिस प्रकार सभी के समक्ष हरदेवा के प्रति अपना दुःख प्रगट किया, वह गाँव के लिए भले ही अचरज की बात हो, पर दो प्रेमियों के लिए नई नहीं थी। हरदेवा को मारने वालों ने ही, उस माला के मानस में आँधी उठा दी थी। उस दृश्य को देखकर दुःख तो सभी ने अनुभव किया, पर वह लड़की चूँकि उसकी ओर आकर्षित थी, इसलिए अधिक अधीर दिखाई दी। वह उसकी बन गई।"

रमिया ने कहा—"मेरा भी यही मत है। उसने हरदेवा को ममता की निगाह से देखा। भला यह क्या बुरा है···न, यह तो अच्छा है।"

जग्गू ने कहा—"वह हरदेवा से व्याह करना चाहती है, इसीलिए अपना व्याह रोकती है।"

तुरन्त ही रलिया ने कहा—"हाँ, बात यही है। पर जब तक हरदेवा अपने मन की बात न बताये, तब तक कैसे कहा जा सकता है। अभी तो बात एक ओर की है।"

रमिया बोली—"यह मामला बढ़ेगा। अभी आगे चलेगा।"

जग्गू ने कहा—"हरदेवा का बाप नहीं मानेगा। उसके लड़के को बड़ा घर मिल सकेगा, रुपया भी, पढ़ी-लिखी औरत भी।"

रलिया ने हँसते हुए कहा—"वाह, भैया! बस, तुमने यही देखा। जाने कौन बड़ा है, कौन छोटा, इसे कौन जानता है। डोम अपने को बड़ा कहते हैं, ठाकुर अपने को—वाह-वाह!"

जग्गू ने जैसे विस्फारित बन कर कहा—"तो तेरा मतलब है कि ठाकुर का लड़का डोम की लड़की से व्याह कर लेगा—मूर्ख!"

रमिया ने जल्दी से बात बदली। वह नहीं चाहती थी कि रलिया कुछ आगे कहे। बात बढ़े और वह दूसरे कानों में जाये। उसने कहा—"यह तो अपनी-अपनी इच्छा का सवाल है। दूसरा क्या कर सकता है। माला समझ सकी तो अच्छा है, नहीं तो वह जाने और उसका राम··"

पन्द्रहवीं बात

उन दिनों हरदेवा के घर, उसकी माँ के पास उसके पुत्र की हालत का समाचार पाने के लिए पहुँचने वालों में माला का विशिष्ट स्थान था। वह प्रायः वहाँ जाती और हरदेवा की माँ के पास बैठ कर विविध प्रकार की बातें करती। हरदेवा की माँ वृद्धा तो थी ही, दुर्बल भी अधिक थी; इसलिए माला घर के कामों में भी उसके हाथ बँटाने का प्रयत्न करती। उस अवस्था में, वह स्वतः इस बात का ध्यान रखती कि हरदेवा की माँ यह न समझे कि छोटी जाति की लड़की उसका घर बिगाड़ने आ गई है। इसलिए वह सचेष्ट रहती कि कोई बर्तन न छुए। वह वृद्धा को रामायण सुनाती, उन चौपाइयों के अर्थ समझाती। ऐसे अवसर पर पड़ोस की अन्य स्त्रियाँ भी आ जातीं। इसका परिणाम यह हुआ कि माला अछूत नहीं रही, वह धीरे-धीरे उस नारी-समाज में एक भली और होनहार लड़की समझी जाने लगी।

किन्तु उस समय अवस्था यह थी कि बड़ी जाति वाले भले ही कुछ न कहें, लेकिन छोटी जाति वालों ने साफ़ कहना शुरू कर दिया—हाय! बुद्धि पर कैसा पर्दा पड़ा है, इस कल्लू की! लड़की को नहीं रोकता। समझाता नहीं कि बड़ी कौम के घर में जाकर बैठना, लोगों के मुँह खोलना है। साँप से भी खेलना है! कल्लू अपनी हँसी कराता है। भला ऐसे, बिरादरी में कोई बात पूछेगा, इस कल्लू की। कल को जब लड़की के हाथ पीले करने की बात सोचेगा, तो कोई हाथ भी न रखने देगा···इसकी ओर आँख भी न उठायेगा!

कल्लू और उसकी बहू इस प्रकार की बातों को सुनते और खून का घूंट पीकर रह जाते। जब दोनों माला को समझाते, उसे हरदेवा के घर जाने से रोकते, तो तभी, माला या तो मौन बन जाती, अथवा आँखों में आँसू भर कर अपने माँ-बाप की ओर देखकर कहती—"तो अब मुझे ऐसी कमीनी भी बनना होगा क्या? सुनती तो हूँ कि लोग कहते हैं, मौत के घर में जन्म लेना मना नहीं। पर क्या इससे बुरा पाप यह नहीं होगा कि जो आदमी हमारी जाति के नाम पर मौत के मुँह में झोंक दिया गया, मैं उसके घर भी न जाऊँ। हमारी

बूढ़ी माँ से दो बात भी न कर सकूँ !"

कल्लू अपनी बेटी की इतनी बात सुनकर सचमुच निरुत्तर हो जाता। उसकी बेटी जिस सत्य का बखान करती, वह उसे झूठ न कह पाता। उस समय माला की माँ का भी सिर झुक जाता। उन्हें स्वयं बेटी का वह कृत्य अमानुषिक या अव्यावहारिक भी न लगता। उस समय उनकी जाति के अन्य लोगों का मत भी माला के पक्ष में होता।

माला कहती—"बापू, मुझे इतना पता है कि जाति कोई छोटी नहीं··· कोई बड़ी नहीं। पर काम जरूर छोटे-बड़े हैं। इन्सान को देखने वाली आँखें भी जुदा-जुदा हैं। सत्य सभी के लिए है। पुण्य के समान, पाप भी सभी के लिए है।"

कल्लू सिर झुका कर कह देता—"हाँ, बेटी, यह तो तुम ठीक कहती हो। पढ़-लिख कर तुमने इतना समझ लिया, यह बहुत बड़ा है। इन्सानियत का यही पहला सबक है।"

किन्तु एक बार जब मोहल्ले के कई आदमियों ने स्पष्ट रूप से कल्लू को टंकोरा और कहा कि तेरी लड़की ठाकुरों के घर जाती है, कोई अशुभ कार्य करना चाहती है, तब कल्लू फिर बेचैन हो उठा। उसका अहंभाव भी जागा। वह सचेत हो गया। जिस समय इतनी बात उसने सुनी, तो माला स्कूल गई थी। संध्या समय जब वह लौट कर आई, तो उसे देखते ही, कल्लू एकदम भभक उठा। वह अपने स्वर में पूरी तीव्रता लाकर बोला—"माला ! सुना तूने, लोग क्या कह रहे हैं। तेरे कारण मेरे मुँह पर कालिख पोतना चाहते हैं। कहे देता हूँ, अब तू कभी हरदेवा के घर गई, तो तेरा गला घोंट दूँगा। गँडासे से टुकड़े-टुकड़े कर दूँगा, तेरे !"

माला ने इतनी बात सुनी, तो वह चौंकी नहीं, सहमी भी नहीं। वह तुरन्त ही कल्लू के पास पहुँच गई। उसने अपना सिर झुका दिया और कहा—"यह शरीर पहिले तुम्हारा है बापू, पीछे किसी का। लो, काट दो मेरा गला ! खत्म करो, यह खेल। न होगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी !"

कल्लू ने जैसे तड़क कर कहा—"और तू वहाँ जाना न बन्द करेगी !"

माला ने फिर भी सहज भाव से कहा—"ऐसा भी कभी हो सकता है बापू ! लड़की तो तुम्हारी हूँ मैं, क्या कृतघ्न बन सकूँगी। जिसका खून हमारी जाति के लिए बहा, मैं उसके घर भी न जाऊँ—भला क्यों ? क्या यह अशोभनीय न होगा ? जब हरदेवा अपने घर आयेगा और यह सुनेगा कि माला को उसके बापू ने इसलिए रोक दिया कि हमारी उसकी एक जाति नहीं है, तो क्या उसे अच्छा लगेगा ? सचमुच, उसका दिल हमें धिक्कारेगा !"

कल्लू चिल्लाया—"तूने किसी का ठेका नहीं लिया है। उसके यहाँ जाना हमारा काम है, तेरा नहीं। तू औरत जात है, अभी लड़की है। अब सयानी हो चली है।"

माला ने इतनी बात सुनी, तो वह जैसे सहम गई और पिता की ओर देखने लगी।

माला की माँ ने कहा—"इतने जोर से चीखने की क्या जरूरत है। माला क्या नादान है। सभी ऊँच-नीच समझती है। प्यार से कहो। समझाओ।" यह कहते हुए उसने माला की तरफ़ देखा। उसने कहना चाहा पर इतनी देर में तो माला की आँखें उसके गालों पर आ गई थीं। वह रो पड़ी थी। सचमुच, माला आँचल में मुँह छिपाकर सिसक पड़ी।

यह देख, उसकी माँ बोली—"रोती है माला! यह तो समझने की बात है, बेटी!"

तड़प कर माला ने कहा—"माँ, तू मेरा गला घोंट दे! मुझे मार दे!"

माँ ने कहा—"बेटी, मेरी दस-बीस सन्तानें तो हैं नहीं। एक तू है। तुझे मारकर डाइन बन जाऊँ, क्या! न, मेरी बिटिया! रो मत, धीरज से काम ले।"

माला ने कहा—"माँ, मैं हरदेवा के यहाँ जाऊँगी। मैं उसे यह नहीं कहने दूँगी कि हमारी जाति का कोई उसके यहाँ नहीं गया। और तो सब स्वार्थी हैं, इस गाँव के लोग! कितने हैं जो उस बूढ़े-बुढ़िया के पास जाते हैं। उनके आँसुओं को पोंछते हैं, धीरज बँधाते हैं। जैसे हरदेवा इस गाँव का नहीं था, कहीं दूर का था, इन्सान नहीं था!"

माला की माँ ने साँस भरी और कहा—"बेटी, इस गाँव में ऐसे लोग होते तो फिर हरदेवा पर हाथ ही क्यों छोड़ा जाता। क्यों उसे इस तरह घायल किया जाता।"

माला ने कहा—"माँ, कसूर हमारा था, उसका क्या था! यही न कि उसने हमारा पक्ष लिया था।"

माँ बोली—"बेटी, हमें क्या लोग आदमी मानते हैं। मिट्टी का ढेला समझते हैं।"

"और जिसने हमें माना, हमारा पक्ष लिया, अब तुम भी मुझको उसीके माँ-बाप के यहाँ जाने से रोकती हो,—छिः! भला यह कैसी निर्बुद्धि की बात है, माँ! बड़ी कौमें हमसे घृणा करें, तो उसी प्रकार हम भी। उनकी बात तो समझ में आती है, पर हमारी नहीं!"

कल्लू उस समय मौन था। उसने घुटनों पर सिर रख लिया था। सचाई

यह थी कि वह माला को अत्यधिक प्यार करता था। उस दिन बहुत दिनों में वह उससे कठोर स्वर में बोला था। लेकिन जब उसने माला के आँसू देखे तो उसका क्रोध धुएँ की तरह उड़ गया। जैसे माला के आँसुओं में वह गया। वह पल भर में तिरोहित हो गया। साथ ही, जब उसने माला की बात सुनी, तो वह भी उसके दिल से छू गई। उसे भली लगी। मानो माला ने उसी के दिल से निकाल कर वह बात कही। इसलिए, वह निरुत्तर हो गया।

तभी, उसकी स्त्री ने कहा—"सुनते हो, माला क्या कहती है!"

कल्लू ने सांस भरी और ऊपर मुँह उठाया। उसने स्त्री को देखने के साथ माला की ओर भी देखा। वह बोला—"बेटी, मैं तेरे ही भले की बात कहता हूँ। तुझे समझाता हूँ। देख, अब मैं कितने दिन और हूँ। जाने वाला ही तो हूँ। कभी भी जा सकता हूँ। तुझे अकेली रहना है। मुझे इन बड़ी कौम वालों का कोई भरोसा नहीं।" उसने नम्र स्वर से कहा—"हरदेवा ने हमारी जाति का पक्ष ज़रूर लिया, इसी बात पर वह घायल भी हुआ। पर जब कल को उसकी बिरादरी के लोग उसे ताने देंगे और कहेंगे कि ठाकुर होकर छोटी जाति की लड़की से बोलता है, तो ज़रूर वह तेरी ओर से मुँह फेर लेगा। वह अपने भाइयों की बात सुनेगा, तेरी नहीं। तब तेरी जो दुर्दशा होगी, उसे क्या सहज में समझा जायगा। अभी क्या तुझे उसका रूप दीखता है!"

माला बोली—"बापू, मैं हरदेवा से कोई बात नहीं चाहती। उससे कुछ नहीं कह सकती। मैं जानती हूँ, उसका रास्ता और है, मेरा और।"

माँ ने कहा—"तो फिर क्यों तू खोई-खोई-सी रहती है। मैं देखती नहीं क्या कि जबसे हरदेवा अस्पताल में पड़ा है, तभी से तेरी खुराक आधी भी नहीं रही। क्या सच, तू उसीके ग़म में डूबी है। न, माला! तेरा वह रास्ता नहीं है। तू वहाँ ठगी जायगी, मेरी बच्ची!"

तड़पकर माला ने कहा—"मैं कुछ नहीं जानती, माँ! सच, कुछ नहीं चाहती। मेरे सामने तो बस इतनी बात है कि हरदेवा हमारे कारण सताया गया···वह मौत के मुंह में झोंक दिया गया···!"

उसी समय कल्लू ने कहा—"अच्छा, अच्छा, तू बैठ। तेरी जो इच्छा हो, कर। पर सम्भल कर चल, देखकर।" यह कहते हुए कल्लू बाहर चला गया। जब पड़ोसियों में जाकर बैठा, तो तभी, एक ने कहा—"क्यों कल्लू अभी नाराज़ किस पर हो रहा था? क्या माला पर? या उसकी माँ पर?" और उसने हँस कर पुनः कहा—"आज अधिक पी गया होगा।"

कहने वाले का नाम सुलताना था। कल्लू की आयु का था। कल्लू ने उसकी

ओर देखकर कहा—"अब मैं किस पर नाराज़ हूँगा भैया, बूढ़ा हो गया !"

सुलताना बोला—"कल्लू, तू भी भाग्य का पोच रहा। इस बुढ़ापे में भी आराम नहीं कर सका।"

कदाचित् सुलताना का अभिप्राय कल्लू की उस वेदना से था जो उसे पाँच वर्ष पूर्व मिली थी। उसका जवान लड़का मर गया था। किन्तु पड़ोसी की बात सुनकर कल्लू कुछ बोला नहीं, वह चुपचाप हुक्के में दम मारने लगा।

उसी समय, उन सब में बुजुर्ग जुम्मा नाम के व्यक्ति ने अपनी बड़ी-बड़ी मूछों पर बल दिया और कल्लू की ओर देखकर कहा—"क्यों कल्लू, अब क्या तय किया, तूने ? लड़की को पढ़ायेगा, या व्याह···"

एक बोला—"अरे दादा ! यह निर्णय करना अब कल्लू चौधरी का काम नहीं रहा, लड़की की इच्छा का है।"

जुम्मा ने कहा—"जो आदमी इसे मिला, वह तो मालदार है। मैंने सुना कि भला भी है।" वह बोला—"क्यों कल्लू, यह रामू क्या कहता है ? क्या तू लड़की को सहमत नहीं कर सका ?"

कल्लू ने साँस भर कर कहा—"हाँ, दादा! मैंने अभी इस बात को छोड़ दिया।"

रामू बोला—"लड़की चार अक्षर पढ़ गई है, तो घर पर शासन करती है···राम-राम ! कैसा ज़माना आ गया !"

जुम्मा फिर बोला—"यह बुद्धिमानी की बात नहीं है, कल्लू ! रोग बढ़ने से पहिले इसका इलाज कर ले।"

उसी समय सुलताना नाम के व्यक्ति ने कहा—"पर कल्लू कहाँ मानता है। यह माने भी, तो घर में कोई नहीं सुनता। देखते नहीं, कल्लू की बहू अपनी बात रखती है, उसी की चलती है। और उसकी लड़की माला···"

जुम्मा ने मूछों पर फिर बल दिया और कहा—"कल्लू, औरत की बात धोखा भी देती है, रुलाती है। औरत क्या दूर तक देखती है !"

सुलताना ने दाद दी—"जो आदमी औरत की बात पर चलता है, वह ज़रूर खता खाता है। मूँड पकड़ कर रोता है !"

जुम्मा बोला—"औरत की जात ओछी और ईर्षालु होती है। उसकी बुद्धि भी छोटी होती है। वह क्या खरा-खोटा समझती है !"

सुलताना ने बात को और बढ़ाया—"चाचा, इस कल्लू के साथ यही होने वाला है। मुझे दीखता है। सुनते हैं कि इसकी लड़की माला···"

जुम्मा ने बात बीच से पकड़ ली—"हाँ, रे कल्लू ! अभी समय है, भैया ! रोग बढ़ जायगा तो सँभलेगा नहीं। तू बाद में मरते दम तक छटपटायेगा। लड़की

हाथ से जायगी और तेरा घर विगड़ेगा।" वह बोला—"भूल गया कि रतिया की लड़की को इसी गाँव का ठाकुर भगा ले गया था। कुछ दिन अपने पास रखी और फिर बाजार में बेच आया था। उस वेचारी का दीन और ईमान दोनों खो आया था, वह ठाकुर। तू जब छोटा था, तब भी बड़ा झगड़ा हुआ था। ठाकुरों और डोमों में लाठी चली थी। उस समय एक लाठी मेरे भी लगी थी।" यह कहते हुए उसने सांस भरी और कहा—"भैया कल्लू, यह ठाकुरों की जात बड़ी खतरनाक है। अपने आदमी का पक्ष खूब लेती है। इनका भैया चोर और खूनी हो, तो उसे भी छिपा लेती है।" वह कहने लगा—"रतिया की लड़की भी इसी तरह चली थी। किसी का कहा नहीं मानती थी। बड़ी ज़िद्दन थी। औप रतिया तो था ही भोला, वीवी का गुलाम···"

सुलताना ने हँस कर कहा—"तो वह भी पूरा वना हुआ कल्लू···"

कल्लू ने खिसियाकर कहा—"नहीं रे, सुलताना ! तूने मुझे कैसे वीवी का गुलाम समझ लिया !"

सुलताना ने कहा—"जो आदमी घर में अपनी वात नहीं मनवा सकता, उसे गुलाम न कहें, तो क्या कहें ! आज सारा गाँव कह रहा है कि माला··· वह हरदेवा···"

कल्लू ने जुम्मा की ओर देखकर कहा—"चाचा, अब तुम्हीं बताओ, वह हरदेवा हमारे लिए तो इस तरह घायल किया गया। अस्पताल में पड़ा है। अभी तक तो वह मौत के मुँह में है। घर आ जाय, तो उससे कुछ कहा सुना जाय। अब अगर माला उसके घर चली जाती है, कुछ देर हरदेवा की माँ के पास उठ-बैठ आती है तो क्या यह पाप है ? क्या यह बुरी वात है ?"

जुम्मा ने कहा—"यह तो वुरी वात नहीं रे, कल्लू ! पर तेरी लड़की माला तो···"

सुलताना ने कहा—"चाचा, गाँव-भर के मुँह पर यह वात है। हर कोई कहता है कि कल्लू की लड़की ठकुराइन वनेगी···वह हरदेवा···"

कल्लू ने कहा—"लोग वकवास करते हैं !"

जुम्मा ने कहा—"वात धीरज से सोचने की है, कल्लू भाई ! तू मारते का हाथ पकड़ सकता है, कहते की ज़वान नहीं।" उसने कहा—"चलो, हम यह भी मान लें, पर क्या हरदेवा डोम जाति में मिल जायगा ? हमारी लड़की ही क्यों ठकुराइन वने ! जाति उनकी वढ़े, हमारी घटे, वाह ? जानता है, इस दुनियाँ में सभी अपना पक्ष प्रवल करते हैं। हम ग़रीव हैं तो क्या, अपनी तरक्की हम भी चाहते हैं। अभी तक सव तेरी वड़ाई करते हैं कि तूने लड़की को पढ़ाया,

समझदार बनाया, पर अब आगे जो कदम उठायेगा, कोई गल्ती करेगा, तो उससे तुझे पछताना पड़ेगा। अपनी जाति का एक रत्न भी खो देगा।"

कल्लू उस समय जैसे निरुपाय बन गया था। वह उदास भाव से सामने के अंधकार की ओर देख रहा था। वह बता नहीं सकता था, पर कांटा उसके भी मन में चुभ रहा था।

सुलताना ने कहा—"कल्लू! समय रहते ही चेतना ठीक है। इसी में भला है। लड़की को समझा। मान जायगी। जानता तो है तू, जवानी की आंधी सभी को अंधा बना देती है।"

कल्लू ने कहा—"खूब समझता हूँ भैया!"

"तो लड़की नहीं मानती—क्यों?" सुलताना बोला—"तो इसका उपाय यह है कि झट से उसके हाथ पीले कर डाल। अब तेरा भी बुढ़ापा है। हम सभी का पैर तो मौत के पाये से बंधा है। जाने किस दिन,...हां..."

कल्लू ने बात सुन ली और पेट में उतार ली।

जुम्मा हँस कर बोला—"अरे, सबसे आगे तो मैं हूँ। मैं मरने को तैयार बैठा हूँ।"

सुलताना बोला—"चाचा, कुछ पता नहीं। जवान जाते हैं, और बूढ़े..."

कल्लू ने सांस भरकर कहा—"हाँ, इसका क्या भरोसा। तुमने देखा तो कि मेरा लड़का..."

जुम्मा ने कहा—"वह तो तेरी छाती पर बड़ा धक्का लगा था, कल्लू भैया! अचरज है कि तू सहार गया। वरना उस समय तो सभी का यह ख्याल था कि कल्लू नहीं बचेगा, मर जायगा। जवान लड़के का दुःख क्या सहार सकेगा!"

कल्लू ने कहा—"मौत नहीं आई, जहमत आ गई! घरवाली तो तभी से चारपाई पर टिक गई। मेरी भी कमर टूट गई। मुझे सांस की बीमारी लग गई।"

जुम्मा ने सांस भरी—"भगवान की माया है, भैया! उसी का सहारा है।" और वह खड़ा हो गया। कल्लू भी अपनी कमर को पकड़ सीधा हो गया। वह घर की ओर चल दिया। हाय! वह उस समय कितना निरुपाय और दीन बना था। उसके घर में एक सन्तान थी,—लड़की—तो वह भी उसकी इच्छा के अनुरूप नहीं चल रही थी। जैसे चिड़िया बनकर उड़ना चाहती थी...

सोलहवीं बात

हरदेवा अस्पताल से घर आ गया। उस दिन उनके घर पर प्रायः गाँव की सभी जातियों के व्यक्ति आये, स्त्रियाँ भी आईं। हरदेवा की माँ और पिता की खुशी का तो जैसे कोई कूल-किनारा ही नहीं था। आगन्तुकों की उसी भीड़ में कल्लू और उसकी स्त्री भी आए। उनकी जात के अन्य लोग भी। उन्हीं में माला। उस समय माला की आँखों में आँसू थे। वे हर्षातिरेक से निकल आये थे।

दिन बीत गया, रात आ गई। डाक्टर ने कह दिया था कि हरदेवा अधिक परिश्रम न करे। चले-फिरे नहीं। परन्तु जब रात के दिये जल गये, तो हरदेवा ने लाठी उठा ली और उसी का सहारा लेकर घर से चल दिया। यह देख, माँ ने उसे टोका और दूर न जाने के लिए आग्रह किया। किन्तु हरदेवा ने बता दिया कि वह दूर नहीं जा रहा है, घर से बाहर तक जा रहा है। लेकिन वह सीधा गाँव के बाहर डोमों की बस्ती में पहुँच गया। जब वह कल्लू के घर के दरवाज़े पर पहुँचा, तो देखा कि माला टिमटिमाते हुए दीपक के प्रकाश में बैठी कुछ पढ़ रही है। किताब उसके हाथ में है। उसकी माँ चारपाई पर पड़ी है। कल्लू भी कुछ फ़ासले पर बैठा हुक्का पी रहा है। किसी की द्वार पर आहट पा, उसने कहा—"कौन ?"

उत्तर मिला—"हरदेवा।"

"ओ, तुम मेहतो !" कल्लू ने हुक्का छोड़ दिया। सुनते ही माला भी खड़ी हो गई। वह तुरन्त ही हरदेवा के पास जाकर बोली—"सच, तुम !" उसने कहा—"भला क्यों आये, इतनी दूर ! इस रात में ! अभी तो शरीर कमजोर है। और दुश्मन क्या दुश्मनी भूल गये होंगे !"

सुनकर, हरदेवा मुस्करा दिया—"अब मैं मरने की पीड़ा और उसे समझने की कला पहचान गया हूँ, माला ! अब डरने का प्रश्न नहीं रहा।"

माला की माँ ने कहा—"अरी माला, मेहतो को बैठा। चारपाई डाल।"

हरदेवा घर में प्रविष्ट हो गया। वह कल्लू के पास जाकर बैठ गया। कल्लू

ने चंचल बनकर कहा—"ऊपर बैठो, मेहतो ! चारपाई पर।"

हरदेवा हँस दिया। वह माला की ओर देखने लगा।

उसी समय माला की माँ भी वहाँ उठ आई। वह आते ही बोली—"तुमने बड़ा दुःख उठाया, मेहतो ! यह सब हमारी कौम के कारण। भला हो भगवान का कि तुम्हें बचा दिया।"

हरदेवा बोला—"मुझे तुम सभी का आशीष प्राप्त था।"

कल्लू ने कहा—"यह गांव तो राक्षसों से भरा है।"

हरदेवा ने कहा—"नहीं कल्लू, यहाँ भी आदमी हैं, देवता हैं।" वह बोला—"मैं तो तुमसे कहने आया हूँ कि इस गाँव के आदमियों से तुम्हारी जाति को जो परेशानी हुई, उसका मुझे आज तक दुःख है। मुझे तो चोट लगनी थी—यही होना था। पर अब तक छोटी जाति वालों के साथ ठाकुरों ने अच्छा व्यवहार नहीं किया। मैंने अस्पताल में ही सुना था कि तुम्हारी माला ने बहुत दुःख प्रगट किया। अब सोचता हूँ तुम लोगों का स्नेह पाना मेरे लिए सौभाग्य की बात है। जरूर, यह किसी पूर्व जन्म का संयोग था।"

उस समय माला सिर झुकाये बैठी थी। वह बार-बार हरदेवा की ओर देखती और प्रसन्न भाव से मुस्कराती थी।

कल्लू बोला—"बाबू, लोग फ़ालतू बात कहने लगे हैं। हमें बदनाम करते हैं।"

हरदेवा बोला—"मुझ से यह भी कहा गया। सचमुच, लोग निर्लज्ज बन गये। दूसरों की बेटी को बदनाम करने में आनन्द पाते हैं।"

माला की माँ ने कहा—"मेहतो, हमारा तो जन्म ही दूसरों की बात सुनने के लिए हुआ है। लोग हमारे सिर पर जूतियाँ मारें और हम गिड़गिड़ायें··· यही तो हमारे भाग्य में लिखा है ! भगवान ने ही हमें इस निचाई पर डाल दिया। छोटी जाति के घर में पटक दिया। जमीन का यह छोटा गन्दा टुकड़ा हमारे हिस्से लिख दिया।"

करुण-भाव से, हरदेवा ने उस ओर देखा और जैसे निरे ओस भरे स्वर में बोला—"नहीं, नहीं, माला की माँ ! तुम्हें यह कहना नहीं शोभता। भगवान ने तुम्हें भी आत्मा दी है, उसमें परमात्मा का वास है।"

माला की माँ ने सांस भरी—"हाँ, मेहतो ! बचपन से सुनती तो मैं भी यही आई हूँ। पर मुझे तो लगता है कि यदि कोई भगवान है भी, तो वह यहां नहीं आता। इस सड़ांद-भरे मोहल्ले में आना पसन्द नहीं करता। भला यह भी कोई आदमियों के रहने की जगह है। मैं कहती हूँ तुम यहां तक इस रात में कैसे आ गये, इसी का अचरज है। परसों जब इस गांव में पानी बरसा, तो यहां

घुटनों तक पानी भरा था। चारों ओर कूड़ों के ढेर लगे हैं। यहाँ जानवरों का गोवर और आदमियों के पाखाने सड़ते हैं। रात में वस्ती के लोग आराम से सोते हैं और हम लोग मच्छरों से लड़ते हैं। न खाने को रोटी, न रहने को मकान···लोग क्या हमें इन्सान समझते हैं···सच, ज़ानवर मानते हैं।"

हरदेवा उस समय मौन था। वह स्वयं माला की माँ के शब्दो में, और उसके हृदय की पीड़ा में खो गया था। वह अनुभव कर रहा था कि सचमुच, इन लोगों के साथ न्याय नहीं किया गया···इन्हें मनुश्य भी नहीं समझा गया··· इन्सान की चोटि से वहुत नीचे गिरा दिया गया···यद्यपि उसे पता था कि स्वयं कल्लू ऐसी स्थिति का व्यक्ति नहीं। वह सम्पन्न है। पर उसकी औरत तो अपने पूरे समुदाय का प्रतिनिधित्व कर रही थी, इसलिए हरदेवा उसकी वात को सत्य मान रहा था।

माला ने कहा—"एक दिन जव मैं लाला धनपतराय के घर की ओर निकली तो उसकी लड़की मुझसे छू गई। वह तुरन्त आग में पड़े घी की तरह जल उठी। मैंने कहा भी मेरा कसूर क्या, पर वह भला कहाँ सुनने वाली थी। लगी जली-कटी सुनाने। उसकी माँ भी घर में से निकल आई। वह भी हाथ और मुँह नचाती हुई चीख पड़ी—"हाँ, अव क्या है, अब तो पूरी पण्डिताइन वनने चली है। ज़मीन पर क्या पैर रखकर चलती है···चुड़ैल !" माला ने कहा—"जव उसने 'चुड़ैल' कहा तो मुझे गुस्सा आ गया। मैं भी वोल पड़ी, 'सम्भल कर वोलो लालाइन, मुँह पर थप्पड़ मार दूँगी।' और इतना सुनना था कि वस, उस लालाइन के सिर पर तो जैसे गाज टूट पड़ी। वह गरजने लगी। एक ठकुराइन ने आकर कहा भी, 'अरे, चुप रह ! समय को देख !' पर वह कहाँ मानने वाली थी। मैं चली भी आई और वह शोर मचाती रही। जाने क्या-क्या वकती रही !"

उसकी माँ ने कहा—"अव लाला की वहू का दिमाग़ चढ़ गया है। पैसा आ गया है। वेचारे ग़रीव किसानों को लूट कर लाला ने घर भर लिया है।"

हरदेवा ने कहा—"माला की माँ ! यह पैसा तो आता और जाता है। पर इन्सानियत को जव आदमी छोड़ देता है तो वह सभी कुछ खो वैठता है।"

कल्लू वोला—"वावू, आज ऐसा कोई नहीं सोचता। मौत भी आगे खड़ी है, इसे भी कोई नहीं देख पाता।"

हरदेवा वोला—"न, चौधरी। अव समय आ गया है कि लोग अपनी भूल का सुधार करें। वास्तविकता को समझें। इस देश में आज जगह-जगह दरारें पड़ी हैं, लोग उन्हें पाटना चाहते हैं। भ्रातृत्व की भावना को वढ़ाना पसन्द करते हैं।"

कल्लू बोला—"इस काम के लिए मैं भी लोगों के साथ हूँ। अपना ख़ून दे सकता हूँ।"

हरदेवा बोला—"हाँ, हाँ, सभी साथ देंगे, चौधरी ! बात छिड़ गई है, चल पड़ी है।"

हरदेवा से माला ने कहा—"तुम्हारा बड़ा नुकसान हुआ। अब परीक्षा में नहीं बैठ सकोगे। बी० ए० का आख़िरी वर्ष था।"

हरदेवा बोला—"मैं अब इसे नुकसान नहीं मानता। जितना मैं बी० ए० करके नहीं पाता, उससे अधिक पा गया। देखता हूँ मैं समूचे गाँव का स्नेह प्राप्त करने में सफल हो गया।"

कल्लू बोला—"बाबू, जग्गू ठाकुर की घरवाली भी ख़ूब निकली...एक औरत गाँव की सिरमौर बन गई। उसका नाम दूर-दूर तक पहुँच गया। सभी उसे जान गये। उसकी आत्मा में ऐसा तेज पैदा हुआ है कि मुँह से बखाना नहीं जा सकता।"

हरदेवा बोला—"रमिया चाची ने जग्गू चाचा को भी ऊपर उठा दिया। गँवार औरत थी, पर पढ़ी-लिखी औरतों को मात कर दिया।"

कल्लू की स्त्री बोली—"हमारी इस बस्ती में कोई और आये या नहीं, पर वह ठकुराइन कई बार आई है। हमारे घर में आकर बैठी है। मैं एक बार बीमार थी, तो रात में आई। देर तक बैठी रही। सच, बड़ी भली है। उसमें ज़रूर भगवान की वाणी बोलती है।"

हरदेवा बोला—"रमिया चाची पर-दुःख को अपना समझती है। वह उदार है।"

माला बोली—"मैं कई बार चाची के घर हो आई हूँ। वहाँ देर तक बैठी हूँ। अब तो उसके घर पर भीड़-सी लगी रहती है। वह क्या अब अकेली रह पाती है। जिनसे पहिले घूँघट करती थी, उनसे अब सीधी बात करती है।"

हरदेवा ने कहा—"अब वह सरपंच है। गाँव की जज है। उसका फ़ैसला सर्वोपरि है।"

कल्लू की स्त्री बोली—"भाग्यवान है।"

कल्लू ने कहा—"कल तक वह अँधेरे में खड़ी थी; चमारिन-सी बनी थी... ठाकुरों में सबसे ग़रीब थी, पर आज दीपक की बाती की तरह सबको प्रकाश देती है।"

कल्लू की स्त्री बोली—"समय की बात है। भाग्य बदलते क्या देर लगती है।"

हरदेवा ने कहा—"रमिया चाची अब भी ग़रीब है। उसका वही पहनावा है। आज भी जो कपड़े वह पहने थी, वे फटे थे। लहँगा भी फटा था।"

कल्लू ने कहा—"पर गाँव अब उससे डरता है। सब समझते हैं कि वह किसी का पक्ष नहीं लेती। रस में विष नहीं घोलती। सचमुच, उसने कई काम अच्छे किये हैं। कुएँ पर अब ठाकुरों के लड़के खड़े नहीं होते, कपड़े नहीं धो पाते, जवान लड़कियों से अब हँसी-मजाक भी करते नहीं दीखते।"

कल्लू की वहू ने कहा—"ठकुराइन कहती थी कि छोटी जाति वालों के घर भी यहाँ से उठवाये जायेंगे; साफ़ जगह बनेंगे। हमारे अधिकार भी बढ़ेंगे। वे ऊँची जाति वालों के बराबर होंगे।"

हरदेवा ने कहा—"यह सभी कुछ होगा। देखना, एक दिन किसी में अन्तर नहीं रहेगा। जात-पाँत का भेद मिट जायगा। इस धरती पर सभी का अधिकार समान होगा। भगवान का दरबार सभी के लिए एक-जैसा खुला रहेगा।"

माला ने कहा—"जब से गाँव का कुआँ और मन्दिर हम लोगों के लिए खुले, तब से पण्डित जनार्दन जाने कैसी कड़वी निगाह से घूरता है। मुझे तो जैसे विच्छू समझता है···कोई पाप···।"

हँस कर हरदेवा ने कहा—"वह ब्राह्मण भी अपने दिन काटता है। बेचारा ज़िन्दगी-भर अन्धेरे में रहा। दूसरों को भी उसी में रखने का प्रयत्न करता रहा।"

कल्लू की स्त्री बोली—"बड़ा ढोंगी है। मन्दिर में तो देर तक भजन करता है, पर मुझे तो सदा ही दरिद्र लगा···भला घिनौने मुँह पर चन्दन पोतने से क्या कोई साफ़ हो जाता है! मैं कभी रास्ते में पड़ जाऊँ, तो दूर से ही दुर-दुर करता है। सचमुच, मुझे तो कम्बख़्त लगता है।"

हरदेवा ने साँस भरी और कहा—"वह ब्राह्मण तो है, पर मन का साफ़ नहीं। जिसका मन साफ़ नहीं, वह साफ़ कपड़े भी पहिने तो क्या होता है!" यह कहते हुए वह खड़ा हो गया।

कल्लू की वहू ने कहा—"रात में आये, यह क्या अच्छा हुआ! मैं चलूँ, तुम्हारे साथ?"

कल्लू ने कहा—"हाँ, अकेले न भेजना मेहतो को। अभी शरीर कमज़ोर है। रास्ता खराब है। माला—"

माला ने कहा—"बापू, मैं जाती हूँ।"

हरदेवा बोला—"मैं चला जाऊँगा, रास्ता देखा-समझा है।"

किन्तु माला साथ चल दी। जब वह उस घर से निकल कर अँधेरे पथ पर

पहुँचा, तो उसने थकावट के कारण सहारे के लिए अपना एक हाथ माला के कन्धे पर रख लिया। वह बोला—"बहुत अँधेरा है।"

माला ने साँस भर कर कहा—"हाँ, मेहतो! आज तो इन्सान की जिन्दगी में ही अँधेरा है।"

यह सुना, तो हरदेवा क्षण-भर नहीं बोल पाया। वह खड़ा हो गया और माला के कन्धे पर ज़ोर देकर बोला—"यह ज़िन्दगी के अँधेरे की बात मैं नहीं मानता, माला देवी! देखा नहीं, अभी-अभी मैं मौत के मुँह में से निकल कर आया हूँ। पर मैं सोचता हूँ कि मैंने जीवन-दर्शन पाया। इन्सान कितना कुटिल और क्रूर है, यह भी समझ गया। तुमने किस प्रकार मुझे अपना ममत्व प्रदान किया, इतना देखने का भी अवसर पा गया।"

माला ने कहा—"वह मेरे मन की दुर्बलता थी। मैंने तुम्हें इस गाँव में अत्यन्त उदार और भला समझा था। जब तुम्हीं को घायल और मौत के मुँह में पड़ा देखा, तो बरबस ही, मेरे मन का सन्तुलन नष्ट हो गया। सुना तो होगा कि मैं रो पड़ी थी। पर अब अपनी उस अवस्था को याद करती हूँ तो अपने-आप लजाती हूँ। सोचती हूँ, इतना सब मुझसे कैसे हो गया।"

हरदेवा ने जल्दी से, जैसे आतुर बनकर कहा—"न, न, वह सब स्वाभाविक था, माला देवी! तुम्हारे अनुरूप था। सुनकर, मैंने अस्पताल में ही अनुभव किया कि तुम्हारा दिल कोमल है, अनुराग-भरा है। तुम्हारे प्राणों में जो लय है, स्वर है, मधुर संगीत है, वह तुम मुझे सुना सकीं, इसके लिए मैं तुम्हारा आभारी रहूँगा। प्राणों में ऐसा स्फुरण, ऐसी चेतना, भला अन्यत्र मुझे कहाँ दिखाई देगी! और मैं तुम्हें इतना बता दूँ कि मेरे जीवन का उद्देश्य ही यह है कि मानव के शाश्वत धर्म का पाठ पहिले पढ़ूँ और उसी पर जीवन को चलाऊँ। देखता हूँ कि मैं उसका प्रथम चरण कुछ-कुछ पढ़ने लगा हूँ। तुम भी मेरी मदद कर सको, तो आभार मानूँगा।"

जल्दी से माला ने कहा—"बाबू, मैं भी यही चाहती हूँ। जन-समाज के 'चरणों में इस जीवन को भेंट करना पसन्द करती हूँ।" वह बोली—"तुमने यहाँ आकर सुना तो होगा ही कि लोग मेरे प्रति विविध प्रकार की कल्पनाएँ करने लगे हैं। पर मैं उन्हें कैसे बताऊँ कि मेरे मन में कुछ नहीं है। सचमुच, कुछ नहीं। और मेरा बापू इसीलिए मेरा ब्याह कर देना चाहता है। लड़का भी देख लिया है। पर मैं अभी उस पथ पर अग्रसर होने के लिए प्रस्तुत नहीं हूँ।"

उस समय हरदेवा जैसे अत्यन्त आतुर और भावनामय बन गया था। वह एकाएक बोल नहीं सका। जैसे, सामने के पथ में अँधेरे के समान, उसकी आत्मा

में अँधेरा नहीं था। वह जैसे अपनी आत्मा की वाणी सुन रहा था। तभी माला ने फिर कहा—"मेहतो, तुम कहोगे तो कि नारी के रूप में मेरी यह दुर्वलता है, पर जव प्रथम वार तुम्हें चौपाल में देखा और तुम्हारी वाणी को सुना, तभी से मेरे मन में वार-वार आया कि मुझे तुम्हारे समीप ही बैठना चाहिए···मुझे तुम्हीं से कुछ कहना चाहिए, और तुम्हीं से सुनना चाहिए।"

हरदेवा खड़े हुए थक गया था। वह तव भी माला का सहारा लिये था। उसके घर से दूर नहीं आया था। जव उसने माला की वात सुनी, तो वोला—"मेरे समान तुम भी भावनामयी हो, माला देवी! धीरज से काम लो। अपनी अवस्था भी मत भूलो।"

माला ने कहा—"मैं दुर्वल हूँ, नारी हूँ।"

हरदेवा वोला—"नहीं, नहीं, तुम सवल हो। तुम तो शिक्षित हो। मैं समझता हूँ कि सभी के समान, तुम भी अपना पथ प्रशस्त कर सकती हो।"

यह सुनकर माला ने साँस भरी और छोड़ दी। वह सिर के ऊपर खड़े, तारों-भरे आसमान की ओर देखने लगी। उसे ऐसे प्रतीत हुआ जैसे वह आसमान हँस रहा था, प्रफुल्ल वना था।

हरदेवा ने कहा—"माला देवी! किसी भी पण्डित के समान तुम्हें ज्ञान है, वुद्धि है। इतना मत भूलो कि जिस समाज की तुम सदस्या हो, वह उदार नहीं, सहानुभूतिपूर्ण भी नहीं। मेरी जो दशा वनी, उसे तो तुमने देख लिया। मैं तुम्हें भयभीत नहीं करना चाहता, पर इतना वताता हूँ कि मेरे समान, यह क्रूर समाज तुम्हारी स्थिति भी वना सकता है। तुमने अपने स्नेह का यों प्रदर्शन करके कुछ अच्छा नहीं किया। लोगों ने सहज ही उसका दूसरा अर्थ लगा लिया। और इतना तुम भी जानती हो कि पुरुष अधिक चंचल और निर्लज्ज होता है। जल्दी खुल जाता है, वहक जाता है। तुम्हारा यह हरदेवा···हाँ, माला देवी, तुमने वरवस ही, एक वोझ सिर पर उठाना पसन्द किया। उसे सहार लेने की शक्ति पैदा करना क्या सुगम रहेगा?"

मानो चंचल वनकर माला ने कहा—"वावू, मेरी यही साधना है···मेरा यहीं प्रण।"

हरदेवा ने माला का कन्धा थपथपाया और कहा—"भगवान तुम्हारी इच्छा पूरी करे। तुम्हें सफल वनाये।"

तभी माला ने अपना मुँह उठाया और हरदेवा की ओर देखा। उसने सहज भाव से मुस्करा दिया। किन्तु हरदेवा चौंक गया और वह फिर माला को पकड़ कर दो कदम पीछे हटता हुआ वोला—"साँप!"

माला स्वयं चौंक गई और बोली—"कहाँ···सच !"

हरदेवा ने संकेत करके कहा—"वह जा रहा है। मेरे पैर पर से निकल कर गया।" और वह बोला—"माला देवी, यह जहरीला साँप भी हमें आशीष दे गया···हमारे लिए उसका जहर भी अमृत बन गया। अब तुम जाओ। मैं चला जाऊँगा। किसी और ने भले ही हमारी बात न सुनी हो, पर वह साँप जरूर सुन गया···"

सत्रहवीं बात

पार्वती का भाग्य अभी भँवर से नहीं निकला था। जैसे उसे अभी और कष्ट उठाना था। जिस वनिता-आश्रम में वह प्रविष्ट हुई, वहाँ पहुँचने के एक सप्ताह बाद ही, उसे वहाँ का रहस्यपूर्ण इतिहास ज्ञात हो गया। आश्रम का मैनेजर एक कुटिल और दुराचारी व्यक्ति था। उस आश्रम में पचास से अधिक विधवाएँ थीं। उनमें अधिकांश युवा थीं। जब पार्वती उनके सम्पर्क में पहुँची, तो उसे लगा कि उन विधवाओं में अनेक स्त्रियाँ आश्रम के मैनेजर की रीति-नीति को कार्य का रूप देतीं। उन्हीं में एक कमला नाम की स्त्री थी। वह अत्यन्त वाचाल और कुशल थी। जब पार्वती आश्रम में पहुँची तो कमला ने अत्यन्त स्नेह और चातुर्य से आत्मीयता का प्रदर्शन किया। उसने छूटते ही, पार्वती को सुनाया कि इस स्थान को ग़ैर न समझना, हमें भी नहीं। कोई कष्ट हो, तो तुरन्त बताना। और उसने अपने कमरे में ही पार्वती को टिकाने का प्रबन्ध कराया। उसका बिस्तरा वहीं मँगा लिया। यों, जल्दी ही, पार्वती और कमला में आत्मीयता बढ़ गई। दोनों एक-दूसरे से परिचित हो गईं। कमला ने बड़े सहज भाव से बताया कि आश्रम का मैनेजर भला आदमी है, सुधारवादी है, नारी-जाति का हितेच्छु है। स्वभावतः पार्वती ने इस बात को मान लिया। उसने समझ लिया कि कमला जो कुछ कह रही है, वह सत्य है।

किन्तु आश्रम में एक कमला ही तो न थी, और भी नारियाँ थीं। उनमें ऐसी भी थीं कि जो मैनेजर की वास्तविकता को भी कह पातीं। जब पार्वती का इस प्रकार की स्त्रियों से परिचय हुआ, तो उसे बरबस इस बात का भी संकेत मिला कि मैनेजर लम्पट है, दुराचारी है! यह आश्रम एक जालसाजी का अड्डा है, जहाँ व्यक्ति का नग्न रूप प्रदर्शित होता है'''मानवता का गला घोंटा जाता है! उन नारियों ने ही पार्वती को बताया कि मनुष्य कितना निर्लज्ज है और नारी के प्रति कितना क्रूर और बर्बर बन सकता है, यह तुम्हें यहाँ देखने को मिलेगा। पुरातन काल से यह मनुष्य जाति जिस धर्म, न्याय और विवेक को मान्यता देती आई है, उन्हीं की आड़ में देश और जाति को भी

ठगा गया है। उसी का नग्न-प्रदर्शन इस आश्रम में भी होता है। यह आश्रम का मैनेजर जितना ऊपर से सरल और साफ़ दीखता है, अन्दर से वैसा नहीं। यह विषैला है…काला नाग है !

उस अवस्था में पार्वती बात सुनती और साँस रोककर मौन रह जाती। यद्यपि वह अशिक्षित थी, परन्तु चतुर भी थी। पार्वती ने अपने जीवन-काल में इतना तो समझ लिया था कि पुरुष निश्चित रूप से नारी के प्रति उदार नहीं। वह भेड़ की खाल ओढ़े हुए, मन और कर्म से भेड़िया है…नारी का भक्षण करना ही उसका चिर-पुरातन काल से स्वभाव बना है। इसलिए वह अपने-आप में सजग थी, सहमी हुई थी।

जब पार्वती आश्रम में प्रविष्ट हुई, तब मैनेजर ने उसकी सभी अवस्थाओं को समझ लिया था। उसने यह भी जान लिया था कि पार्वती को उसकी ससुराल से ज़मीन में हिस्सा मिलेगा। निदान, उसने ऊपर-ही-ऊपर अदालत का हुक्म प्राप्त किया और पुलिस के ज़रिये पार्वती के हिस्से की ज़मीन को हस्तगत कर लिया। बाद में उसने उस ज़मीन को वहीं के एक काश्तकार के हाथों मोटी रक़म लेकर बेच दिया। यद्यपि इतनी बात मैनेजर ने कभी भी पार्वती पर प्रकट नहीं की, किन्तु उस आश्रम का पुराना मुन्शी जो स्वभावतः पार्वती के प्रति दयालु था, उसने एक दिन स्वतः ही, इस बात को पार्वती पर प्रगट कर दिया। उसने पार्वती को स्पष्ट बताया कि तेरी ज़मीन से मैनेजर ने पाँच हज़ार रुपया प्राप्त किया है और वह रुपया उसके पेट में उतर गया है।

किन्तु पार्वती लाचार थी। जिस समय आश्रम के मुन्शी ने मैनेजर के गुप्त षड्यन्त्र की बात उस पर प्रगट की, उस समय पार्वती प्रसूति-गृह में थी। उसने एक पुत्र को जन्म दिया था। उस पुत्र को पाकर पार्वती ने समझा कि चलो, वह इस सहारे से अपने जीवन को काट देगी। किन्तु जैसे विधि को यह भी स्वीकार नहीं था। बच्चा पाकर, पार्वती कई मास तक अपने मानस में इसी प्रकार के विचारों का समूह एकत्र करती रही। उसने उस समय यह भी चाहा कि अपनी ज़मीन के लिए आश्रम-मैनेजर से विरोध करे। उन दिनों वह रनिया के आने की भी व्यग्रता से प्रतीक्षा करती रही। जब वह नहीं आता दिखाई दिया तो पार्वती ने गुप्त रूप से एक पत्र उसके नाम लिखवा कर भिजवा दिया। किन्तु भाग्य का चक्र देखिए, उसी समय उसके सिर पर फिर वज्र गिरा और एक रात जब वह निश्चिन्त बनकर अपने बच्चे को लिये सो रही थी, तब बलात् वह सोते हुए चौंक उठी। वह जागते ही चीख पड़ी और आर्त्त-स्वर से चिल्ला कर बोली—"मेरा बच्चा ! अभी सो रहा था मेरे पास, कि इतनी देर में…हे राम !"

और पार्वती ने फिर अपना सिर पीटना शुरू कर दिया। वरवस, सभी नारियाँ जाग गईं और पार्वती के पास जा पहुँचीं।

उसी समय मैनेजर को खबर मिली और वह भी वहाँ आ गया। बात सुनकर वह भी चकित बन गया। उसने, आश्रम के सभी सदस्यों के सम्मुख पुलिस में खबर देने का आदेश दिया।

इस प्रकार वह रात बीत गई, दिन निकल आया। उसी दिन अवसर पाकर आश्रम की एक नारी पार्वती के पास आई और सतर्क होकर बोली—"अरी, भोली औरत! तेरा बच्चा इसी मैनेजर ने उड़ाया है···वह बेचा गया है! रात में ही एक मोटर आश्रम में आई थी। तू जब रोई, तो उससे पूर्व ही, वह यहाँ से गई थी। उसकी आवाज़ मैंने सुनी थी। मैं जाग रही थी।"

इतनी बात सुनी तो पार्वती का विवेक जैसे चंचल हो गया। उसका धैर्य भी छूट गया। वह तड़प उठी और उसी समय मैनेजर के कमरे में पहुँच कर चिल्लाई—"अरे, चोर! चाण्डाल! बता, मेरा बच्चा किसे दिया है? वह तूने उड़ाया है!"

मैनेजर ने इतना सुना तो वह अवाक् रह गया। उस समय उसके पास नगर के दो-तीन विशिष्ट व्यक्ति बैठे हुए थे। वह उनसे समाज और धर्म के उत्थान-पतन पर चर्चा कर रहा था। पार्वती के उस रूप को देख, उसने कहा—"अरे, क्या कहती है? पागल हो गई है क्या!"

किन्तु पार्वती के मन में आवेश था। उस नारी के अन्तर्लोक में प्रतिष्ठापित माँ का हृदय तड़प रहा था। इसलिए वह फिर चीख कर बोली—"मैं तुझे जानती हूँ। समझ गई हूँ! तू औरतों का व्यापार करता है! पाप की रचना करता है,···दुष्ट! तूने मेरे हिस्से की जमीन बेचकर भी रुपया प्राप्त किया है। अब मेरा बच्चा···मेरा प्राण···"

मैनेजर कुटिल तो था ही, चतुर भी था। उस समय उसने कठिनाई से अपना रोष दबाया। वह फिर सदय भाव लेकर बोला—"अरी पगली! कहीं ऐसा भी होता है!"

पार्वती चिल्लाई—"यहाँ सभी कुछ होता है। औरतों को ठगा जाता है। बेचा जाता है। तेरे द्वारा यहाँ पाप का सृजन होता है। आज जिस तरह मेरा लड़का चुराया गया है, उसे बेचा गया है, उसी तरह इस आश्रम की ओट में भोली-भाली औरतों को ठग लिया जाता है···!"

इतना सुनकर मैनेजर चीख पड़ा। उसका कपटपूर्ण क्रोध फूट निकला—"बकवास करती है! इतने दिन बैठकर खाया, तो आज हमीं को चोर बताती

है ! चली जा, यहाँ से ! नहीं तो तेरे शरीर की खाल उधेड़ दूंगा ! बोटी-बोटी काट दूंगा, तेरी !"

किन्तु पार्वती तो जैसे अपने वास्तविक रूप को पहचान चुकी थी । उसकी आत्मा पर चोट पड़ी थी । वह तिलमिला गई थी । अपना धैर्य खो चुकी थी । जो व्यक्ति वहाँ बैठे थे, उठ खड़े हुए । वहाँ से जाने लगे ।

मैनेजर ने कहा—"देखा आपने ! यह है सेवा करने का फल ! यह मुझे प्रसाद मिला है । धर्म उठ गया, पाप का नारा ही चारों ओर लगाया जा रहा है !"

दांत पीसकर पार्वती ने कहा—"ढोंगी ! अब तेरा पाप बोलेगा ! वह घड़ा बीच चौराहे पर फूटेगा !"

उसी समय कमला वहाँ आई और पार्वती के मुंह पर तैड़ से थप्पड़ मारकर बोली—"बकवास करती है ! जिस थाली में खाया, उसी में छेद करने चली है !"

किन्तु कमला के हाथ का थप्पड़ खाकर पार्वती मौन नहीं रह सकी । वह कमला से अधिक पुष्ट थी । तुरन्त ही, उसने कमला का गला पकड़ लिया और उसे उठाकर जमीन पर पटक दिया । निश्चय ही, पार्वती उस कमला के प्राण निकाल देती । किन्तु तभी मैनेजर ने हण्टर उठाया और तैड़-तैड़ उसे पार्वती की कमर पर जमाना शुरू कर दिया । पार्वती चीख उठी, तड़प गई ! उसने वहीं मेज़ पर पड़ा हुआ रूल उठा लिया और मैनेजर के मुंह पर इतने जोर से खींचकर मारा कि उसकी आंखों का चश्मा टूट गया । माथे से खून निकल आया । कमला को छोड़ उसने मैनेजर को पकड़ लिया । वह तभी फिर चिल्लाया—"मेरा बच्चा ला···चोर···डाकू···"

लेकिन पार्वती आखिर औरत थी । आश्रम के अन्य नौकर भी आ गये । मैनेजर को छुड़ा दिया । तभी मैनेजर ने पार्वती को इतने जोर से धक्का दिया कि वह कमरे के बाहर जाकर पड़ी । दरवाजे के किवाड़ों से टकरा गई । वह चीख उठी ।

उसी समय आश्रम के सभी व्यक्तियों ने देखा कि पार्वती के गिरते समय ही, वहाँ पर एक ऐसी अलौकिक और अभूतपूर्व घटना घटी कि जिसका उस समय किसी को भरोसा नहीं था । वहाँ पर एकत्र विधवा स्त्रियां और नौकर जो तटस्थ थे, मैनेजर के प्रति उदासीन थे, बरबस ही, यह समझ सके कि भगवान है···पीड़ित की पीड़ा में बोलता है । उसका स्वर सभी जगह सुनाई देता है । और बात यह हुई कि जब पार्वती धक्का खाकर गिर पड़ी, वह आहत दग

गई, तभी हाथ में लाठी लिये, तेज़ चाल से चलता हुग्रा रलियाराम वहाँ ग्रा पहुँचा। वह पार्वती की उस दयनीय ग्रवस्था को देख चकित रह गया। वह कुछ कहता, कुछ समझ पाता कि तभी पार्वती ने उसे देखते ही, ग्रत्यन्त मर्माहत स्वर में कहा—"ग्ररे, रलियाराम ! मेरा नाश हो गया ! इस मैनेजर ने मेरा बच्चा चुरा लिया। ग्ररे, किसी को बेच दिया !"

किन्तु रलिया इतनी बात सुनकर भी मुँह से कुछ नहीं बोला। उसने पार्वती को ज़मीन से उठाया। उसके माथे का खून पोंछा ग्रौर वहाँ से सीधा कमरे में जाकर, मैनेजर की गर्दन पकड़ता हुग्रा बोला—"बदमाश...कमीने..."

लेकिन वहाँ ग्रकेला मैनेजर नहीं था। उसके साथी भी थे। रलिया को जब हाथापाई करते देखा तो वे भी ग्रागे बढ़े। तब रलिया ने लाठी सँभाल ली ग्रौर कहा—"एक-एक का सिर फोड़ दूँगा ! जान से मार दूँगा, तुम सभी को !" ग्रौर वह मैनेजर की ग्रोर देखकर बोला—"क्यों सफ़ेदपोश बाबू, तुम इतने खूँखार हो...इतने क्रूर...!" ग्रौर उसने एक ही साँस में, दो-तीन थप्पड़ ग्रौर घूँसों से मैनेजर के मुँह, गर्दन ग्रौर कमर को चुटीला कर दिया।

मैनेजर चीख पड़ा—"तू निकल जा यहाँ से, बदमाश !"

रलिया ने कहा—"हाँ, मैं ज़रूर जाऊँगा। पर तुझे भी ले जाऊँगा। सोच ले कि मैं तुझे ज़िन्दा नहीं छोड़ूँगा।"

उसी समय ग्रवसर पाकर कमला ने पुलिस को फ़ोन कर दिया था। मैनेजर को उसके नौकरों ने बचा लिया। किन्तु रलिया उसे फिर पकड़ना चाहता था। लेकिन तभी पुलिस ग्रा गई। थानेदार को देख, मैनेजर ने कहा—"यह बदमाश है, यह ग्रौरत भी ! बच्चे की चोरी मुझ पर लगाती है। ग्रौर यह ग्रादमी, इसका चहेता, कहता है कि जान से मार दूँगा !"

बात सुनी तो थानेदार ने रलिया की ग्रोर देखा। उसने पार्वती को भी घूरा। वह सिपाही को ग्रादेश देकर बोला—"थाने ले चलो, इन दोनों को। ताँगे में बैठाग्रो। इस ग्रादमी को हथकड़ी डाल दो।" उसने मैनेजर की ग्रोर देखकर कहा—"किसी गाँव का लगता है। सचमुच, डाकू मालूम होता है।"

कमला बोली—"जनाब, जान से मार देने की बात करता था ! ग्राप ग्रभी न ग्राते तो—"

थानेदार ने रलिया को घूरा ग्रौर कहा—"क्यों हज़रत ! रास्ता देखकर नहीं चले, क्या ! यह भी गाँव समझ लिया। चलो थाने।" ग्रौर वह स्वयं ग्रागे बढ़ गया।

उसी समय मैनेजर थानेदार को दूसरी ग्रोर ले गया। रलिया ने देखा कि

जब थानेदार ताँगे में बैठने के लिए आया तो उसने जेब में कुछ डाला था। देखते ही रलिया ने कहा—"क्यों, हराम का टुकड़ा मिल गया! चलना अदालत में, तुम्हारी नौकरी न छुड़वा दी, तो मैं अपनी मूंछ मुंड़ा दूंगा।"

बात सुनी, तो थानेदार ने तैंड़ से रलिया के मुंह पर थप्पड़ जड़ दिया और कहा—"बकवास की तो बोटी उड़ा दूंगा!" ताँगा बढ़ गया। थाना आ गया। थानेदार ने रलिया और पार्वती को हवालात में बन्द करने का आदेश दे दिया। उसने उन दोनों का चालान कर दिया।

उसी समय रलिया ने पार्वती को आगाह कर दिया कि यह अभी न बताना कि तेरे बच्चा हुआ है, अभी हुआ है। डाक्टरी रिपोर्ट में सब आ जायगा। देखना, इस खेल में भी मजा आयेगा।

किन्तु पार्वती की उस समय अजीब अवस्था थी। वह सहमी हुई थी। उसका बच्चा हाथ से गया था। वह छीना गया था। वह उसे प्राणों से प्यारा था। उसी दिन पार्वती और रलिया को जेल भेज दिया गया। मुकदमे का दिन भी निश्चित हो गया। उसी बीच में पुलिस के द्वारा यह समाचार मलिकपुर में पहुँचा। सभी को यह मालूम हो गया कि रलिया पकड़ा गया। पार्वती भी जेल गई। किसी को इस बात की चिन्ता हुई हो, या नहीं; परन्तु रमिया ने तुरन्त ही यह निश्चय किया कि यह मुकदमा लड़ा जायगा। उसने हरदेवा के द्वारा ज़मानती आवेदन-पत्र भर दिया। लाला धनपतराय ने दोनों की ज़मानतें करा लीं। पार्वती वहीं शहर में लाला के एक सम्बन्धी के यहाँ रखी गई।

छोटा-सा मुकदमा था, परन्तु बे-बात बड़ा बन गया। नगर के पत्रों में भी उसका विस्तार के साथ उल्लेख हुआ। आश्रम का मैनेजर गिरफ़्तार हो गया। उसका संरक्षक नगर का एक मान्य व्यक्ति बनाया गया। जो सुधारवादी संस्थाएँ थीं, उन्होंने उस मुकदमे में विशेष भाग लिया। पुलिस का थानेदार भी मुअत्तिल कर दिया गया। पार्वती ने आश्रम की कई स्त्रियों के नाम लिखाये थे कि वे उसके पक्ष में गवाही देंगी, वे आश्रम की वास्तविकता बता सकेंगी। जब अदालत के आदेश पर पार्वती की डाक्टरी परीक्षा हुई, तो डाक्टर ने अपनी रिपोर्ट में स्पष्ट लिख दिया कि दो मास के अन्दर ही बच्चा हुआ है। शरीर की अवस्था उसकी द्योतक है।

मजिस्ट्रेट ने जब आश्रम के मुन्शी की गवाही ली तो उसने स्पष्ट कह दिया कि बम्बई का एक सेठ बच्चा खरीद कर ले गया। उसने सेठ का नाम और पता भी बता दिया। उसी मुन्शी ने अदालत को बताया कि वह बच्चा पाँच हज़ार रुपये में बेचा गया था। सेठ नवजात शिशु चाहता था। वही उसे मिल

गया। वह देर से इस प्रकार की मांग कर रहा था। आश्रम के मुन्शी और अन्य आश्रम की नारियों ने जिस प्रकार के बयान दिये, उनसे अदालत को यह भली-भाँति पता चल गया कि वह आश्रम नगर में भ्रष्टाचार का अड्डा है। वह नगर के धनिकों की काम-पिपासा शान्त करता है और उसके द्वारा मैनेजर धन उपार्जन करता है। चूँकि आश्रम के मैनेजर ने थानेदार को घूँस दी, इसलिए एक ओर के बयान लेकर ही, थानेदार ने पार्वती और रलिया का चालान कर दिया। उन्हीं को दोषी ठहराने का प्रयत्न किया गया।

निःसन्देह, उस मुकदमे से नगर में एक अजीव प्रकार की हलचल मच गई थी। वह सेठ भी बम्बई से बुलाया गया। बच्चा भी लाया गया। चूँकि आश्रम कानूनी ढंग से अनाथ बच्चे दे सकता था, इसलिए सेठ निर्दोष रहा। परन्तु अदालत के आदेश पर पार्वती का बच्चा उसे मिल गया। मैनेजर ने पार्वती की जिस ज़मीन का रुपया हड़प लिया था, वह पार्वती को दिया गया। थानेदार उस जुर्म में एक वर्ष के लिए कारावास-दण्ड पा गया। मैनेजर को पाँच वर्ष का कारावास-दण्ड दिया गया।

वह एक अजीव दृश्य था। अदालत के बाहर मलिकपुर गाँव के अनेक व्यक्ति उपस्थित थे। रमिया, जग्गू और हरदेवा के साथ, पार्वती का पिता जसपत भी था। वह रमिया की प्रेरणा पर वहाँ आया था। एक लम्बे समय के बाद बाप-बेटी ने एक-दूसरे को देखा। जसपत को देखते ही, पार्वती का सिर झुक गया। उससे बोला नहीं गया। उसने रोना शुरू कर दिया।

तभी रमिया ने कहा—"जसपत, लड़की का हाथ पकड़ ले।"

किन्तु जसपत मौन था। वह तटस्थ बना था।

रमिया ने फिर कहा—"देखता नहीं, पार्वती रो रही है।"

किन्तु अचरज की बात यह हुई कि उस समय जसपत भी रो उठा। उस अवस्था में ही, वह पार्वती की ओर बढ़ गया।

अठारहवीं बात

जसपत महत्त्वाकांक्षी, लालची और क्रूर व्यक्ति था। जिस समय वह पार्वती को देखकर रो पड़ा, तभी रमिया ने गाँव के अन्य व्यक्तियों से सलाह की और निश्चय किया कि पार्वती को उसकी जमीन से मिलने वाला रुपया बैंक में जमा करा दिया जाय। किन्तु जसपत को यह बात पसन्द नहीं आई। उसके मन के भाव को समझकर, रमिया ने कहा—"जसपत भाई, अब भी समय है कि तुम उदार बनो, न्याय की बात करो। तुम पार्वती के रुपये पर निगाह मत रखो। गाँव के कहने से लाला ने तुम पर चलाया हुआ मुकदमा वापिस ले लिया, तो तुम भी अपना मन शुद्ध कर लो।"

किन्तु जसपत कुछ बोला नहीं, मौन बना रहा। वह रमिया की बात को उस अवस्था में भी शूल की तरह चुभती अनुभव करता रहा।

उसी समय कचहरी के आँगन में रमिया ने एक बात और कही जिसे सुनकर, जसपत क्या, सभी का माथा ठनक गया। उसने सीधा पार्वती से प्रश्न किया—"बोल, पार्वती, अब तू कहाँ रहेगी? बाप के घर या ससुराल के घर? तेरा रास्ता खुला है। तू स्वतन्त्र है।"

पार्वती ने कहा—"चाची, मेरे लिए ये दोनों रास्ते बन्द हैं। कोई तीसरा हो, तो बताओ।"

रमिया ने कहा—"रास्ते तो तूने भी देखे हैं। बोल, क्या वे पसन्द किए? तुझे भले-बुरे आदमी भी मिले। कोई तेरी समझ में आया?"

उसी समय पार्वती ने रलिया की ओर देखा जो स्वच्छन्द भाव से अपनी लाठी पकड़े एक पेड़ की ओर देख रहा था। उस पेड़ पर दो पक्षी बैठे थे। गर्मी से बचने के लिए, वे एक तने के साये में ठण्डी-ठण्डी हवा खा रहे थे। उन दोनों की चोंचें मिली थीं और आँखें बन्द किए हुए जैसे वे जीवन का स्वर्गीय आनन्द ले रहे थे। बरबस, पार्वती की भी उस ओर दृष्टि गई। किन्तु तभी उसने अपना सिर झुका लिया। कोई शब्द नहीं कहा।

पास खड़े लाला धनपतराय ने कहा—"रमिया, क्या यह पूछना ठीक है?

जसपत तो सगा वाप है।"

रमिया ने लाला की ओर देखा, जैसे उसकी वात को समझना चाहा। उसने कहा—"लालाजी, इस पार्वती ने जो दुःख उठाये हैं, वे सव वाप के ही कारण प्राप्त हुए। और जसपत ने जो चार मास की जेल काटी, वह भी वेटी के कारण! दोनों के दिल फट गये—जुदा-जुदा हो गये हैं! यह तो मतलव का संसार है न! पार्वती के लिए अव जसपत के घर में जगह नहीं है। वैसे भी नहीं! अगर हो सकती है, तो ससुराल के घर। पर पार्वती अव वहाँ भी नहीं जायगी। ऐसा नहीं चाहेगी। तव वताओ, कहाँ जाय! क्या गाँव की वेटी को यहीं सड़क पर छोड़ दिया जाय?"

गाँव के जो और लोग वहाँ खड़े थे, उन्होंने रमिया की इस वात को पसन्द किया। उसे सराहा।

रमिया वोली—"अभी हम कचहरी में खड़े हैं। मजिस्ट्रेट वैठा है। पार्वती का जो फ़ैसला हो, उसे कानून भी माना जा सकता है।" यह कहते हुए उसने फिर पार्वती को लक्ष्य किया—"वोल, पार्वती! क्या चाहती है? अव तू किस रास्ते पर चलना पसन्द करती है?"

जसपत ने कहा—"रामप्यारी, अव वात क्यों वढ़ाती है। इसे घर चलने दे। अभी वहीं रहने दे।"

रमिया ने उसे घूरा—"अच्छा, कुछ और नीयत में वाकी है। अरे, ईमानदार वन, जसपत! तू वाप है। यह लड़की तूने पैदा की है। तेरी वहुत जग-हँसाई हो गई। सुना कभी कि वेटी ने वाप को जेल कराई।"

पास खड़े एक व्यक्ति ने कहा—"जसपत, जग्गू की वहू ने तुझे वचा दिया। इस वात को मत भूल कि लाला से तेरा पिण्ड छुड़ाने का काम इसी रामप्यारी का था।"

लाला धनपतराय ने कहा—"वात तो यही है। रामप्यारी की वात मुझसे टाली नहीं गई। मैंने कई हज़ार की चपत खा ली। अपनी रकम पानी में फेंक दी।"

रमिया वोली—"मैं तो गाँव की भलाई सोचती हूँ। तुम सव को फलता-फूलता देखना पसन्द करती हूँ। चाहती हूँ कि तुम सब हँसो, खुश रहो। वोलो, जसपत?"

जसपत ने अपना सिर झुका लिया और कहा—"जो तू करे, मुझे वही मंजूर है, रामप्यारी!"

रमिया ने कहा—"देखना, तीर छूटकर नहीं लौटेगा। तुझे मेरी वात

माननी पड़ेगी।"

जसपत ने सिर उठाकर धीर और गम्भीर बनकर कहा—"ऐसा ही होगा। तेरा कहना मेरे लिए भी भगवान का वाक्य होगा।"

तभी रमिया ने लाला की ओर देखा। रलिया, जग्गू और अन्य गांव के व्यक्तियों की ओर लक्ष्य किया। जैसे उसने उनके दिल की बात को भी समझना चाहा। परन्तु उनमें से किसी के पास कुछ नहीं था। रमिया क्या निर्णय देगी, केवल इतना जानने के लिए ही, उन सभी का मुंह उसकी ओर उठा था।

तभी रलिया ने कहा—"भाभी, तू गांव की सरपंच है। तेरी आज्ञा सर्वोपरि है।"

तुरन्त ही रमिया ने कहा—"झूठा कहीं का! क्या तू मानेगा? और यही क्या ज़रूरी है कि मैं जो-कुछ कहूँ उसे गांव मान लेगा?" वह बोली—"बात पार्वती की है, एक औरत के जीवन-मरण का प्रश्न है! बोल रे, रलियाराम! तू उसे समझ सकेगा?"

रलिया तेज़ बन गया—"भाभी, तू मेरा सिर भी काट दे, तो भी मैं उफ़ न करूँगा।"

तभी रमिया ने लाला को लक्ष्य किया और कहा—"बोलो, लाला! तुम भी मेरी बात का समर्थन करोगे? मैं समझती हूँ कि लेन-देन का व्यापार करने वाला इस ज़िन्दगी की असलियत को खूब जानता है। तुम्हारे भी कई लड़कियाँ हैं। उनमें ममता है। इस पार्वती का उद्धार करो। जिस गोद में इसे पाला, उसी में जगह दो।"

लाला ने कहा—"रामप्यारी, यह पार्वती मेरी ही लड़की है। इसके आंसुओं को देखकर मेरा भी मन पसीज जाता है। बोल, तू क्या चाहती है। जसपत कुछ नहीं करेगा, तो मैं करूँगा। यह पार्वती हमारे गांव की आबरू है, प्रतिष्ठा है।"

तभी सबने देखा कि रामप्यारी अधिक गम्भीर बन गई, जैसे पत्थर हो गई। उसने पार्वती का हाथ पकड़ा और उसे रलिया के हाथ में देकर कहा—"रलियाराम, ज़िन्दगी-भर इस हाथ को न छोड़ना। ईमानदारी से पकड़े रहना।"

रलिया ने कहा—"भाभी···"

रमिया ने कहा—"चुप! अब और कोई बात नहीं।"

जसपत जैसे चौंक गया। वह लाल बन गया। छूटते ही उसने कहा—"रामप्यारी, यह नहीं होगा।"

रमिया बोली—"अब यही होगा जसपतराम! शायद तुमको यह नहीं मालूम कि इस पार्वती की रक्षा रलियाराम ने की है। यही इसके लिए जेल

गया। पिटा और परेशान हुआ। इस ग़रीब ने अपना पैसा भी खर्च किया। कर्ज़दार बना। जिसका मुझे पता है। अब इसे कोई पुरस्कार भी मिलना चाहिए। खुशी मना कि तेरी बेटी तेरी आँखों के सामने रहेगी। तेरे दुःख-सुख की भी साथिन बनेगी। चल वकील के पास, लिखा अर्जी। उसे जल्दी से मजिस्ट्रेट के सामने पेश करें और आज ही इस काम को पूरा कर दोनों को साथ-साथ गाँव ले चलें।"

बात सुनी तो जसपत का सिर झुक गया। वह रमिया के जादू में आ गया। सभी के साथ वह भी वकील के पास पहुँचा। विवाह का आवेदन-पत्र लिखा गया। उस पर सभी के हस्ताक्षर हुए। तभी वह अदालत में पेश कर दिया गया। मजिस्ट्रेट ने दोनों के बयान लिए और स्वीकृति की मोहर लगा दी।

अदालत के बाहर आकर रमिया ने रलिया को टंकोरा—"देख, रलिया-राम! यह पार्वती का लड़का इसका असली बाप ले सकेगा, ज़मीन का रुपया भी।"

रलिया ने कहा—"भाभी, मुझे कुछ नहीं चाहिए। वह आये तो पार्वती को भी ले जा सकेगा।"

रमिया हँसी—"मैं जानती हूँ, तू अब सुगमता से नहीं झुकेगा।"

उसी दिन वह काफ़िला गाँव लौट गया। अन्य समाचारों के समान, वह नई बात भी गाँव में फैल गई। जिसने सुना, उसी ने बात को सराहा। जो शहर से लौटे थे, उन्होंने कहा—"भाई, जग्गू की बहू का जादू वहाँ भी पुग गया। किसी ने इन्कार नहीं किया।"

—तो कहा गया—"जब उसकी बात में सचाई है, तो क़ौन रोकता। जसपत क्या, फिर अपने रास्ते में काँटे बोता।"

"पर यह तो देखो कि रलिया भी पिघल गया। तुरन्त सिर झुका कर चुप हो गया।"

"और पार्वती! उसने कुछ कहा?"

"नहीं जी, उसने तो बात सुनी और सिर झुका दिया। जैसे स्वीकार कर लिया। रमिया ने उसका हाथ पकड़ा और रलिया के हाथ में थमा दिया। उस हाथ को एक बार पकड़ कर क्या उसने छोड़ने का रुख दिखाया? कसकर पकड़ लिया।"

"बस, बस, हम समझ गये! उसके भी मन में था। उसे मंज़ूर था। और रलिया ही कौनसा भोला-भाला था। एक ही है ज़माने-भर का उस्ताद! सौदा देखकर ही, उसने आँखों को उठाया होगा। मंजूर किया होगा।"

"अजी, खैर, जो कुछ भी हो, ज़रूरत दोनों को थी। वह भी आवारा था,

इन्सान बनकर भी इन्सान नहीं था। बिना खूंटे का बछड़ा बना था। अब बँध गया तो ठीक से चलेगा। देखना, कुछ ही दिनों में उसका सिड़री-पना निकल जायगा।"

एक ने कहा—"क्यों जी, गाँव की बेटी गाँव में! एक ही मोहल्ले में! सच, ज़माना बिलकुल बदल गया है। हम तो शहरों की बात देखकर हँसते थे. अरे, अब तो···हे परमात्मा!"

"ऊँह, क्या पुरानी बात लेते हो जी! अब यह नहीं निभता। भला लड़का अगर पड़ोस में मिले, तो पा लेना अच्छा! ब्याह सौदा नहीं है, मेल-मिलाप का साधन है···दो कुटुम्बों में सम्बन्ध बनाता है।"

यों, बात उठी, कुछ चली और दब गई।

रलिया और जसपत के घर में अधिक दूरी नहीं थी। बस चार-पाँच घरों का अन्तर था। किन्तु जब से पार्वती गाँव में आई, तब से उसकी माँ बेटी से नहीं मिली। पार्वती यदि अपने कोठे पर चढ़ी दिखाई दी, तो माँ नहीं बोली। ऐसे समय पार्वती स्वयं ही नीचे उतर गई। किन्तु माँ-बेटी की दूरी जहाँ अस्वाभाविक थी, वहाँ अशिष्ट और अशुभ भी लगती थी। रलियाराम जब एक दिन जग्गू के घर पहुँचा, तो रमिया ने उससे जानना चाहा कि जसपत की बहू भी उससे बोली? उसने अपनी लड़की से बात की या नहीं? किन्तु रलिया ने बता दिया कि न तो जसपत बोलता है न उसकी बहू। फलस्वरूप रमिया को यह सुनकर अच्छा नहीं लगा। उन दिनों यद्यपि रमिया और जसपत की बहू में स्वयं बातचीत बन्द थी, परन्तु उस समय रमिया अपने ऊपर एक उत्तर-दायित्व लिये थी। वह स्वयं उदार बनना पसन्द करती थी। इसलिए वह चाहती थी कि माँ-बेटी बोलें। एक-दूसरे के दुःख-दर्द को समझें। इसके साथ रमिया के मन में यह भी बात थी कि यदि जसपत और उसकी बहू रलिया के प्रति दुर्भाव रखेंगे तो एक दिन झगड़ा भी करेंगे, मार-पिटाई के लिए तैयार होंगे। रमिया यह सोच ही रही थी और वह कोई उपाय सोजना ही चाहती थी कि स्वतः ही उन दो परिवारों के मिलने का एक ऐसा कारण बना कि रमिया स्वयं अवाक् रह गई। उसने सुना कि पार्वती को तेज़ बुख़ार है। इसलिए जब उसे देखने वह भी गई तो रलिया स्वयं दर्शक की तरह खड़ा था। वह मौन था। परन्तु पास ही बिछी चारपाई पर पार्वती लेटी थी और उसके पास बैठी हुई उसकी माँ। दोनों रो रही थीं। रोये जा रही थीं। यह करुण दृश्य देखकर रमिया किंचित् ठिठक गई। उसने इशारे से रलिया को बुलाया और रोने का कारण पूछा।

रलिया ने कहा—"मैं तो अभी बाहर से आया था। देखकर खड़ा हो गया।"

वह बोला—"पार्वती की माँ आज ही आई है। किसी से सुना होगा कि लड़की बीमार है, तो दौड़ आई। आखिर तो माँ है! माँ का दिल लिये है!"

रमिया ने कहा—"यह ठीक है। आसार अच्छे हैं। तूफ़ान उतर रहा है। हाँ, और जसपत आया?"

रलिया ने कहा—"वह नहीं आया। मैंने भी नहीं कहा। मुझसे नहीं बोलता। उसके पेट में काँटा है। वह मुझे दुश्मन समझता है।"

रमिया बोली—"चिन्ता मत कर। बेटी का मोह उसे भी खींच लायेगा। और अब तो उसका धेवता तेरे पास है। यह क्या नाना-नानी को दूर रहने देगा!"

किन्तु रलिया ने उस बात में अधिक रस नहीं लिया। उसे पार्वती की चिन्ता थी। उसने शहर से डाक्टर बुलाया था। उसी की प्रतीक्षा में था। दिन में पार्वती बुखार की तेज़ी में बड़बड़ाई थी, तब रलिया परेशान हुआ। तुरन्त वैद्य को लाया। पर वह जानता था कि गाँव का वैद्य अच्छी दवा नहीं रखता, इसलिए उसने शहर आदमी भेजा था।

उसी समय बाहर से आदमी आया और उसने सूचना दी कि डाक्टर आ गया। रलिया तुरन्त आगे बढ़ गया।

रमिया पार्वती के पास गई। वह उसकी माँ को सम्बोधित करके बोली—"रोने से क्या होता है! बेटी को सम्भाल, गले लगा। अपने और इसके किये पर धूल डाल! जा, जसपत को भेज। तुम दोनों के सिवा और इसका कौन है! तू माँ है। तूने तो इसे जन्मा है। जसपत बाप है। तुम लोगों से बड़ा हितेच्छु इसका और कौन हो सकता है!"

जसपत की बहू ने बात सुन ली, पर अपनी ओर से कुछ नहीं कहा। उसी समय डाक्टर घर में आ गया। उसने पार्वती को देखा। उस समय बुखार उतर रहा था। शरीर की परीक्षा करके वह बोला—"चिन्ता की बात नहीं, सर्दी का बुख़ार है। मलेरिया है, तेज़ भी होता है। दो-चार दिन हवा खायेगी, तो उतर जायगा।"

रमिया ने कहा—"डाक्टर साहब, पार्वती गर्भिणी है। गरम दवा देने से नुकसान तो नहीं होगा?"

डाक्टर रमिया को जानता था, बोला—"हाँ चौधराइन, मुझे ज्ञात है। गरम दवा नहीं दूंगा। गर्भ को नुकसान नहीं होगा।"

उसी समय तेज़ चाल से चलता हुआ और खोया हुआ-सा जसपतराम उस घर में आया। उसने आते ही पूछा—"क्या बीमार है पार्वती? कब से?" और वह अपने-आप ही फूटकर रो पड़ा।

रमिया ने ताना दिया—"तुम गाँव में और मोहल्ले में नहीं रहते, महतो! जमीन पर भी नहीं! देखो, पार्वती कई दिन से बीमार है।"

सुना, तो जसपत उधर ही बढ़ गया। रलिया डाक्टर के साथ बाहर चला गया।

तभी रमिया ने जसपत को सम्बोधित किया—"महतो, दीखता है, तुम्हारे दिल में अब भी खार है। क्या बेटी से? या रलिया से?" वह बोली—"यह तो तुम्हारी औलाद है! और रलिया ने सचमुच ही, तुम्हारी बेटी का उद्धार किया है। यह सहायक न होता, तो पार्वती का आज कहीं नाम-निशान भी न दिखाई देता। जिस आँधी में यह उड़ी, वह भयानक थी,...इसके लिए काल-रूप थी। तू भगवान का आभारी बन कि रलिया तेरी लड़की का सहायक सिद्ध हुआ। जाने कैसे इसके मन में भगवान आकर बैठ गया।"

जसपत ने कातर बनकर कहा—"अब अधिक शर्मिन्दा न कर, रामप्यारी! मैं बहुत मूर्ख निकला। जिन्दगी-भर जानवर ही रहा!"

उसी समय जसपत की बहू ने रमिया के पैर पकड़ लिये और कहा—"मुझे भी माफ़ कर दो। मैंने तुम्हें बहुत-कुछ कहा। सदा गैर ही समझा!"

रमिया गम्भीर बन गई। उसकी आँखें भी भर आईं। उसी अवस्था में वह बोली—"तू पागल हो गई, जसपत की बहू! आज क्या, मैं कभी भी तेरी बुराई में नहीं रही। पर बुरी बात मैंने सदा बुरी कही।"

उसी समय रलिया की माँ पार्वती के लड़के को लाई। वह रो रहा था, इसलिए बाहर ले गई थी। अब चुप था।

रमिया ने उसे देखकर कहा—"क्यों रे, शैतान! देख, यह तेरी नानी है, नाना है। रूठे हुए आज आये हैं। खेल, इनकी गोद में।"

तभी जसपत की बहू ने हाथ बढ़ाया और बच्चा झट से उसकी गोद में पहुँच गया।

रमिया ने हँसकर कहा—"अपनों को यह भी समझता है!"

जसपत की बहू ने कहा—"पार्वती जब कोठे पर होती, तो मैं इसी को देखती। सचमुच, गोद में लेना चाहती। कभी मोहल्ले में देख पाती, तो तब भी हुलसती।"

रमिया ने कहा—"तू तो पागल थी! बच्चा तो तेरा है। इस पर तेरा अधिकार है।"

बहू ने कहा—"मैं क्या कहूँ, मेरा मुँह काला हो गया!"

रमिया ने कहा—"नहीं, नहीं! भूल सभी से होती है। पर बुद्धिमान वह

है कि जो अपनी भूल मान ले। आगे की सोच ले।"

उसी समय रलिया लौट आया। तभी रमिया ने कहा—"देख, रलिया! अब ये दोनों अपनी लड़की को सँभालेंगे। तू बाहर का काम देख।"

रलिया ने कहा—"मैं कब इन्कार करता हूँ। लड़की इनकी है। घर इनका। पार्वती चाहे तो अब भी जा सकती है। मैं नहीं रोकता।"

उसी समय पार्वती ने उसकी ओर देखा।

रमिया ने कहा—"अब ऐसा मत कहना। पार्वती को अच्छा नहीं लगेगा। यह कोई बाज़ार का सौदा है कि जो खरीदा और वापिस कर दिया! धर्म, समाज और न्याय का आश्रय लेकर ही पार्वती का हाथ तेरे हाथ में दिया गया है। यह छोड़ा, तो याद रख, तू अपना दीन-ईमान बिगाड़ लेगा। भ्रष्ट हो जायगा। आज तो आदमी है, फिर जानवर से बदतर बनेगा। पार्वती को पाकर तेरा भी जीवन सुधर जायगा, पगले!"

जसपत ने कहा—"रलियाराम, मैं आज इस लड़के की कसम खाता हूँ कि तू मेरा है, मैं तेरा। चैन कर। आराम की नींद सो। तेरे पसीने की जगह अब मेरा खून बहेगा।"

यह बात रमिया ने भी सुन ली। पर वह भी रलिया की तरह कुछ नहीं बोल सकी। वह केवल ऊपर आसमान की ओर देख, अपने मन में ही इतना कह सकी कि यह इन्सान भी खूब है, कभी जानवर बनता है कभी देवता। यह जसपत···यह रलियाराम···उसने घर जाने की बात कही और तुरन्त वहाँ से उठ, चली गयी। उसे सन्तोष था कि चलो, पार्वती का बुखार, दो परिवारों का इलाज बन गया। अपने घर पहुँचते-पहुँचते उसने अपने मन में कहा—'यह आदमी भी कमज़ोर है। दया और ममता का मोहताज है···इसी का आश्रय पाकर यह अपनी जिन्दगी के दिन पूरे कर देता है!'

घर जाते ही, रमिया ने देखा कि उसकी लड़की ससुराल से आई है, दामाद भी साथ है। माँ को देखते ही, लड़की उठ खड़ी हुई और रमिया की छाती से चिपट कर बोल पड़ी—"मेरी माँ!"

उन्नीसवीं बात

वैसे, मलिकपुर गांव में रमिया भी लोगों के लिए एक पहेली बन गई थी। वह आसानी से नहीं समझी जाती थी। लोग दिन-प्रति-दिन उसकी शक्ति को स्वीकार करते जा रहे थे। रमिया ने गांव में जिस प्रकार के काम किये, उसकी चर्चा जिला और प्रान्त में भी होने लगी थी। काश, रमिया पढ़ी होती, तो उसे लोकसभा की सदस्यता के लिए भी खड़ा किया जा सकता। रमिया किसी सभा में बोल भी नहीं सकती थी। किन्तु स्वयं मलिकपुर गांव के लोग चकित थे कि क्या से क्या बन गई, यह रमिया! आश्चर्य, कि रमिया का पहनावा और रहन-सहन पूर्ववत् था। एक बार जब नगर से कुछ नेता आये, तब रमिया उनसे अपनी प्रशंसा सुनकर इतना सकुचाई कि कुछ नहीं बोल सकी। और देर तक मौन रहने के बाद केवल इतना कह सकी—"मैंने कोई भला काम नहीं किया। जो कुछ हुआ, गांव वालों की इच्छा से हुआ···यहां की आवश्यकता के अनुसार हुआ।"

आये हुए व्यक्तियों के नेता ने कहा—"हम जानते हैं कि तुम यही कहोगी, इसी सत्य का उद्घोष करोगी। किन्तु पथ-प्रदर्शन तुम्हारा था। तुमने लोगों को अँधेरे में प्रकाश दिखाया।"

फलस्वरूप, इतनी प्रशंसा और सम्मान पाकर भी, रमिया शान्त नहीं थी। मानो बरबस ही, उसने अपने सिर पर बोझ उठा लिया था। जैसे वह एक से अनेक बन चुकी थी। गांव की समस्या उसकी थी। पहले वह अपनी और पति की चिन्ता करती, पर अब उसे निरन्तर ही यह देखना पड़ता कि गांव में कोई दुखी तो नहीं···पीड़ित तो नहीं···विवश तो नहीं···।

जग्गू इस पक्ष का आदमी नहीं था और वह अपने ही देखे-सुने पुराने मार्ग पर चलना पसन्द करता था। जिस प्रकार की प्रतिष्ठा रमिया ने प्राप्त कर ली थी, वह उसे बोझीली लगती। घर का खर्च भी बढ़ गया था। समस्या यह थी कि किसी दिन जग्गू और रमिया को निराहार भी रहना पड़ता। कभी यह भी होता कि रमिया जब-तब गांव के किसी सुधारवादी कार्य में लगी रहती

श्रौर घर में ताला पड़ा होता। अथवा जग्गू घर पर बैठा हुआ रमिया के आने की प्रतीक्षा किया करता। जग्गू की एक यह भी विवशता थी कि वह रमिया से अधिक नहीं कह पाता। रमिया का कोई एक प्रकार का काम भी नहीं था। पंचायत के काम के अतिरिक्त जो सबसे बोझीला काम उसने उठा रखा था, वह यह था कि उसे गाँव के प्रत्येक घर के दुःख-सुख की निगरानी भी करनी पड़ती थी। मानो वही गाँव की माँ थी। कहीं कोई बीमार होता तो रमिया दौड़ती। कोई मर जाता तो रमिया उस घर पहुँच जाती। कहीं झगड़ा होता अथवा दो भाइयों में फटाव होता दिखाई पड़ता, तब भी रमिया अपनी वाणी का पूर्ण उपयोग करती। उन्हें समझाती, एक बने रहने की सीख देती।

इसलिए जग्गू कहता—"रमिया, यह दुनिया है। इसे नहीं बदलना। मरने वाले मरेंगे, लड़ने वाले लड़ेंगे। यहाँ स्वार्थ और अपना-आपा ही देखा जाता है। तू चाहे कि यहाँ स्वर्ग उतर कर आ जाये, तो नहीं आ सकेगा!"

और जब जग्गू ने एक बार रमिया से ठीक इसी प्रकार की बात कही तो रमिया उस दिन काफ़ी थकी थी। दिन-भर से भूखी थी। क्योंकि जब सुबह वह रोटी बनाकर उठी, तो उसे खबर मिली थी कि गाँव की दूसरी पट्टी में एक जवान लड़का मर गया है, उसे साँप ने काट लिया, तब रमिया ने वे बनी-बनाई रोटियाँ तुरन्त छोड़ दीं। वह उठ खड़ी हुई। उसने जग्गू से रोटी खाने की बात कह दी और उस घर की ओर चल पड़ी। वह दोपहर तक उस घर से छुट्टी पा सकी, पर तभी उसके कानों में बात पड़ी कि एक घर में दो भाई आपस में लड़ पड़े हैं। झगड़ा देवरानी-जेठानी में चला। देवरानी ने जेठानी पर ताना मारा था कि मेरे बच्चे को दूध नहीं मिलता और उसका बच्चा खूब दूध पीता है। तब उस जेठानी ने उस ताने का जवाब भी ताने में दिया—"ऐसा है तो देवर जी कमाई करें और जुदी भैंस बाँध लें।" यह प्रहार कठोर था। देवरानी के लिए असह्य था। उसने तुरन्त अपने पति को बात सुनाई। उससे कहा—"जब तुमसे मेरा बच्चा नहीं पलता तो मुझे मैके भेज दो। मेरा यहाँ गुज़ारा नहीं होगा।" और उसने जेठानी द्वारा कहा गया वाक्य और अधिक नमक-मिर्च लगाकर पति के समक्ष रख दिया।

इसका फल यह हुआ कि उसी दिन दोनों भाइयों में विवाद उठ खड़ा हुआ। दो चूल्हे हो गये। छोटा भाई ज़मीन भी आधी माँगने लगा, किन्तु बड़ा भाई सहमत नहीं था। वह आधी ज़मीन देने के लिए तैयार नहीं हुआ। वह कह रहा था—ज़मीन मैंने बढ़ाई है। मेरी मेहनत से घर की तरक्की हुई। मामला इतना बढ़ा कि दोनों में लाठियाँ तन गईं। मोहल्ले के लोग इकट्ठे हो गये। उसी

समय रमिया का आवाहन हुआ क्योंकि लोगों का यह आम विश्वास बन गया था कि जिस काम को वे स्वयं नहीं कर सकते, उसे रमिया कर सकती है—जग्गू मेहतो की बहू—गांव की सरपंच।

रमिया थकी हुई थी क्योंकि वह एक शोकग्रस्त परिवार के मध्य देर तक रही थी। उस जवान लड़के की बहू, माँ, बाप तथा बहिन को समझाते हुए और ईश्वर की लीला का बखान करते हुए उसका शरीर भी दुखा और मस्तिष्क भी। वैसे, ऐसे समय, स्वयं रमिया को आश्चर्य होता कि कैसे वह इतनी बड़ी बात कहने लगी। पेट के और मस्तिष्क के किस कोने से वे भली बातें निकल कर आतीं और रमिया की वाणी को सफल बना देतीं। जो हो, रमिया उन दोनों भाइयों के पास भी पहुँच गई। देखा कि वे दो भाई—एक ही माँ के बेटे—धरती की कोख से पैदा हुए वे दो टुकड़े, जैसे अपने सम्बन्ध पूर्णरूप से भूल चुके थे। उन्हें तनिक भी इस बात का ध्यान नहीं रहा था कि उनकी प्रतिष्ठा क्या है और उनका कार्य क्या! मानो वे दोनों खूनी भेड़िए बने हुए, एक दूसरे को घूर रहे थे, खा जाना चाहते थे। लगता था, जैसे वे पूर्णरूप से स्वार्थान्ध हो चुके थे।

यह देख, रमिया कड़वे भाव से मुस्कराई। जहरीलेपन से हँसी। वह बड़े और छोटे भाई को लक्ष्य करके बोली—"तो तुम अपना तमाशा दिखा रहे हो, इन पड़ोसियों को! हाथों में इन लाठियों को लिये, तुम लोगों को यह भी बता रहे हो कि तुम्हारे माँ-बाप ने तुम्हें पैदा कर और पाल-पोस कर बुद्धिमानी नहीं की। वे जिन्दा होते तो जरूर शरमाते। अब मर कर भी उनकी आत्मा तड़प रही होगी।" यह कहते हुए रमिया ने सांस भरी और छोड़ दी। उसने कहा—"भाई, देखो, मैं औरत हूँ। यही कह सकती हूँ। आगे तुम्हारी इच्छा! तुम दोनों सब्र से काम लो। तुम्हारे पास जो धरती है, वह तुम्हारी माँ है—जननी है—उसके टुकड़े न करो। वह सभी की है। सभी को जीवन देती है··· अन्न प्रदान करती है। उससे इन्सान भी प्राणों का सम्मान रखते हैं और पशु-पक्षी भी।" तभी रमिया ने वहाँ पर एकत्र सभी व्यक्तियों पर एक विहंगम दृष्टि डाली और कहने लगी—"मैं अभी गांव के एक घर से आ रही हूँ। सुना तो होगा ही तुम लोगों ने कि रामचन्द्र मेहतो का लड़का सांप के काट लेने से मर गया है। देखा तुमने, एक जवान, सुन्दर पाला-पोसा आदमी कितनी जल्दी उठ गया। वह अपनी ज़मीन भी छोड़ गया, मकान और ममता भी। और इसी प्रकार सब छोड़ जाते हैं। तुम भी छोड़ जाओगे। तो क्यों न मिल-बाँट कर अपना काम करो। लोग ग़ैरों को अपना बनाते हैं, तुम अपनों को ग़ैर···दार,

भाई ! क्या यह भी कोई बुद्धिमानी है ! न, यह तो जानवरपन है···मूर्खता है ! तुम समय का और जिन्दगी का मोल समझो, भटको मत। बुजुर्गों का बताया रास्ता मत छोड़ो।

एक व्यक्ति ने कहा—"ठकुराइन ! यह औरतों की लड़ाई है। उन्हीं का पाप इनके सिर पड़ा है !"

रमिया ने कहा—"भैया ! औरत की जात दूर तक नहीं देख पाती। वह निकट का स्वार्थ देखती है। इन दोनों भाइयों की स्त्रियों ने नहीं समझा कि बँटवारे के लिए यदि मुकदमा चला तो घर लुट जायगा। इनका सभी-कुछ बिक जायगा। शहर में बैठे हुए उन वकीलरूपी डाकुओं की जेब में इनके गाढ़े पसीने की कमाई का पैसा जा पहुँचेगा। सोचो तो, हम किसानों की कमाई कितनी मेहनत की है ! खून का पसीना बनता है, तभी घर में दाना आता है। ऐसी मेहनत को यों खर्च करना क्या शोभता है ? फिर जो जीतेगा, वह भी हारे से बदतर बन जायगा। दोनों भूखे मरेंगे। प्रतिष्ठा जायगी। बँधी बुहारी बिखर जायगी।"

एक ने कहा—"वाह-वाह ! जय हो, ठकुराइन, तुम्हारी !"

बड़े भाई ने कहा—"मैं शर्मिन्दा हूँ।"

छोटा बोला—"मैं भी कसूरवार हूँ।"

रमिया ने कहा—"दोनों गले लग जाओ। औरतों की बातें मत सुनो। उन्हें समझाओ।" उसने बड़े भाई से कहा—"तुम बड़े हो। तुम्हारा अधिकार भी बड़ा है। छोटे भाई की आवश्यकताएँ समझो। ज़रूरत पड़े तो अपनी इच्छाएँ मारकर उन्हें पूरा करो। तुम्हें सम्मान पाना है तो कष्ट भी उठाना पड़ेगा। धीरज से काम लो।" यह कहते हुए उसने छोटे भाई की ओर देखा—"अब तुम भी अनजान नहीं हो, सुजाना ! बड़े भाई की इज़्ज़त करो। यह तुम्हारे पिता के समान है। औरत की बातों में न आओ। घर में कोई भूल हो, तो उसे सुधार लो। औरतों को समझा दो। उनके अधिकारों की भी रक्षा करो। जानते नहीं, औरत ही घर बनाती है और औरत ही घर बिगाड़ती है···हाँ, मेरे भाई !"

यों झगड़ा मिट गया। रमिया चल पड़ी। जब वह घर पहुँची तो दिन ढल चुका था। देखकर जग्गू ने कहा—"तो ठकुराइन, अब तुम्हें यही करना है ! ऐसे ही रहना है,—क्यों !"

चकित बनकर रमिया ने कहा—"क्यों, कोई नई बात ?"

जग्गू ने खिसिया कर कहा—"जी, नई बात क्या, चौधराइन ! अब तुमने

घर तो भुला दिया, बाहर का बोझ उठा लिया। कहे देता हूँ, यह घर अब चौपट हो जायगा। जब घर में खाने को नहीं रहेगा, तो यह नेतागिरी सब भूल जाओगी, बहूजी ! मैं मरता फिरूँ और तू लेक्चर बघारती फिरे, गाँव भर में! न खाने की सुध, न तन की सुध ! देख तो किसी फूटे शीशे में, अपने मुँह को—बारह बजे हैं, हवाइयाँ उड़ी हैं !"

रमिया ने कहा—"तुम्हें तो कोई काम नहीं ! खेत में दाना डाल आये, और बस, छुट्टी। पर मुझे तो मरने की भी फ़ुरसत नहीं है !"

जग्गू ने कहा—"फ़ुरसत हो कैसे ? या तो सरपंची कर ली जाय, या घर देख लिया जाय···हाँ, कहे देता हूँ रमिया, यह भार उठाना मेरे बस का नहीं कि बाहर भी दुःख उठाऊँ और घर में भी। तूने कह दिया कि बस, खेत में दाना डाल दिया ! पर मैं कहता हूँ, उस दाना डालने में ही गोडे टूट जाते हैं। चोटी-एड़ी का पसीना एक हो जाता है।"

दुलारभाव से, रमिया ने हँसकर कहा—"तो तुम्हें कहना क्या है ?"

जग्गू ने कहा—"मैं कहता हूँ तू अपने शरीर की सुध ले। देख तो, अब कितनी दुबली हो चली है। कल को कोई बात हो गई, तो जानती है कि मेरा बुढ़ापा···"

रमिया और ज़ोर से हँस पड़ी—"तो दूसरा विवाह कर लेना। किसी नई-नवेली को···"

जल्दी से, जैसे आतुर होकर, जग्गू ने कहा—"जी हाँ, अभी आई जाती है, इस घर के लिए कोई जवान छोकरी ! तू भी मुँह धो लेना।" यह कहते हुए उसने नारियल से चिलम उतारी और कहा—"ले, ज़रा रख तो इसमें तमाखू। देख तो चूल्हे में आँच भी है या नहीं।"

रमिया ने चिलम पकड़ ली और कहा—"तो यों कहो ठाकुरजी, चिलम भरवाने के लिए तड़प रहे थे। तभी इस रमिया की खुशामद कर रहे थे !" उसने हँसते हुए कहा—"पर तुम्हें लाज तो आती नहीं कि गाँव की सरपंच से चिलम भरवाई जा रही है !"

जग्गू स्वयं भी हँस दिया—"सरपंच गाँव की है, मेरी नहीं ! यहाँ तो मैं तेरा सरपंच हूँ। जानती नहीं, पाँच पंचों में ब्याह कर लाया हूँ। तेरे साथ मेरी सात भाँवरें पड़ी हैं।"

"अच्छा, अच्छा, चौधरी जी ! मान लिया कि तुम मेरे सरपंच हो,—बस !" उसने चिलम में तमाखू रखा, आग रखी और जग्गू के नारियल पर टिका दी। वह अभी हाथ-मुँह धोकर रोटी खाने को बैठी ही थी कि तभी गाँव

का गोघू चमार भागता हुआ वहाँ आया और अत्यन्त दीन स्वर में बोल पड़ा—"मालकिन ! मेरा उद्धार कर ! ज़रा चल तो मेरे साथ. ठाकुर मेरे साथ कैसा ज़ुल्म कर रहे हैं। मेरा खड़ा खेत काटना चाहते हैं। कहते हैं, यह खेत हमारा है।" उसने कहा—"खेत कट गया, तो सच मानना, मेरे बच्चे भूखों मर जायेंगे।"

रमिया ने चकित बनकर बात सुनी तो हाथ में ली हुई रोटी रख दी। वह उठ खड़ी हुई।

जग्गू ने आतुर होकर कहा—"रोटी तो खा ले···दो कौर !"

किन्तु रमिया ने जग्गू की बात नहीं सुनी क्योंकि वह देख रही थी कि अपनी बात कहने के साथ गोघू की आँखें भर आई हैं, वह रो पड़ना चाहता है जिसे देख, स्वयं रमिया की आत्मा भी तड़प गई। उसमें बरबस ही ऐसी टीस पैदा हुई कि वह नीचे से ऊपर तक करुण बन गई। उसकी आत्मा रोमांचित हो उठी। वह गोघू से बोली—'चल, भैया ! यह गाँव ऐसे ही मरेगा···लुटेगा !"

किन्तु जग्गू ने फिर कहा—"एक रोटी खा जा, रमिया !"

रमिया ने कहा—"इसके भी बाल-बच्चे हैं। खेत कट जायगा तो वे भूखे मरेंगे। मैं लौट कर खाऊँगी, रोटी !"

जग्गू बोला—"ठाकुर नहीं रुकेंगे। वे खेत काटेंगे।"

रमिया को रोष आ गया—"तो पहले मेरा सिर कटेगा, पीछे खेत।"

"तू झगड़ा करेगी। खून बहायेगी।" जग्गू ने बात पकड़ कर कहा।

रमिया ने बात का जवाब नहीं दिया। उसने गोघू से फिर कहा—"चल, भाग ! देखूँ तो क्या करते है, लोग ! समझती तो हूँ, सब जंगली हैं, अन्धे हैं। अपना ही पेट देखते हैं।" वह चल पड़ी। वह खेत पर पहुँची, तो सच, कुछ ठाकुर खेत पर पहुँच गये थे। वे गोघू की स्त्री से कह रहे थे—"तू हट जा हमारे सामने से ! खेत हमारा है। हम काटेंगे।"

रमिया ने जब इतना देखा और सुना, तो उसने एक ठाकुर को लक्ष्य करके कहा—"भैया, कमज़ोर पर हाथ उठाना क्या अच्छा है ! किसी के पेट पर लात मारना···!"

उस ठाकुर का नाम लक्ष्मण था। उसने कहा—'टकुराइन, हमने पिछले साल भी इससे, कहा कि खेत छोड़ दे, पर यह गोघू नहीं माना। खेत बो दिया। अब इसका यही इलाज है कि खेत काट लें।"

रमिया ने बड़े कठिन भाव से विपाक्त बन, मुसकरा कर कहा—"तो बड़ी बहादुरी का काम करने चले हो तुम ! मैं अब तक समझती थी कि तू समझदार है। गाँव में एक तू भला आदमी है पर आज देखा कि तू भी गन्दे पानी का

एक कीड़ा है—ज़हरीला ! काटता है ! तुझमें भी ज़हर भरा है।" उसने कहा—"बता तो, तूने इस खेत का अधिकार लिया ? कभी अदालत में गया ? इसलिए कि तू ठाकुर है, ज़ोर रखता है, बेचारे चमार का खेत काट लेना चाहता है ! मैं कहे देती हूँ, तुझे बहुत बड़ा नुकसान उठाना पड़ेगा। मैं खुद अदालत में जाकर गवाही दूंगी। गोधू का पक्ष लूंगी।" वह बोली—"भैया लक्ष्मण ! तुम ठाकुर हो। गोधू चमार है, ग़रीब है ! इसकी रक्षा करना तुम्हारा काम है। इसके पास खाने का सहारा न हो, तो वह भी तुम्हें देते शोभता है। तुम तो सूर्यवंशी हो। बोलो, अपने धर्म को छोड़ सकते हो, क्या ? अपनी जाति की उदारता भूल जाओगे ? न, लक्ष्मण, ऐसा न करना। राजा प्रताप की बात याद रखना। बुज़ुर्गों की लीक को न छोड़ बैठना। जाओ घर, अपने साथियों को भी ले जाओ। यह खेत चाहिए तो अदालत में जाना, पंचायत में लिखकर देना।"

उसी समय गाँव के कुछ और लोग भी वहाँ आ गये। रलिया भी दौड़ आया। उन्हें देख, रमिया हँस दी और बोली—"क्यों, तुम सभी लाठी तान कर आये हो, लक्ष्मण की मदद करने ?"

एक ने कहा—"हम तुम्हारे पीछे चलकर आये हैं। गाँव में बात उड़ी है कि यहाँ झगड़ा हो रहा है। और तुम···"

रमिया ने कहा—"तुम्हारी तरह लक्ष्मण भी मेरा कुछ लगता है। मेरे सभी हैं। गोधू भी मेरा है।" उसने लक्ष्मण की ओर फिर देखा और कहा—"आ, चल, लक्ष्मण ! खेत छोड़।"

लक्ष्मण ने कहा—"ठकुराइन, ऐसे तो मेरा नाश हो रहा है।"

रमिया ने कहा—"तेरा नहीं, तू गोधू का नाश करने आया है। हाँ, काल तेरा होने वाला है। मैं तुझे समझाने आई हूँ क्योंकि तू मेरा है। तुझ पर मेरा ज़ोर है। तू भी मुझ पर ज़ोर रखता है।"

रलिया ने कहा—"लक्ष्मण ! समझ से काम ले।"

लक्ष्मण ने उसकी ओर देखा और कहा—"तू भी यही कहता है, रलियाराम! देखता तो है, मेरे पास ज़मीन नहीं रही। कुछ लाला के पास चली गई, कुछ इस गोधू के पास !"

रमिया ने कहा—"लक्ष्मण! ज़मीन किसी की नहीं। यह तो डाका डालना है, लूट करना है। कोई सुनेगा, तो कहेगा कि ठाकुरों ने चमार को लूट लिया। अरे, लूट भी करना चाहता है तो कहीं और कर ! डाका डालना है तो बड़े पर डाल, कुछ माल तो हाथ लगे। ऐसे तो तू बदनामी कराता है। अपना मज़ाक उड़वाता है। देखता है न कि गोधू अकेला है, कमज़ोर है। और तू ठाकुर, तेरे साथ

एक बड़ा गिरोह है। पर कहे देती हूँ, कल जब तुझ पर मुसीबत आयेगी तो कोई भी साथ नहीं देगा। इस वक्त तो भीड़ में कोई भी आ मिलेगा। क्योंकि लूट का माल उसे भी मिल जायगा। वह भी गोधू के सिर पर एक लाठी मार कर तीसमारखाओं में अपना नाम लिखा लेगा।"

लक्ष्मण ने तभी अपने साथियों की ओर देखा और लौट चलने के लिए कहा। वह गाँव की ओर चल दिया। उस समय सूरज डूब चला था। गाँव के ढोर घरों की ओर लौट आये थे। पनघट पर भीड़ थी। दिन-भर के सन्नाटे के बाद गाँव में रौनक हो गई थी। कोई अपनी गाय का दूध दुह रहा था और कोई अपने बैलों के लिए कुट्टी काटने में लगा था। उसी समय जब रमिया घर में घुसी तो जग्गू ने उसे देखकर कहा—"अभी क्यों आई है, कुछ देर और ठहर कर आना था! जब गाँव सो जाता, तो चली आती!"

रमिया ने इतनी बात सुनी तो बरबस, मुस्कराकर, अपनी आँखों को जग्गू की आँखों पर टिका दिया। वह जग्गू अपनी पत्नी रमिया के प्रति कितना आतुर और संलग्न है, इसका भी, एक बार फिर रमिया को ध्यान हो आया।

बीसवीं बात

उन दिनों एकाएक ही, मलिकपुर गाँव में बीमारी फैली और बहुत से आदमी मर गये। उस आँधी में माला के पिता और माँ भी उड़ गये। वह अकेली रह गई। अवसर की बात कि हरदेवा का पिता भी चल बसा। उन दिनों हरदेवा ने बी०ए० पास कर लिया था। परिस्थितिवश वह नगर में अधिक रहने लगा। महीने में एक-दो बार गाँव आता और लौट जाता। देर से माला और उसका साक्षात्कार भी नहीं हुआ था। अब उनका मिलना और बोलना पत्रों पर आधारित हो गया था। इस बीच में गाँव की काया बदल गई। गाँव की चौपाल पर जहाँ पहले व्यर्थ की गप्पें मारी जाती थीं, तमाखू का धुआँ उड़ता था, अब वहाँ वयस्कों को पढ़ाने का काम आरम्भ हो गया था। रमिया भी पढ़ती। पत्नी की प्रेरणा पर जग्गू भी पढ़ने का प्रयत्न करता। रलियाराम और पार्वती भी पढ़ते। प्रान्तीय सरकार आर्थिक सहायता देती।

देखते-देखते गाँव की काया पलट रही थी। पढ़े-लिखे लोगों का समुदाय भी बढ़ रहा था। गाँव के पास ही हाई स्कूल था। वहाँ से अनेक लड़कों ने दसवीं पास कर ली थी। कुछ युवक कालिज की डिग्री ले चुके थे। उनमें से अधिकांश शहर में जाकर नौकर हो गये और शेष बेकार गाँव में घूमते-फिरते रहते। वे बेकार युवक गाँव के लिए अभिशाप सिद्ध हो रहे थे। उनका नैतिक स्तर भी गिर गया था। आये दिन गाँव में चरित्र-हीनता की वारदातें भी सुनाई पड़ती थीं। इस प्रकार गाँव के वातावरण में एक नई प्रकार की गन्दगी का समावेश हो रहा था। जैसेकि गाँव के शरीर में कोढ़ फूट आया था और उसमें से गंदी-भरी पीप निकल रही थी। वह रिस-रिस कर गाँव के जीवन की पवित्रता को नष्ट कर देना चाहती थी। रमिया और उसके सहयोगियों के समक्ष यह कठोर समस्या उपस्थित हो रही थी। उस समय रमिया प्रायः माला के विषय में भी सोचती रहती। वह यह जानने के लिए उत्सुक थी कि क्या सच, यह दोन की लड़की माला अपनी जाति में विवाह नहीं करेगी! साथ ही साथ, वह यह जानने के लिए भी उत्सुक थी कि क्या यह ठाकुर का लड़का हरदेवा एक माला

को ग्रहण कर सकेगा—निभायेगा ! सचाई यह थी कि रमिया एक क्षण के लिए भी इतना नहीं सोच पाई कि ठाकुर जाति हरदेवा को ऐसा करने देगी। वह इस बात को भी समझती कि स्वयं डोम जाति भी इस बात को पसन्द नहीं करेगी। निदान, वह मौन थी, पर चिन्तित बनी थी। उसके लिए सबसे अधिक सन्तोष की बात यह थी कि हरदेवा के साथ हुए झगड़े में सभी अभियुक्त मुक्त हो गये थे। यह कार्य भी रमिया की प्रेरणा से खत्म कर दिया गया था।

किन्तु उसी समय गाँव में एक ऐसी अघट घटना घटी कि रमिया के मस्तिष्क की गति फिर एकदम बदल गई। वह जैसे जड़ से चेतन बन गई। पार्वती अपनी इच्छा से या परिस्थितिवश रलिया के घर में ज़रूर आ गई, किन्तु उसके पूर्व पति के मन की छिपी हुई हिंसक भावना ज्यों-की-त्यों बनी थी। वह जैसे पार्वती से बदला लेने की ताक में था। और ज्योंही ऐसा अवसर उस व्यक्ति को प्राप्त हुआ,उसने अपने मन की प्रतिक्रिया का पेट भरने में देर नहीं की। मनुष्य की जन्मजात हिंसा अपने नग्न रूप में प्रगट हुई। एक रात को जब पूरा गाँव सो रहा था, रलिया घर पर नहीं था, तो चुपचाप ही, कुछ आदमी उसके घर पर चढ़ आये। उन्होंने उस घर का सामान लूटा, पार्वती को मारना चाहा। निश्चय ही, वे लोग पार्वती को जान से मारना चाहते थे परन्तु वे चूक गये। जैसे ही, उस सोती हुई के सिर में लाठी लगी, वह तुरन्त घर से भाग पड़ी। शिकार हाथ से निकल गया। इसका फल यह हुआ कि डाकुओं ने अपना दोष छिपाने और पुलिस की कार्यवाही से बचने के लिए घर में आग लगा दी। उस समय पार्वती का शोर मोहल्ले में गूँजा। गाँव जाग गया। घर में लगी हुई आग भड़की। उसके शोले उठे। वे चटके। आग का धुआँ गाँव-भर में फैल गया। चारों ओर प्रकाश हो गया। पल भर में गाँव रलिया के द्वार पर एकत्र हो गया। पार्वती का सिर फूटा हुआ था। उससे खून प्रवाहित हो रहा था। परन्तु वह चिल्ला रही थी—मेरा बच्चा···मेरा प्राण···

वह अवसर सचमुच ही भयावना था। नितान्त करुण बना था। रलिया की माँ भी बाहर निकल आई थी। वह भी सिर पीटकर शोर मचा रही थीं कि हाय, पार्वती का बच्चा ! परन्तु यह भी कैसी विवशता थी उन इन्सानों की, जो उस काल-सदृश आग को देख, उनमें से कोई भी आगे नहीं बढ़ सका। और आग बढ़ती गई। घर फुंकता गया। उस समय जीवन का मोह सभी को अचल किये था।

तभी रमिया चिल्लाई—"अरे, कोई है, जो पार्वती का बच्चा घर में से निकाल लाये···उस अबोध का प्राण बचा सके ! कोई तो ठाकुर निकले···कोई

तो बहादुर···"

लेकिन वह समय प्रतीक्षा का नहीं था। रमिया बराबर चीख रही थी। लोग पानी भर-भर कर ला रहे थे, और आग पर डाल रहे थे। लेकिन आग वहाँ तक पहुँच रही थी कि जहाँ पार्वती का बच्चा पड़ा हुआ चीख रहा था। वह आग कुछ ही देर में उसे जला देने वाली थी। किन्तु उसी समय रमिया ने अपने सिर पर पड़ा हुआ कपड़ा कमर से बाँध लिया। उसने पैर उठाया। वह चिल्ला कर बोली—"मैंने समझ लिया···मैंने तुम्हें देख लिया···"

यह कहते हुए रमिया लपकी। आगे बढ़ी। यह देख जग्गू चीखा—"अरी, रमिया···ओ···"

पर रमिया तब तक आगे बढ़ चुकी थी। वह जलते हुए मकान में प्रविष्ट हो गई।

समस्त भीड़ एक ही स्वर में चिल्लाई—"क्या रमिया···रामप्यारी···गाँव की सरपंच···हे राम! इतना बड़ा साहस! यह औरत की जात···"

और वह बाहर खड़ी भीड़ देख नहीं सकी, वह नहीं समझ पाई कि तभी हवा के समान चेतना से भरी हुई रमिया उस स्थान पर पहुँच गई कि जहाँ पार्वती का बच्चा चारपाई पर पड़ा था। सर्पिणी के समान आग उसकी ओर बढ़ रही थी जिसे देखकर वह बच्चा चीख रहा था···जैसे डर रहा था···उसका साँस उठते हुए धुएँ में घुटा जा रहा था। रमिया ने तुरन्त ही, बच्चे को उठा लिया। वह लौट पड़ी, लेकिन आग बढ़ चुकी थी। वह किलकिला रही थी। जैसे रमिया को देख, चीत्कार कर रही थी। परन्तु रमिया के समक्ष उस समय अपने प्राणों का मोह नहीं रह गया था। मृत्यु से भी कोई भय नहीं था। मानो उस मौत की प्रभुता को उसने सहज ही समझ लिया था। उसने आग का सामना किया, पैर उसी दिशा में बढ़ाया। सहज भाव से रमिया ने आग को लाँघ लिया। वह जैसे ही बाहर आई, तो बरबस पछाड़ खा गई। रमिया बेसुध हो गई और गिर गई। उसके शरीर का अधिकांश भाग जल चुका था।

लोग चीख पड़े—"री, रमिया!"

आवाज़ उठी—"अरे, सम्भालो! उठाओ!"

किसी ने कहा—"यह पार्वती का बच्चा भी घायल है, जला है।"

तुरन्त ही चारपाई पर रमिया डाली गई। उसके जले हुए शरीर को देख, सभी को उसके प्राणों की चिन्ता हुई। इतनी देर में घर की आग बुझा दी गई। किन्तु घायल रमिया गाँव के लिए और अधिक विस्मय और श्रद्धा का पात्र बन गई। उसी रात में उसे शहर के अस्पताल में पहुँचाने की व्यवस्था की गई। पुलिस में खबर दी गई।

रमिया शहर के अस्पताल में थी। उस रात के बाद रलिया भी गाँव लौट आया था। पुलिस को इस बात की चिन्ता थी कि न जाने यह किसका काम है। किसने अपनी दुश्मनी निकाली है। कौन रलिया का शत्रु है। किन्तु रलिया किसी का नाम नहीं बता सका। वह स्वयं परेशान था। उसका सभी-कुछ समाप्त हो चुका था। उधर जग्गू की स्थिति भी दयनीय थी। वह बार-बार कहता कि रमिया मुझे भी मार देगी। अब इसने जो रास्ता पकड़ा है, उससे तो नहीं लौटेगी। रमिया अपनी औकात से आगे बढ़ती है···ऊँचाई पर देखती है··· ···हाँ···

तभी लोग कहते—"जग्गू मेहतो! तुम्हारी रमिया के पुराने संस्कार जाग उठे हैं। वे ही उसका पथ-प्रदर्शन कर रहे हैं। तुम तो इस जन्म के पति हो, उसके साथ तो पिछले जन्मों के भी कारनामे हैं। और रमिया को आगे के जन्म भी बिताने हैं। वे क्या तुम्हारे साथ बीतने हैं?" उससे कहा जाता—"हाँ, मेहतो! इस ज़िन्दगी के सफ़र में सभी आगे की तैयारी करते हैं। बहुत-सा सामान बाँधते हैं। सो, देखते नहीं तुम, इस रमिया ने भी पूरी तैयारी की है। गहरी गंगा में गोता मारा है। अपना जीवन पखार लिया है···भला तुम क्या··· हम क्या···अरे, नाबदान के कीड़े बनकर ही तो हम ज़िन्दगी बिता रहे हैं! तुम यह घमण्ड छोड़ दो कि रमिया तुम्हारी बीवी है। कहो कि वह देवी है। इस गाँव की माँ है। वह रक्षा करती है। हमारी-तुम्हारी तरह भक्षक नहीं···क्रूर नहीं···मदान्ध नहीं···।"

जग्गू सुनता और सिर के ऊपर खड़े नीले आसमान की ओर देख, साँस भर-कर रह जाता। वह जैसे कुछ न समझ पाता। बरबस, उस वार्ता के अन्तराल में डूब जाता। वह केवल इतना ही समझने का प्रयत्न करता कि जाने यह रमिया कैसी है कि गाँव की सरताज बनी है, पर मेरी अब भी बीवी है···सेवा करती है। मेरी दो बातें सुनती है···यह रमिया···।

किन्तु गाँव और पुलिस के लिए यह बात सिरदर्द हो गई कि रलिया के घर में आग किस तरह लगी, किसने पार्वती को घायल किया। गाँव वालों ने पुलिस को रलिया के घर के द्वार पर पड़ा एक पैर का जूता दिया जो उस रात वहाँ किसी का छूट गया था। निश्चय ही, गाँव के अनुमान से वह जूता उन लोगों में से किसी एक का था जो वहाँ आग लगाने और लूटने आये थे।

कई दिन हो गये कि पुलिस की खोज समाप्त नहीं हुई। उसने गाँव का कोई आदमी गिरफ़्तार नहीं किया। जो जूता गाँव वालों ने पुलिस को दिखाया, वह हस्तगत कर लिया गया। रलिया के मकान का जो हिस्सा नहीं जला था,

वहाँ पर एक नई चादर भी पड़ी मिली जो रलिया ने बाद में पुलिस को दी। किन्तु उन दो वस्तुओं को पाकर भी पुलिस की समस्या हल नहीं हुई। अपितु, उसका काम बढ़ गया।

तभी एक दिन गाँव में बात फैली। बाहर से उड़ती हुई खबर आई कि पुलिस ने पार्वती का पहला पति गिरफ़्तार कर लिया। उसके साथ एक और आदमी भी पकड़ा गया। बाद में दो और। इस समाचार के साथ, गाँव में इस चर्चा ने भी ज़ोर पकड़ा कि पार्वती का पहला पति जब आया तो घर में आग लगाकर वह भागा था। उसी समय उसका जूता निकल पड़ा था। चादर उसके दूसरे साथी की थी। खुफ़िया पुलिस ने उस धुली हुई चादर को उसी गाँव के धोबी को दिखाया। उसने तुरन्त उसके मालिक का नाम बता दिया था।

यों मुकदमा बन गया और आगे बढ़ गया। निश्चय ही, गाँव के अन्य लोगों को इस बात की उत्सुकता थी कि अपराधी सज़ा पायें, उन्हें उचित दण्ड मिले। परन्तु गाँव में एक जग्गू ऐसा था जो आये दिन शहर दौड़ कर जाता और अस्पताल में पहुँच कर रमिया की चारपाई से जा लगता और आँखों में आँसू भरकर कहता—"रमिया, देख, मैं भी तेरा हूँ। तू मुझे छोड़ जायगी, तब क्या मैं ज़िन्दा रह सकूँगा ?"

किन्तु रमिया तो दिनों-दिन स्वस्थ हो रही थी। उसके शरीर के जले हुए अंग सूखते जा रहे थे। आरम्भ में डाक्टरों को चिन्ता थी कि रमिया के हृदय पर जो वरम आ गया है, उससे प्राणों की क्षति हो सकती है। पर रमिया उस तूफ़ान से निकल गई। वह तेजी से स्वास्थ्य-लाभ करने लगी।

लेकिन जग्गू तब भी विह्वल बनता। वह आये दिन अस्पताल पहुँच जाता। उसे गाँव में रहना रुचिकर नहीं था। रमिया के बिना वह घर उसे काटता था। कदाचित् यही देख, रमिया कहती—"तुम सोचते हो कि हम-तुम सदा साथ रहेंगे। न, मेहतो ! एक दिन तो यह साथ छूटेगा।"

जग्गू कहता—"रमिया, ऐसा न कह ! मुझे न सुना ! देखती है, ऐसा सुनते ही मेरा प्राण घुटता है, दम निकलता है। लगता है कि कोई बरबस ही मुझे अन्धेरे में फेंकता है।"

रमिया इतना सुनकर मुसकरा देती। वह अपना गरम हाथ जग्गू के ठण्डे हाथ पर रख देती।

किन्तु अन्य दिनों की भाँति जब एक दिन जग्गू गाँव से शहर पहुँचा, तो वह अपने साथ गाय के दूध की खीर बनाकर ले गया। रमिया के पास जाकर उसने वह खीर का बर्तन खोला और कहा—"ले, रमिया ! मैं खीर बना कर

लाया हूँ। वड़ी मुश्किल से वना सका हूँ। जानता हूँ कि तू खीर पसन्द करती है।"

रमिया ने सरल भाव से जग्गू की ओर देखा। उसने कहा—"सच, तुम वड़े भोले हो। देखते तो हो, मैं विस्तर पर पड़ी हूँ, वीमार हूँ। खीर मुझे नुकसान देगी।"

लेकिन जग्गू गिड़गिड़ाया—"जरा-सी खा ले, मेरे हाथ से। देख, शायद तेरी खीर के लिए ही गाय ने अधिक दूध दिया। वह तो रोज़ घर में देखती है और रँभाती है। शायद तुझी को पुकारती है।" यह कहते हुए उसने चम्मच में खीर ली और रमिया के मुँह में रखने की चेष्टा की। रमिया ने भी मुँह खोल दिया। उसने कई चम्मच खीर खा ली।

तभी जग्गू ने कहा—"अव गाँव में तेरी वहुत चर्चा रहती है। जाने कहाँ-कहाँ से आदमी आये और तेरा नाम लेते हुए चले गये।"

रमिया ने कहा—"यहाँ भी रोज आदमी आते रहते हैं। गाँव वाले भी आते हैं।"

जग्गू ने कहा—"रमिया! सच अव समझा हूँ मैं कि सेवा ही सवसे वड़ा काम है, पुण्य है। ज़िन्दगी को सफल करने वाला है।"

रमिया ने जग्गू की ओर देखा और मुसकरा दिया।

जग्गू वोला—"सुना नहीं तूने, पार्वती का पहला पति ही इस काम को करने आया था। कुछ साथी ले आया था।"

रमिया ने कहा—"मुझे पता है।"

"और तूने भी सुन ली होगी यह वात, डाक्टर ने वताया होगा कि पार्वती का वच्चा भी वच गया। मौत के मुँह में गया-गया निकल आया।"

हर्ष-भाव से रमिया ने कहा—"भगवान सवका भला करता है!" वह वोली—"मेहतो, मत भूल, उस वच्चे को वचाने के लिए जो मुझमें हिम्मत आई और आग में कूद पड़ी, तो भगवान ही साकार वनकर मेरे अन्दर आ गया था। भला, मुझ में क्या इतना साहस था!"

जग्गू ने कहा—"रमिया, उन अपराधियों को वड़ी सज़ा मिलेगी। उन्हें कठोर दण्ड होगा।"

सुनकर रमिया मौन रह गई। वह कमरे के वाहर दूर आकाश की ओर देखने लगी।

जग्गू वोला—"रमिया! सोचता हूँ, मैं भी घर का मोह छोड़ दूँ। तेरी तरह ही सेवा के काम में लग जाऊँ।"

रमिया फिर भी नहीं बोली। चुप पड़ी रही।

जग्गू ने कहा—"आज सब जगह तेरी चर्चा है। लोग देवी की तरह तेरा नाम लेते हैं।"

उसी समय रमिया ने जग्गू की ओर देखकर कहा—"यह बताओ, रोटी भी समय पर खाते हो? मुझे तुम्हारी ही चिन्ता है। यहाँ भी तुम्हारा ध्यान रहता है।"

जग्गू ने उदास स्वर में कहा—"रमिया, मेरा क्या है! जहाँ पड़ा सो गया, जहाँ मिला खा लिया। देखता हूँ, तूने मुझे भुला दिया है। तूने दूसरा रास्ता पकड़ लिया। कहाँ से चली थी और कहाँ पहुँच गई। लोगों की तरह अब मैं भी तुझे जगदम्बा मानने लगा, तुझसे डरने लगा।"

रमिया ने अपने स्वर में झटका-सा दिया और कहा—"नहीं, नहीं, मैं तुम्हारी हूँ। यहाँ भी तुम्हें याद करती हूँ। तुम मेरे पति हो।" और उसने तभी आँखों से निकलते पानी को पोंछकर जग्गू की ओर देखा। उसने भर्राए स्वर में कहा—"आदमी बिगड़ गया···हमारा गाँव भी पतित हो गया! तब मेरा-तुम्हारा ही कैसा प्रश्न रहा! जीवन आज है, तो कल नहीं रहेगा··· बस! यह नाता भी टूट जायगा।"

उस समय जग्गू का सिर झुका था, जैसे वह भी जीवन की असारता पर टिक गया था।

इक्कीसवीं बात

निःसन्देह औरत के रूप में, रमिया का जिस प्रकार लोगों ने परिचय पाया, वह सचमुच ही अकल्पनीय था। मानो लोगों की दृष्टि में रमिया का जलते हुए मकान में प्रविष्ट हो जाना भी एक दुस्साहस था। एक दिन अस्पताल में पड़े हुए ही, रमिया ने जग्गू और गाँव के अन्य व्यक्तियों को बताया कि वह बचपन में पेड़ों पर चढ़ती, झगड़ा होता तो लड़कों से लाठी लेकर लड़ पड़ती थी। रमिया ने यह बात भी नहीं छिपाई कि एक बार उसके पिता का जब खेत पर झगड़ा हो गया था, तब वह भी लाठी लेकर लड़ी थी। उसकी लाठी के प्रहार से एक आदमी का सिर फट गया था।

इस प्रकार, मलिकपुर गाँव के व्यक्तियों ने समझा कि उनके गाँव में एक और राजपूतनी आ गई है। रमिया या तो लक्ष्मीबाई है या पद्मिनी। जो हो, उस गाँव के वासियों ने बरबस ही, उस रमिया के समक्ष अपना सिर झुका दिया था। उन्होंने इस बात को स्वीकार कर लिया था कि रमिया अनोखी है, रमिया अपूर्व है!

किन्तु गाँव में कुछ ऐसे भी व्यक्ति थे जो रमिया की प्रतिष्ठा को देखकर कुढ़ते थे। मन-ही-मन जलते थे। वे निश्चय ही, रमिया के उत्कर्ष से चिन्तित थे। एक तो वह वैसे ही गाँव का समाज था, दूसरे वहाँ ठाकुरों का प्राधान्य; इसलिए स्वभाववश ठाकुरों में अधिकांश को यह स्वीकार नहीं था कि वे रमिया-सरीखी औरत का प्राधान्य स्वीकार करें, उसकी पूजा करें।

और समाज तथा व्यक्ति—जीवन की राजनीति क्या है, इसे रमिया बिलकुल न जानती थी। जग्गू निरन्तर ही उससे पग पीछे रख लेने की बात करता था। गाँव में जो कुछ हो रहा था, वह उससे पूर्ण परिचित था। वह सोचता था कि किसी दिन रमिया को भी लोग मार देंगे। उसका घर बरबाद कर देंगे। गाँव के अन्य व्यक्तियों के साथ, जग्गू को भी रलियाराम और पार्वती का सम्बन्ध स्थापित कर दिया जाना पसन्द नहीं था। उसके घर का जिस प्रकार नाश हुआ, जग्गू की दृष्टि में उसका भी यही एक कारण था। सम्भवतः उसमें

गाँव के व्यक्तियों का भी हाथ था। जैसे आदर्श के नाम पर रलियाराम आग की भट्टी में झोंक दिया गया था, मुसीबतों में फँस गया था।

उन्हीं दिनों गाँव में सरपंची का चुनाव आ गया। रमिया अस्पताल में थी। उसकी इच्छा चुनाव में खड़े होने की नहीं थी। किन्तु उसी समय गाँव के व्यक्तियों ने रमिया को अस्पताल में ही जा घेरा। उन्होंने साफ़ कह दिया कि इस चुनाव में तुम्हारा नाम जरूर रखा जायगा। विरोधी जमींदार था। यद्यपि रमिया गाँव से दूर थी, परन्तु चुनाव की गति-विधि उसके कानों में पड़ती रहती थी। चुनाव जीतने के लिए जमींदार पूरा प्रयत्न कर रहा था। उसका रुपया भी खर्च हो रहा था। गाँव के अधिकांश ठाकुर उसे सहयोग दे रहे थे। ये लोग इस बात को भी अनुभव करते थे कि सरपंच पुरुष होना चाहिए तथा एक भारी-भरकम व्यक्ति उस स्थान पर बैठना चाहिए। निदान, ठाकुरों ने अपने प्रभाव का पूर्ण उपयोग किया। छोटी जातियों को रुपया और लालच दिया गया। किन्तु जब चुनाव हुआ तो रमिया के पक्ष में ही अधिकांश वोट आये। यह देख, जमींदार खिसिया गया, मानो उसकी कमर टूट गई। उस चुनाव से उसे इतनी वेदना मिली कि वह बिस्तर पर पड़ गया। उसकी मानसिक शक्ति नष्ट हो गई। विवेक जाता रहा। उस सन्तप्त अवस्था में ही, वह देर तक घर से बाहर नहीं निकल सका। मानो उस काली और घिनौनी लज्जा की छाया ने उसके दिल को ढँक दिया। वह प्रतिशोध की आग में जल उठा।

उसी समय रमिया अस्पताल से गाँव में लौट आई। उसके शरीर की अवस्था तो अभी अशक्त थी, परन्तु मन की दशा ठीक थी। गांव में छोटे-बड़े सभी ने उसे देखा। उसका अभिवादन किया।

उसी अवसर पर रमिया ने कहा—"देखती हूँ, मुझे सभी का आशीष प्राप्त था। मैंने समझ लिया है कि गाँव की सेवा करना ही सबसे बड़ा काम है। यही धर्म है। सचमुच, मैंने अमृत का प्याला पिया है।"

इसके पूर्व जब कि रमिया अस्पताल में थी तो एक दिन उसने रलिया को अपने पास बुलाया। जब वह आया, तो वह बोली—"रलियाराम, तू मुकदमा उठा ले। पार्वती का पहला लड़का उसके बाप को दे दे।"

रलिया ने इतनी बात सुनी तो अचरज के साथ रमिया की ओर देखने लगा। वह एकाएक उसका अभिप्राय समझ नहीं सका।

रमिया ने कहा—"रलियाराम, देखता है कि मैं अधिक समझदार नहीं हूँ, पढ़ी-लिखी भी नहीं। मैं यह भी नहीं जानती कि किस तरह घर की चहार-दीवारी से निकल कर, गाँव के सेवा-क्षेत्र में उतर पड़ी। देखता है कि तेरा भाई मेरा मान

पसन्द नहीं करता। वह मेरी सेवा-भावना से खुश नहीं होता। सचमुच, मुझे आज स्वयं अपने ऊपर आश्चर्य है कि मैं भगवान के किस आदेश पर तेरे जलते हुए घर में घुस गई। मुझमें इतनी शक्ति है, ऐसा मैं कभी भी नहीं समझ सकी। और तो और, उस जलते मकान में से पार्वती के लड़के को भी उठा लाई। लगता है कि वह शक्ति शायद उस समय के लिए ही मुझे भगवान ने दी थी। उसकी कोई खास प्रेरणा ही मुझ में आ गई थी।"

रलिया ने कहा—"भाभी, तेरा वह काम बहुत बड़ा था···गाँव भर के मुंह पर तमाचा मार सका था। उसने नौजवानों के मुंह काले कर दिये थे। वह क्या हर कोई कर सकता था!"

"अरे, नहीं, रलियाराम! काम तो वह मेरा ही था। मैं गाँव की माँ हूँ न, इसलिए मुझे ही मार्ग-दर्शन कराना था। पर कहती हूँ कि मैं औरत जात, जन्म-भर की मूर्ख, किस शक्ति के साथ और कैसे इतनी बड़ी बात सोच सकी थी!"

रलिया ने कहा—"भाभी! तूने सदा बड़ी बात सोची है।"

रमिया बोली—"रलियाराम! मैं अपने गाँव का भला चाहती हूँ, तेरा भी भला चाहती हूँ। देख, मैंने छोटी और बड़ी कौमों का झगड़ा खत्म कराया। जसपत के लिए लालों को भी समझाया। मैं समझती हूँ कि मुकदमेबाज़ी रोग का असली इलाज नहीं है। उससे तो बरबादी होती है। देखता है न, जसपत का पाप किस-किस को भोगना पड़ गया! बेचारी पार्वती को भी वह सहन करना पड़ा, उसका पहला पति भी उस पाप का भागीदार बन गया। वह उसी पाप के कारण पागल हो गया। उसने तेरा घर जलाया, अपना भी नाश कर लिया। देख तो, कितना बड़ा रोग है यह! आदमी जंगली बनता है···जानवर··· मैं कहती हूँ कि तू मुकदमा वापिस कर लेगा, तो न्याय करेगा। उसे क्षमा करेगा तो तू भला काम कर सकेगा, आग पर पानी डाल देगा। उस आग को भड़-कायेगा, कुरेदेगा, तो तू भी जलेगा। दूसरे को जलाने के साथ, क्या तू बचा रहेगा······!"

रलिया ने सिर झुकाकर कहा—"भाभी, तेरा कहना क्या टाला जा सकेगा!"

रमिया बोली—"लोगों ने मुझे सरपंच तो बना दिया, पर ज़मींदार अच्छा नहीं मानता। उसने फिर गाँव में गन्दगी पैदा कर दी है। उसके मन में पाप है!"

रलिया ने कहा—"वह ईर्षालु है, दम्भी है!"

रमिया ने कहा—"इस गाँव में ऐसे लोगों की बहुतायत है। मैं सरपंची

से इस्तीफ़ा दे दूँगी। देखती हूँ इस प्रकार तो जमींदार मर जायेगा, वह जिन्दा नहीं रहेगा। सुनती हूँ, सदा से यह आदमी इसी तरह की बात करता आया है ! आदमी दूसरे को मारता है, स्वयं मरता है...कलुषित और हीन बनकर ही यह जीवन बिताता है...पाप देखता है, पाप करता है...बेचारा आदमी..."

रलिया ने बात सुन ली, पर वह अपना मत नहीं दे सका। जैसे वह रमिया की बात ही नहीं समझ सका। शायद वह भी उस बात के अंतराल में डूब गया।

रमिया ने फिर कहा—"रलियाराम ! आदमी स्वार्थी है। पाप ही सोचता है। देखती हूँ कि थोथी प्रतिष्ठा और स्वार्थ की पूर्ति के लिए आदमी पागल बन जाता है। सर्वत्र इस प्रकार का झगड़ा इस दुनिया में होता है। हमारे पुरखों का खून भी इसी हेतु बहाया गया। आज भी आदमी इसीलिए मारा जा रहा है, मौत को सम्मुख देखकर भी पीछे नहीं हटता। अधिकार का प्रश्न सभी को सताता है। ठाकुरों ने अपनी मूँछें ऊँची रखने के लिए सदा युद्ध किया। पर बता तो, पाया क्या ? भाई को मिटाने के लिए दूसरों के सामने सिर झुका दिया !"

रलिया ने कहा—"भाभी ! इतनी बात तो मैं भी नहीं समझ पाता। देखता हूँ कि तूने मेरी जिन्दगी को बदल दिया। मैं हैवान ही तो था, परन्तु तूने आदमी बना दिया।"

तभी रमिया मुस्कराई—"अरे, रलियाराम ! यह बात नहीं। हम तुम सभी एक ही नाव पर सवार हैं। भगवान बनाता है, भगवान बिगाड़ता है। बोल तो, मैं क्या समझ सकती थी कि गाँव की निगाह में ऐसी बनूँगी ! गंगा की धारा बह कर आई और वह हम दोनों को पखार गई।...हाँ, तुझे ऐसा ही बनना था। समय की बात है, नहीं तो तू भी पूरा हैवान बना था...इन्सानियत को क्या समझता था ! चलो, तेरी बुद्धि सुधर गई, भला बन गया। गृहस्थी हो गई, अब मेहनत करके कमायेगा और बाल-बच्चों में मिल-बैठकर खायेगा।"

रलिया बोला—"सचमुच, अब तो सभी कुछ बदल गया।" उसने कहा—"पिछली बात को याद करके मुझे आज भी ताज्जुब होता है कि पार्वती को गाँव से ले जाकर भी उसे गुमराह करने की बात नहीं सोच सका। सचमुच, जैसे भगवान ही मेरी बुद्धि का संचालन कर रहा था।"

गम्भीर बनकर रमिया ने कहा—"तेरे लिए वही सोचनीय था, रलिया-राम ! वह तेरा बड़ा काम था। तब तो मुझे भी तुझ पर भरोसा नहीं था।"

रलिया बोला—"भाभी ! मुझे पता था। उन दिनों मैं भी तेरी नजरों में अच्छा नहीं था। सचमुच, मैं ऐसा ही था।"

उदास भाव से रमिया बोली—"राजपूत को यही करना था। यही तेरा

कर्तव्य था। तू बहादुर निकला।"

उत्साहित बनकर रलिया ने कहा—"हाँ, भाभी, मैं कोई भूल कर बैठता, तो वह सबसे बुरा होता। वह मेरा पाप था।" वह खड़ा हो गया और कहने लगा—"भाभी! अब भी तू जो कुछ कहेगी, वही होगा। यह रलिया तेरी बात से बाहर नहीं जायगा।" इतना कहकर वह चला गया।

उसी दिन हरदेवा रमिया के पास आया। उसे देख, एकाएक रमिया ने कहा—"अरे हरदेवा! सुनती हूँ, माला अब काफ़ी पढ़ गई है। वह अकेली रह गई है। बोल तो, गाँव कब से नहीं गया? सुनती हूँ कि तू शहर में समाज-सुधारक बना है। कह तो, तूने अपना कार्य-क्षेत्र गाँव क्यों नहीं चुना? यहाँ तो बहुत हैं ऐसे लोग, ज़रूरत गाँव को थी। जब गाँव ने तुझे पैदा किया तो उसका उपकार मानना था। उसका अधिकार सुरक्षित रखना तेरा कर्त्तव्य था।"

हरदेवा बोला—"चाची! हमारे देश के गाँवों की अवस्था अच्छी नहीं है। वहाँ ईर्षा और द्वेष अधिक है। मैं तो अपनी ज़मीन भी बेच दूँगा। माँ को भी शहर में अपने पास ले जाऊँगा।"

जैसे चौंक कर रमिया ने कहा—"क्यों, ऐसा क्यों रे?"

उदास भाव से हरदेवा बोला—"चाची, मेरी विवशता है। वहाँ नगर में रहकर मुझे आगे बढ़ने का रास्ता दीखता है।"

हरदेवा की बात सुनकर रमिया कुछ क्षण चुप रह गई। यहाँ अस्पताल में पड़े-पड़े ही रमिया को मालूम हो गया था कि हरदेवा नगर की एक विशिष्ट संस्था का सेक्रेटरी बन गया है। कलम और वाणी—इन दो पतवारों से वह अपने जीवन की नाव खेने में समर्थ बन गया है। तब उस प्रकरण को छोड़, रमिया ने कहा—"हरदेवा! तू समझदार है, भैया! जो करेगा, ठीक करेगा। पर बता तो, उस माला का—हाँ, अब उसका क्या होगा? वह अब स्वतन्त्र है। सुनती हूँ कि अब वह मामा का भी कहा नहीं मानती। उसने किसी ईसाई मिशन में नौकरी कर ली है। वहाँ उसे अच्छा पैसा मिलता है।"

हरदेवा बोला—"मैंने भी सुना था।"

रमिया ने कहा—"हरदेवा! गाँव की एक अच्छी लड़की दूसरी दिशा में चली जायगी। मैंने तो सुना था कि तू और माला एक बनने के लिए वचनबद्ध हुए थे। बता तो, उस बात का क्या हुआ? मैं तो सुनती हूँ कि विवाह की बात पर माला अब भी रज़ामन्द नहीं। पर तू बता न, क्या तूने माला को कोई ऐसा वचन दिया था? क्या सच, तुम दोनों ने विवाह का कोई प्रस्ताव किया था? ऐसा हो, तो मुझे अच्छा लगेगा।"

हरदेवा ने कहा—"चाची ! मुझे तो अचरज है। ऐसी कोई बात नहीं।"

रमिया ने कहा—"पर मैं तो बराबर सुन रही हूँ कि तू और माला···हाँ, हरदेवा, जो बात हो, वह साफ़ कह। गाँव के आदमी भी परेशान हैं। माला किसी की बात का जवाब नहीं देती। सुनती हूँ कि ईसाई उसे और बढ़ावा देंगे। हमारी छुरी से हमारा ही गला काटना चाहेंगे।"

हरदेवा ने कहा—"चाची ! मैं अभी कुछ भी निश्चय नहीं कर पाया। माला से मैंने कुछ नहीं कहा। उससे ऐसा प्रस्ताव भी नहीं हुआ।"

इतनी बात सुनी तो रमिया का मस्तिष्क सहज ही विकृत बन गया। उसने कहा—"हरदेवा, जो बात संगत हो, वही करो। जमाने को पहचानो। मुझे भरोसा नहीं कि ठाकुरों में तुम्हें ऐसी लड़की मिलेगी। और यही सत्य हो, तो तुम स्वयं इस बात का प्रतिवाद करो। तुम भी नारी की प्रतिष्ठा पहचानो।"

एकाएक हरदेवा ने कहा—"चाची···"

रमिया बोली—"हरदेवा! तू मुझसे भी छिपाता है। झूठ बोलता है। पाप की बात करता है।" उसने कहा—"मेरे पास कल ही गाँव से कुछ लोग आये थे। वे सभी बातें बता गए थे। तुम्हारा और माला का पत्र-व्यवहार भी होता है। कहे देती हूँ, इस तरह तो माला का अस्तित्व मिट जायगा। जिस प्रकार देर से यह पुरुष नारी को ठगता आया है, उसी प्रकार तू भी उसी मार्ग को ग्रहण कर रहा है। अब तू जा। मेरी बात पर विचार करना। कल परसों तक जवाब दे देना।"

हरदेवा ने कहा—"यदि मैं माला के साथ विवाह करूँ तो···?"

यह सुना तो रमिया ने घूर कर उसकी ओर देखा। जैसे उसे नये सिरे से पहचानना और समझना चाहा। उस अवस्था में ही उसने कहा—'हरदेवा ! यह भी तेरे ही सोचने की बात है। आदमी अपने पैरों से जिन्दगी का रास्ता पार करता है। तुझे भी ऐसे ही चलना पड़ेगा। कल कोई तुझसे कहे, तो स्वयं ही, उसका जवाब देना होगा। बोल, तेरी जाति···ये ठाकुर लोग···हाँ, हरदेवा, लोग तुझे मार भी सकते हैं। तेरा अस्तित्व ही मिटा सकते हैं। बता, क्या तू उस परिस्थिति का सामना कर सकेगा ? तू अपनी जाति के समक्ष टिक सकेगा ? इतना बल पायेगा ?"

हरदेवा ने कहा—"चाची, मैं उस बल को प्राप्त करना चाहता हूँ। सचमुच, मैं माला से कह चुका हूँ। मैं उस समय की प्रतीक्षा में हूँ।"

इतना सुना, तो रमिया का मुँह चमक गया। उसे लगा जैसे उसके समक्ष एक सीधा-सादा सरल प्रकृति का हरदेवा क्या बैठा है मानो निरन्तर गम्भीर

ओर भाव-भरा कोई युवक उसकी ओर देख रहा है, जो तेज-पुञ्ज है, जिसका निर्णय कठोर है, भारी है। उस अवस्था में ही, रमिया ने कहा—"देख, हरदेवा ! जहाँ तक मेरा सवाल है, मैं तेरे साथ हूँ। तुझे वचन देती हूँ कि मैं तेरी इस भावना का सदा आदर करूंगी, सराहना करूंगी। पर तेरी जाति—ठाकुर लोग—वे पूरे कसाई हैं, हरदेवा ! पाप से भरे हैं, अन्धकार में पड़े हैं !"

हरदेवा ने गम्भीर बनकर कहा—"मैं उनका भी सामना करूंगा, चाची ! बस, तुम्हारा आशीष चाहूँगा। वैसे, मैं अभी विवाह के लिए जल्दी नहीं करूंगा।"

रमिया ने कहा—"एक यह भी समस्या है कि डोम लोग भी पसन्द नहीं करेंगे। माला तुझसे विवाह करे, वह यह भी स्वीकार नहीं कर सकते।"

हरदेवा बोला—"मुझे पता है। चाची, मुझे उस जाति का हृदय जीतना है। यही मैंने माला से कहा।"

रमिया बोली—"माला ने गाँव में पाठशाला खुलवा दी है। यह भी सुनती हूँ कि वह गाँव में कम आती है।"

हरदेवा बोला—"माला का कार्य-क्षेत्र विस्तृत हो गया है। वह शायद योरोप जाना चाहती है।"

रमिया बोली—"वह भी अब गाँव की नहीं रहेगी। पंछी होश सम्हालते ही माँ-बाप को छोड़, दूसरी डाल पर जा बैठते हैं, यही अवस्था माला की है।"

हरदेवा सरल भाव से मुस्कराया और वहाँ से चल दिया।

अस्पताल से लौट कर रमिया को लगा कि जैसे गाँव में से कुछ घट गया है, कुछ बढ़ गया है। वह कई मास अस्पताल में रही, इसलिए उसे सभी-कुछ नया-नया लगा। परन्तु अन्तर कुछ नहीं था। उसने देखा कि लोग अधिकार की बात करने लगे हैं। दुनिया में कहाँ, क्या-कुछ हो रहा है, उसे समझना चाहते हैं। पास के कस्बे से अखबार आता है तो उसकी खबरों को लोग फ़ुरसत के समय बड़ी तल्लीनता से सुनते हैं। चौपाल में लगा रेडियो जो खबरें देता है, वे खबरें भी, उन किसानों के मन और मस्तिष्क में एक नई चेतना, नया स्फुरण पैदा करने में समर्थ होती हैं। रमिया नित्यप्रति चौपाल में जाकर बैठती और लोगों से विविध प्रकार की बातें करती। यों गाँव में शांति है, स्वस्थता है। गल्ला किसानों के घर में आने लगा है, कुछ का खेतों में पका खड़ा है। वर्ष भर की मेहनत का फल वह किसान-समुदाय उत्सुक भाव से पाने की प्रतीक्षा में है। आह ! कैसा अजीब जीवन है, उस किसान का ! जैसे नितान्त निर्मम··· नितान्त अज्ञात ! देश-भर को अन्न देने वाला किसान भूखा और मोहताज बना है।

उन दिनों रमिया के मन में बार-बार यह भी आता था कि वह जिस रास्ते

पर चल पड़ी है, वह उसके लिए उचित नहीं। घर पर रमिया की लड़की आई हुई थी, वह भी कहती, माँ, तेरा यह काम नहीं। किन्तु यह भी रमिया की एक बड़ी विवशता थी, क्योंकि वह जिस रास्ते पर आगे बढ़ चुकी थी, उससे पीछे नहीं लौट सकती थी। अतएव, अब उसका चिन्तन यह नहीं रहा कि घर में अनाज है या नहीं, उसे और उसके पति को रोटी समय पर मिलेगी या नहीं। लोक-कल्याण और लोक-धर्म ही जैसे उसके जीवन की बपौती बन गये। लोगों ने उसकी सराहना की, तो उसकी बुद्धि और दृष्टि दोनों तेजमय बन गये। गांव में जो व्यक्ति उससे वैर-भाव रखते, उसके अभ्युदय के प्रति ईर्षा रखते, रमिया उन्हें भी अपना सखा मानती। कदाचित् यही कारण था कि रमिया अस्पताल से लौट कर पूर्ण-रूप से बाहर की वस्तु बन गई। विनम्रता और सदाशयता रमिया के स्वभाव के प्रधान अंग हो गये। अब वह पति पर भी अधिक क्रोध नहीं करती। अपितु, समय मिलता तो पहले से अधिक वह जग्गू की सेवा करती। एक बार की बात कि जब जग्गू थका हुआ घर में आया और चारपाई पर पड़ रहा, तो उसकी कराह को सुन, रमिया तुरन्त पास पहुँच गई। उसने पति के माथे पर हाथ रख कर देखा तो वह गरम तवे की तरह तप रहा था। देखते ही, कातर बनकर रमिया बोली—"मेहतो, तुम्हें बुखार है!"

जग्गू ने कहा—"हाँ, रमिया! शरीर टूट रहा है। पसली-पसली दुख रही है।"

तब रमिया बैठ गई और जग्गू का शरीर दबाने लगी। जब वह उसकी टाँग दबा रही थी, तो तभी कठिन स्वर में जग्गू ने कहा—"न, रमिया! अब मुझे तेरे से पैर दबवाना नहीं शोभता।"

झटके के साथ रमिया बोली—"मुझे यही शोभा देता है। इस गर्व में हर औरत को आनन्द आता है। ऐसे ही तो वह समझती है कि सधवा है—अकेली नहीं है। मेहतो, तुझसे ही मेरा जीवन सुखी और प्रसन्न बना है।"

परन्तु अगले दिन फिर रमिया को लगा जैसेकि सच, गाँव उसे मार देना चाहता है...रमिया का पतन चाहता है! गाँव के आदमी निर्मम हैं, कठोर हैं! क्योंकि रमिया का पका हुआ खेत किसी ने जला दिया...वह राख का ढेर कर दिया...

और इतना सुनते ही, रमिया का सिर चकरा गया, उसकी आँखों में घनी-भूत अँधेरा भी छा गया...

———

बाईसवीं बात

माला अब वह लड़की नहीं रही जिसे गाँव के समाज ने साधारण कोटि की लड़की समझ रखा था। वह अब विशिष्ट नारी-वर्ग की एक सदस्या थी। गाँव और बाहर उसके अनेक प्रशंसक तथा उसे अपने समाज की एक अलभ्य देन मानने वाले मौजूद थे। जब माला गाँव में आती तो वह बहुत से घरों में जाती। वहाँ ऐसी बातें कर आती कि जिन्हें उन घरों की स्त्रियों ने कभी सुना भी नहीं था। किन्तु जो स्त्री-पुरुष माला से निकट का परिचय रखते थे, वे उसकी जाति-बिरादरी के थे। वे माला को आत्मीयता के साथ तो देखते ही थे, उसे कौतुक की वस्तु भी मानते थे। उन्हीं में एक जुम्मा नाम का व्यक्ति था। माला उसे बाबा कहती थी। एक दिन जब माला नगर से लौटी, तो खबर पाकर, लाठी का सहारा लिए, जुम्मा वहाँ आया। उसने माला को पुकारा। माला उस समय चारपाई पर पड़ी थी। आवाज़ सुनी, तो दरवाज़े पर पहुँच कर बोली—"तुम हो, बाबा! आओ!"

जुम्मा अन्दर आ गया। चारपाई पर बैठ गया। वह बहुत दिनों में उस घर में आया था। शायद कल्लू के जाने के बाद, वह दिन पहिला था। अपनी बूढ़ी आँखों से चारों ओर देखकर, वह माला पर निगाह डालता हुआ मुस्कराया, तनिक हँस दिया।

यही देखकर माला ने कहा—"क्यों, बाबा! कैसे हँसे?"

जुम्मा ने कहा—"बेटी! देखता हूँ, सभी-कुछ बदल गया।" वह साँस भर कर बोला—"ऐसा ही एक घर मैंने ईसाई-पादरी का देखा था। वह भी बड़ा साफ़ था। चारपाई पर साफ़ चादर बिछी थी। उसके यहाँ भी मेज़ और कुर्सी लगी थीं। बता तो, तूने यह सामान कैसे जुटाया! क्या खरीदा था!"

माला ने कहा—"हाँ, बाबा, खरीदा ही था।"

जुम्मा बोला—"कुछ बातों में मुझे उस पादरी के यहाँ भी गन्दगी दिखाई दी। मुर्गी और उसके बच्चे फिर रहे थे। पर यहाँ तो वह भी नहीं। देखता हूँ, तूने सफ़ाई की ओर खास ध्यान दिया है। अब यहाँ कल्लू के सामने का

कुछ भी नहीं रहा। कोई कह सकता है कि यह किसी गाँव में बसने वाले का घर है ? जैसे किसी अमीर का···राव राजा का···"

माला ने तुरन्त कहा—"न, बाबा ! तुम्हें भ्रम है। सफ़ाई रखना सभी के लिए उचित है। बड़ी जाति में ब्राह्मण और ठाकुर का घर सबसे अधिक गन्दा मिलेगा। वहाँ तो किसी को भी रहने का शऊर नहीं। खाने की भी लोगों को तमीज़ नहीं।"

उसी समय जुम्मा ने फिर माला को लक्ष्य किया और कहा—"पर बेटी, तू तो उन्हीं की ओर झुकी है। बड़ी कौम के आदमियों को ही अपना सब-कुछ मानती है। बता, क्या यह ठीक है ?"

माला ने बात सुनी, तो एकाएक अपनी ओर से कुछ नहीं कहा। उसने कोई मत नहीं दिया।

किन्तु जुम्मा ने फिर कहा—"माला, तेरे नाम पर गांव में किस-किस तरह की बातें चलती हैं, तुझे उनका पता नहीं चलता। पर इतना तो तुझे मालूम ही होगा कि बड़ी जाति वालों ने कभी भी हमारे साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया ! परन्तु तू उन बातों को नहीं समझती, मुझे इसका ताज्जुब है ! तू अब समझदार हो गई है, बेटी। सभी-कुछ अपने दिमाग़ से सोचने-समझने लगी है। पर क्या तू ठाकुरों के देखे-सुने कारनामों से मुँह मोड़ सकती है ? छोटी जातियों की इन बड़ी कौम वालों ने जो दुर्गति की, वह आज क्या किसी से छिपी है !"

माला ने अपना मुँह हाथ की हथेली पर रख लिया और साथ ही उसने अपनी दोनों आँखों को नीचे जमीन की ओर झुका दिया।

तभी जुम्मा ने फिर कहा—"माला बेटी ! इन ठाकुरों ने और इन बड़ी कौमों ने क्या हमें आदमी समझ रखा है ! सदा जूते का तला समझा है ! जानवर से बदतर बना दिया है !"

बरबस माला के मुँह से निकल पड़ा—"यह सब हमने खुद किया, दादा! अपने को इसी योग्य बनाये रखा। सुना नहीं तुमने, इस दुनिया में झुकते को झुकाया जाता है। मरते को मार दिया जाता है !"

इतना सुनते ही जुम्मा की आँखें फैल गईं। वह चकित बनकर माला की ओर देखने लगा।

माला ने कहा—"बाबा! छोटी जातियों ने कभी भी अपने को नहीं सुधारा। घर से बाहर झांक कर नहीं देखा।"

जुम्मा तुरन्त बोल पड़ा—"हां, बेटी ! यह तूने ठीक कहा। हमारी बिरादरी का कोई आदमी भला नहीं बना।"

माला झुंझला गई—"मैं पूछती हूँ, तुम भी तो अस्सी बरस की उम्र पा गये हो, क्या तुमने कभी अपनी भलाई-बुराई की ओर देखा ? देखती हूँ तुम अब भी शराब पीकर आये हो ! क्या तुम्हारे पास इतना पैसा है ? मेरा बापू भी यही करता था। खूब पीता था। मेरी माँ को भी वह परेशान करता था। कमाता कुछ था नहीं, आदमी बनकर केवल रौब झाड़ता था !"

उस समय निश्चय ही माला को रोष आ गया। उसका मुँह लाल बन गया। लगा कि उसे जो-कुछ कहना था, वह नहीं कह पाई। क्रोध के कारण उसने बीच में ही अपना बोलना बन्द कर दिया।

परन्तु उसी क्षण जुम्मा ने उसकी बात पकड़ ली और बोला—"यह तू ठीक कहती है, बेटी ! मैं बूढ़ा हूँ—अब मरने वाला हूँ। कमज़ोर भी हूँ। समझती तो है तू, जब बीमारी तेज़ हो जाती है तो दवाई तेज़ दी जाती है या इन्जेक्शन दिया जाता है।"

माला ने कहा—"तुम नहीं मरोगे, दूसरों को मार दोगे ! तुम क्या कभी अपने घर की हालत का ख्याल करोगे ! बस, ज़िन्दगी-भर दूसरों के सामने गिड़गिड़ाते रहे। बाबा, अब भी सोचो ! समझो !"

जुम्मा ने जल्दी से कहा—"हाँ, हाँ, मैं वही तो कह रहा हूँ बेटी ! तेरी समझ दूसरों के भी काम आये। तू जहाँ इतना समझ गई है, तो यह भी समझ कि हम और हैं और ये ठाकुर लोग और···"

माला और अधिक अप्रतिभ बन गई—"तुम मुझे ऐसा उपदेश क्यों देते हो। तुम जो कहना चाहते हो, वह कहो। समझती तो हूँ कि तुम···"

उसी समय माला के द्वार पर कई आदमी और आये। वे सब अन्दर चले आये। उनमें से एक को लक्ष्य कर माला ने कहा—"यह छबीला भी एक दिन कहता था कि मैं···" उसने बात रोक दी और बोली—"मैं आज तक नहीं समझी कि तुम जाति-भाई बनकर मुझसे क्या चाहते हो ?"

छबीला नाम के उस युवक ने कहा—"हम चाहते हैं कि तुम अपनी कौम को न छोड़।"

माला गहरी वेदना के साथ मुसकाई और बोली—"तो तुम्हारा मतलब है कि मैं···"

जुम्मा ने कहा—"हाँ, माला ! हम चाहते हैं कि तू हरदेवा की बात छोड़ दे। तू अपनी कौम में से ही अपने लिए लड़का चुन ले।"

माला ने जुम्मा की ओर देखा, जैसे उसे घूरा। ऐसा लगा कि माला को उस बूढ़े का कहना पसन्द नहीं आया। फिर भी उसने कहा—"बाबा, मुझे

लाज लगती है, तुम्हारी बात सुनकर। पर तुमने कहा है, तो मैं भी कहे देती हूं कि अभी मेरा कोई ऐसा इरादा नहीं।" वह बोली—"मुझे यह भी सुनकर शर्म आती है कि तुम्हारे मन में यह बात आई कैसे ! और तुमने इस विवाह की बात को ही कैसे इतनी बड़ी समझ लिया। जैसे जिन्दगी में और कोई बात इससे बड़ी है ही नहीं !"

छबीला बोला—"माला ! यही तो मुख्य बात है, पहिली है।"

माला ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा—"नहीं ! नहीं ! यह बात सबसे पीछे है।"

बड़ी-बड़ी मूछों वाला झगड़ू बैठा हुआ अपनी मूछों पर बल दे रहा था। वह ध्यान से माला की बात सुन रहा था। उसी को लक्ष्य कर माला ने फिर कहा—"देखते हो न, इस झगड़ू को और इसकी मूछों को, एक दिन खेत का एक गन्ना तोड़ने पर ठाकुर के लड़के ने इसकी मूछों को पकड़ लिया था। वह इन्हीं मूछों को उखाड़ना चाहता था। उनको अब हजरत बड़े इतमीनान से मरोड़ रहे हैं। मैं कहती हूं, तुमने जिन्दगी तो पाई, पर यह भी कभी समझा कि आदमी किस तरह ज़िन्दा रहता है ! कैसे सलीके सीखता है !"

जुम्मा बोला—"इन ठाकुरों ने हमारी बहू-बेटियों का भी अपमान किया है ! और तुझे क्या बख्शा है !"

माला बोली—"यही तो ! तुम मेरी चिन्ता छोड़कर पहले अपनी चिन्ता करो। आदमी बनो। नीचे से ऊपर उठने की बात सोचो। इस ब्याह की बात को भी तूल न दो। जब मुझे ऐसा करना होगा, तो जहां ठीक साथी मिलेगा, कर लूंगी।"

पल्टू नाम के व्यक्ति ने कहा—"क्या हरदेवा···या कोई और···?"

माला ने क्षोभ-मिश्रित स्वर में कहा—"कोई भी ! चाहे डोम, भंगी, चाहे ठाकुर···!"

छबीला बोला—"भाइयो, यह माला तो हमारे मुंह पर कालिख पोतेगी !"

माला ने कहा—"ओहो, बड़ा गोरा और साफ़ मुंह है न, इन छबीले-लाल का !"

झगड़ू ने कहा—"ब्याह तो अपनी जाति के लड़के से होगा और कहीं नहीं। सुना, माला !"

माला ने तैश में आकर कहा—"तुम इस बात के जिम्मेदार नहीं ! यह मेरी इच्छा का सवाल है। मैं तुम्हारी गुलाम नहीं !"

पल्टू ने कहा—"तो तू हमारी कोई नहीं ? बहिन नहीं, बेटी नहीं !"

माला बोली—"यह अधिकार सभी को है; स्वीकार करने का है। जब तुम ऐसा नहीं मानोगे तो क्या मुझे पीछे पड़ना है !"

छबीला बोला—"माला ! तू रास्ता काटती है। हमसे बचना चाहती है। यह नहीं होगा।"

माला ने कहा—"छबीले ! बात करने का शऊर सीख। यह न सोच कि मैं लड़की हूँ, बिना माँ-बाप की हूँ !"

जुम्मा बोला—"न, बेटी ! हम सब तेरे हैं, तेरे साथ हैं। कल्लू गया, तो क्या, तेरे लिए हम लोगों का कर्त्तव्य भी क्या उसके ही साथ चला गया है ?"

उसी समय माला का स्वर अवरुद्ध हो गया। उसके मन का ममत्व और पीड़ा का वेग आँखों में उतर आया। उसने नितान्त वेदना भरे स्वर में कहा—"बाबा ! सचमुच, मैं आज अपने को दुर्भागी मानती हूँ। मुझे डोम जाति के घर में जन्म लेने का दुःख नहीं, पर इस बात का क्षोभ जरूर है कि मैं कैसे आदमियों में बसी हूँ। यह छबीला एक दिन मुझे खेत पर मिला था, धौंस दिखा कर कहता था कि यदि मैंने जाति की पीठ में छुरा भोंका तो मुझे भी जिन्दा नहीं छोड़ा जायगा। और आज मैं कहती हूँ कि मैं तब भी यदि चाहती तो इस छबीले लाल को जेल भिजवा देती। पर गाँव का था, कौम का भाई था, इसलिए जहर का घूंट पीकर रह गई।"

इतना सुना तो जुम्मा तड़प गया—"क्यों बे, छबीले !"

छबीला ने कहा—"नहीं, ताऊ ! यह झूठ बोलती है।"

झगड़ू ने कहा—"देख, छबीले ! यह नहीं होने का। सुना तूने, टुकड़े कर दिये जायेंगे उस आदमी के जो माला की ओर आँख भी उठायेगा।"

तभी माला ने बात को बढ़ावा दिया—"चाचा झगड़ू ! तुम तो आज आये हो मेरे पास। कभी सुनते मेरी गाथा तो जानते कि मेरी बिरादरी के ही और लड़के···हाँ, किस-किसके नाम बताऊँ ! मोहल्ले में निकलती हूँ तो कुत्तों की तरह भौंकते हैं···आवाजकशी करते हैं, ये आई मेम साहब। अरे, अब ये ठकुराइन बनने चली हैं···नीचे-से पहाड़ पर चढ़ना चाहती हैं···ही-ही···हो-हो···! और इतना ही नहीं, ये लड़के दूसरों को भी सुना कर कहते हैं कि हमारी बिल्ली, हमीं को म्याऊँ।···चाचा, यह छबीला, जो तुम्हारे साथ आया है, खुद कहता है, और कहलवाता है। मैं कहती हूँ, एक दिन इसका मुँह न टूटा तो बात क्या ! यह महीनों खाट तोड़ेगा !"

छबीला ने कहा—"तू झूठ कहती है !"

माला बोली—"अभी मेरा समय नहीं आया है, कहने का। मैं इस गाँव के

अपने भाइयों से ही तुझे न पिटवा सकी, तो बात क्या ?"

जुम्मा ने कहा—"छबीले, डूब मरने की बात है ! माला तेरी बहिन है।"

छबीला बोला—"मैं मानता हूँ।"

माला ने कहा—"तू कुछ भी नहीं मानता।"

यों बातों का वातावरण बदल गया था। गम्भीरता आ गई थी।

झगड़ू ने जुम्मा को सम्बोधित किया—"चाचा ! माला कहाँ ब्याह करेगी, यह अभी नहीं कहना। मैंने समझ लिया है कि हम कसूरवार हैं।"

माला ने कहा—"मैं जो-कुछ करूँगी, वह तुम लोगों से छिपा न रहेगा। मेरी एक-एक बात तुम्हारे कानों में आएगी। मैं जैसी तुम्हारी आज हूँ, आगे भी रहूँगी।"

जुम्मा ने प्रसन्न होकर कहा—"बस, बेटी ! यही सुनना था, हमें भी यही कहना था। राम तेरा भला करे !" यह कहते हुए उसने छबीले की ओर देखा—"देख, छबीले ! अब कोई बात सुनने में न आये। तुम सब माला के साथी हो, दुश्मन नहीं। भाई हो, ग़ैर नहीं।"

छबीला ने कहा—"यही हमको ग़ैर समझती है !"

माला बोली—"आदमी कोई ग़ैर नहीं। उसका काम ग़ैर बना देता है, दूर ले जाता है।"

पल्टू ने कहा—"यह सच है। माला ठीक कहती है।"

झगड़ू बोला—"वह पादरी भी आता है। बता तो, क्या उस मज़हब में जायगी ? अब तो तू बहुत पैसे पाने लगी है।"

माला फिर खिन्न बन गई—"दादा, मैं औरत जात हूँ जिसका न कोई धर्म है, न कोई जाति।"

झगड़ू ने कहा—"वह पादरी हमको भी समझा रहा है, मेरे लड़के को नौकरी दिला देने की बात भी कह चुका है।"

माला बोली—"वह शैतान है ! हमारी विवशता का इन ईसाइयों ने खूब लाभ उठाया है। ईसाइयों ने ही क्या, सभी ने उठाया है।"

पल्टू बोला—"हमारा धर्म ही क्या है—न हिन्दू, न मुसलमान !"

माला ने कहा—"नहीं, हम भी हिन्दू हैं। वैसे इन्सान हैं। राम और कृष्ण को हम भी मानते हैं।" वह बोली—"मैंने निश्चय किया है कि अपनी जाति के हृदय से यह भावना निकाल दूँगी कि हम असहाय हैं, कमज़ोर हैं, हीन हैं। सभी के समान हम भी भगवान को मानते हैं। इस संसार के रास्ते पर सभी आगे बढ़ सकते हैं। वह सभी का आवाहन करता है। दूसरों के दास बनना हमारी

जन्म-पत्री में नहीं लिखा है। पर यहाँ तो अवस्था यह है कि नावदान का कीड़ा उसी दुर्गन्ध को पाता है और वहीं प्रसन्न रहता है। यही हमारी जाति का हाल है। हमारी कौम का पूर्ण पतन हो चुका है। देखती हूँ कि लोगों ने हमारे पेट पर लात मारी और साथ में ईमान और धर्म भी छीन लिया है!"

झगड़ू ने कहा—"माला, हम ग़रीब हैं, रोटियों के मोहताज हैं।"

माला ने अत्यन्त कातर बनकर कहा—"यही हमारा पाप है! मैं कहती हूँ, हाथ-पैर तुम्हारे भी हैं, बुद्धि भी है, क्यों नहीं दूसरा काम करते! क्यों नहीं किसी और जगह को आबाद करते! पर तुम्हें तो इसी नावदान में पड़े रहने की आदत हो गई है···सड़ने की···दुर्गन्ध में मरने की···!"

इस बात को सुन, सभी का सिर झुक गया। उनके मन से, बरबस ही, माला के विवाह का प्रश्न निकल गया। उन्हें लगा कि जैसे माला ने उनके मुंह पर उन्हें धिक्कार दिया···सत्य का उद्घोष किया। और उन्होंने बरबस ही उसे स्वीकार कर लिया।

तेईसवीं बात

एकाएक ही रमिया ग्रौर जग्गू पर जो वज्रपात हुग्रा, उससे पति-पत्नी दोनों का मानसिक सन्तुलन जाता रहा। जग्गू के पास वही सबसे बड़ा खेत था ग्रौर उसी के ग्राधार पर उस घर का जीवन-यापन हो रहा था। उस फ़सल में कदाचित् सभी की निगाह जग्गू के खेत पर ही पड़ती थी, क्योंकि उसका गेहूँ उत्तम ढंग से उपजा था। जिस दिन खेत में ग्राग लगी, उसके एक दो-दिन बाद ही वह कटने वाला था। उस खेत को जलाकर रमिया ग्रौर जग्गू के पेट पर लात मारी गई थी। जैसे ग्राग लगाने वाले को उन दोनों की पीड़ा ग्रौर व्यथा देखने की उत्कट इच्छा थी। लेकिन वह ग्रासमान से गिरने वाली बिजली यदि एक बार गिरकर ही रुक जाती, तो सन्तोष था, परन्तु उस घटना के दूसरे ही दिन, जब एक ग्रौर नया प्रात.काल हुग्रा, तो रमिया की प्राणों से प्यारी गाय चमेली ग्रपने खूंटे पर मरी हुई पाई गई। रात में ही किसी ने उसे विष दे दिया था। यह देख, रमिया का मानस कोलाहल कर उठा। वह तड़पती रह गई। उसे ऐसे लगा कि जैसे ग्रब उस घर का कुछ भी न बचेगा। रमिया जायगी, तो जग्गू···। उस कोलाहल में मानो रमिया का समूचा प्राण समाच्छिन्न हो गया।

किन्तु सन्तोष की बात यह थी कि ग्रब रमिया गांव में ग्रकेली नहीं थी। उसके पीछे गांव का ग्रधिकांश भाग था। रमिया से सहानुभूति रखने वालों में ग्रधिकांश की एक ही राय थी कि यह काम ज़मींदार का है···वह नर-पिशाच ग्रब चुनाव की हार का बदला निकालना चाहता है! वह ग्रपने पैसे से ग्रब भी गांव पर शासन करना चाहता है। वह नर-पशु है। सांप के दांत टूट गये तो क्या, ग्रब भी फुंफकारता है···हां, ज़मींदारी गया, पर लोगों के दिमाग का ज़हरीला कीड़ा क्या मरा है?

यद्यपि जोधराम ग्रब ज़मींदार नहीं रह गया था, किन्तु था वह ग्रति चतुर ग्रादमी। उसने ग्रन्य दूसरे कार्य करने ग्रारम्भ कर दिये थे। उन कामों से भी वह रुपया उपार्जित करता था। उसने ईंटों का भट्टा लगाया था ग्रौर ग्राटे की पन-चक्की स्थापित की थी। साथ में तेल पेरने का कोल्हू भी लगा रखा था। ग्रौर-

राम के सम्मुख रमिया का कोई महत्त्व नहीं था। किन्तु रमिया और उसके साथियों के कारण ही, हरदेवा के मामले में वह जेल गया। बाद में उस झगड़े से छुटकारा भी रमिया के कारण ही पा सका। इस प्रकार रमिया के कई आभार उसके ऊपर चढ़ रहे थे। वे जैसे निरन्तर बोल रहे थे। परन्तु वह मदान्ध और क्रूर व्यक्ति, उनका भी उचित अर्थ नहीं लगा सका। उसे यह बात एक क्षण को भी रुचिकर नहीं लगी कि उस गाँव में औरत का शासन हो...उसके समक्ष औरत का सम्मान हो! और वह औरत भी ऐसी, ऐसे व्यक्ति की पत्नी कि जिसका उस गाँव के जीवन में कोई विशेष महत्त्व नहीं था।

इसी हेतु, निश्चय ही, ज़मींदार के साथ गाँव का वह भाग भी था जो इसी प्रकार की दुर्भावनाओं से भरा था। उसमें लाला धनपतराय भी एक था। इस तरह के लोग इस बात को कदापि नहीं चाहते थे कि गाँव की शक्ति, गाँव की प्रभुता रमिया के हाथ में हो। वे गाँव के हृदय पर, शरीर पर, अपना अधिकार चाहते थे। निदान, जिस समय रमिया का खेत जला, दूसरे दिन गाय मरी, तो गाँव के वे लोग जिनपर रमिया के समर्थकों को सन्देह हो सकता था, सहानुभूति दिखाने मात्र के लिए भी रमिया के घर नहीं पहुँचे। मानो गाँव में फिर युद्ध की लपटें उठने लगीं। कुछ समय पूर्व, जिस गाँव में शांति का वातावरण बन चला, उसमें ही फिर जहाँ चार आदमी आपस में बैठते, तो गाँव की गन्दी और अमानुषीय राजनीति का प्रकरण छेड़ने लगते। मानो उन लोगों को उसी प्रकार के विषय में आनन्द आता था। अथवा उस गाँव का वही धर्म रह गया था।

फलस्वरूप, स्पष्ट रूप से गाँव में दो दल बन गये। एक रमिया का समर्थक, दूसरा ज़मींदार का पोषक। ज़मींदार के दल में पैसे वाले अधिक थे। किन्तु रमिया के समर्थक केवल निर्धन और मज़दूर थे। उनकी संख्या भी अधिक थी। अवस्था यह थी कि वे दोनों दल किसी समय भी लड़ सकते थे। उस लड़ाई में लाठियाँ तथा गँडासे चलने की सम्भावना थी। रमिया के दल का नेतृत्व रलिया कर रहा था। उसके साथ गाँव के अधिकांश जवान थे। एक ओर पैसे का बल था, तो दूसरी ओर मनुष्यों का। दोनों ओर मोर्चे लगे थे, एक-दूसरे को झुका देने पर कटिबद्ध थे।

किन्तु गाँव की ऐसी अवस्था देखकर रमिया के मन की गति उस समय अत्यन्त अशांत हो रही थी। वह इस बात के लिए चेष्टित थी कि झगड़ा न हो। वह यह समझती थी कि यदि गाँव में एक बूँद भी खून गिरा, तो उसके सारे जीवन की साधना निष्फल जायगी। उसका पतन हो जायगा। वह तब गाँव में किसी को भी अपना मुँह नहीं दिखा सकेगी। वह डूब मरेगी!

उन्हीं दिनों की बात कि उसने रलिया से मुकदमा वापिस करा दिया था। पार्वती का लड़का उसके असली बाप को सौंप दिया गया था। इस बीच में रलिया ने अपना जला हुआ घर फिर खड़ा कर लिया। इसी समय, एक दिन रमिया ने रलिया को सुनाया कि मैं मूर्ख औरत जब इस रास्ते पर आ गई हूँ, कुछ सीख गई हूँ, तो अब देखना चाहती हूँ कि इस सब का परिणाम क्या है। सन्तों की वाणी का मोल क्या है।

तभी रलिया ने कहा—"भाभी! इस दुनिया में ऐसे नहीं निभता। सांप को दूध पिलाकर नहीं पाला जाता। पालने वाला या तो उसके जहरीले दांत तोड़ देता है, या खुद शिकार होकर मर जाता है।"

रमिया ने कहा—"अरे, रलियाराम! जंगल के सांप से तो बचा जा सकता है, पर ये सांप जो तुम्हारी आस्तीनों में घुसे हैं, ये क्या निकाले जा सकते हैं? यही तो काटते हैं। इन्हीं से लोग मरते हैं···हाँ, रलियाराम! यह लाला···यह पण्डित···यह मुल्ला···यह जमींदार! अरे, कहाँ तक गिनाऊँ तुझे, ये जितने पैसे वाले हैं, बड़ी जाति वाले हैं, सभी तो पैसे और धर्म के नाम पर आदमी का खून चूसते हैं। अपने जहरीले दांतों से शरीर काट देते हैं, इस इन्सान का!"

रलिया ने कहा—"तो भाभी, तू फिर भी ऐसा कहती है! इतना जानकर भी शांति का राग अलापती है!"

रमिया ने कहा—"भैया! मैं देखती हूँ कि इस दुनिया में जिस वस्तु की दरकार है, वह तुम्हारे पास नहीं। पैसा नहीं! बल नहीं! तुम्हारे समूह में शक्ति नहीं!"

रलिया ने कहा—"वह शक्ति अब हमारे पास संचित हो रही है, भाभी! सुना न तूने, जमींदार के खेत खाली पड़े हैं। लाला भी मजदूरों की तलाश में मारा-मारा फिरता है। और खाने के लिए कोई उनके यहाँ नहीं जाता। पके खेतों का अनाज झर-झर कर मिट्टी में मिल रहा है। गाँव की छोटी जाति-वालों ने कह दिया है कि हम खेत नहीं काटेंगे। कुछ लोगों ने इन मजदूरों को सहयोग देना चाहा है। अपने खेतों से अन्न दे दिया है।"

रमिया ने उदास बनकर कहा—"काश, यही समस्या का हल होता!"

रलिया बोला—"भाभी, अब तू चुप बैठी रह! अपना शांति का राग कुछ दिनों के लिए रोक ले। अब निर्णय करना है कि इस गाँव में इन्सान रहेंगे या हैवान!" उसने कहा—"उस दिन थानेदार आया था, तो यह कह गया था कि रामप्यारी रिपोर्ट कर दे तो मैं इन लोगों पर मुकदमा चला दूँ। इन्हें दिन में तारे दिखाई देने लगेंगे।"

रमिया ने दुखित स्वर से कहा—"वह भी पैसे बनाना चाहता है रलियाराम ! पुलिस का यही काम है।" यह कहते हुए रमिया ने साँस भरी और कहा—"रलियाराम ! देख मेरा मन दुखी है। मुझे चिन्ता है। गाँव ने जब मेरे सिर पर बोझ रखा है, तो मेरे मन में बात है कि मेरे मरने के बाद लोग समझें कि रमिया ने कोई रास्ता बनाया था और गाँव को उस पर चलने के लिए कहा था। दुश्मन से भी प्यार और ममता करना मुझे सोहाता है।"

रलिया ने कहा—"गाँव उस पर नहीं चलेगा, भाभी ! इन्सान रहेगा तो झगड़ा भी यह करता रहेगा। भला स्वार्थी मनुष्य क्या शान्त रह सकेगा ? बलवान सदा ही क्रूर बनेगा। दुर्बल को दबायेगा।"

रमिया ने कहा—"अरे, अब तू भी बहुत कुछ सीख गया है।"

रलिया ने कहा—"मन्दिर का बाबा सभी कुछ बताता है।"

"तो तू उसके पास जाता है ?" रमिया ने पूछा—'वही बाबा मुझे भी जाने क्या-क्या कहता है। पिछले एक वर्ष में उसी ने मुझे चलना सिखाया है।"

रलिया ने कहा—"बाबा बूढ़ा हो गया है, नहीं तो वह क्या कभी एक जगह टिका है ! यहाँ रहते भी उसे दो-तीन वर्ष हो गये। अब जाना चाहता है। कहता था, गंगा के तट पर जाऊँगा। वहीं शरीर छोड़ दूँगा।"

उसी समय रमिया ने साँस भरी और कहा—"रलिया ! यह बाबा भी अजीब है। उसने मुझे अपने संबंध में भी कुछ बताया। आज कहती हूँ कि वह अपनी जवानी के दिनों में अच्छा आदमी नहीं रहा। कहता था कि डाकू बना; खूनी, लुटेरा ! परन्तु एक बार जब उसने एक छोटी लड़की की आँखों के आँसू देखे, तो उस दिन से डाकू नहीं रहा। जाने कैसे उसके मन पर चोट पड़ी कि साधु बन गया। वह मुझसे भी कहता था कि वह दूर-दूर तक घूमा, पहाड़ों में अधिक रहा।"

रलिया ने कहा—"भाभी ! इतना मुझे भी पता है। पर अब तो वह गंगा के समान निर्मल है।"

रमिया ने साँस भर कर फिर कहा—"हाँ, रलियाराम ! वह अब निर्मल और पवित्र है। जब मेरा खेत जला और उसने गाय के मरने का समाचार पाया, तो तुरंत बाबा भागकर मेरे पास आया था। इतना उसी ने मुझसे कहा—"अरी रमिया ! गाँव की सरमायेदारी और क्रूर प्रवृत्ति तेरी साधना को भंग करने में लग गई है। खबरदार ! मन की शांति को न खो बैठना और न ही चंचल बनना। यही तेरा परीक्षा-काल है। तेरी साधना या तो अमर हो जाने वाली है या भंग। तेरे सामने ज़हर का प्याला रखा गया है। तुझसे कहा जा रहा है कि इसे पी ! मर ! पर तू किसी पर गुस्सा न करना और न ही प्रतिशोध की आग

में कूद पड़ना। बल्कि सब ओर से बचकर शान्त रहना। यह समय तेरे लिए सम्हलने का है।"

रलिया उस समय गंभीर था। बात सुनी तो बोला—"मैं बाबा की बात भी नहीं समझ पाता। वह कभी कुछ कहता है, कभी कुछ!"

रमिया ने नितान्त सदय बनकर कहा—"भैया, रलियाराम! वह साधु है। उसकी हर बात का मोल है। वह स्वार्थ से परे है। उसकी कोई आवश्यकता नहीं, माँग नहीं। कहता था—"रात में, इस गाँव को पार करते हुए, बन्दूकधारी डाकू जाते हैं, चोर आते-जाते हैं। वे भी कुछ देर उसके पास बैठते हैं। धूनी से बीड़ी सुलगाते हैं और दो-चार बातें कर चले जाते हैं।"

रमिया बोली—"एक दिन बाबा ने मुझसे कहा था कि यहाँ बैठ कर भी मैंने कई चोरों को चोरी करने से छुड़ा दिया है। वे इस पेशे को छोड़ बैठे हैं। उसने मुझसे कहा—रमिया, तेरी बात से, इस एक जीवन में यदि एक आदमी का भी उद्धार हुआ, तो अपना यह जीवन सफल मानना। इसी का नाम सेवा है। इसी का नाम साधना है। वह बोला—तू मर जायगी, तो लोग तेरे बताये रास्ते पर चलेंगे और तुझे याद भी करेंगे।"

रलिया ने कुछ अप्रतिभ होकर कहा—"भाभी! तुझे भी अपने आप से मोह हो गया है।"

रमिया जैसे चौंक गई। तुरन्त बोली—"न, रलियाराम! मोह मुझे केवल एक बात का है और वह यह कि मैंने पिछले एक साल में जिन झगड़ों को निपटाने में अपनी पूरी शक्ति का उपयोग किया, अब यदि मैं अपने कारण गाँव में फ़िसाद करा दूँ, तो लोग जरूर मेरे पर थूकेंगे। सभी कहेंगे कि जब दूसरों के घर में आग लगी, तो इस रमिया ने शांति का राग अलापा। पर अब जब अपने पर मुसीबत आई है, तो लगी है लोगों को भड़काने कि मेरे लिए लड़ो, मेरे लिए मरो!" यह कहते हुए रमिया रुक गई और बोली—"सुन, रलियाराम! मैं बार-बार काँप उठती हूँ। ले, तुझे मैं यह भी बताये देती हूँ कि मुझे इस गाँव के रहने वाले लोग अच्छी नजर से देखते हैं। वे मुझ पर ममता रखते हैं। मेरे पास कई डाकू आ चुके हैं जो लाला और जमींदार जोधराम को लूटने तथा खत्म करने की बात कह गये हैं। सचमुच, उन्हें भी मेरी हालत पर रहम आता। पर मेरी तो उनसे भी यही प्रार्थना रही कि न, जिसने मेरे साथ बुरा किया, अच्छा किया! मेरा कर्त्तव्य यह है कि सबका भला करूँ।"

उसी समय रलिया ने अपनी टेंट से एक बड़ा चाकू निकाला और रमिया के सामने फेंक दिया। उसने तुरन्त कहा—"ले, भाभी! सोचा था कि तेरे दुश-

कार का वदला मैं ज़मीदार का खून करके दूँगा। पर अव मैं कुछ नहीं कर सकूँगा। यह चाकू वाज़ार से इसी काम के लिए खरीद कर लाया था। तभी से मैं ज़मींदार की तलाश में था। मैंने सोचा था, जव भी अँधेरे-उजाले में मिलेगा, तो मैं एक ही वार में उसका पेट फाड़ दूँगा···मैं जोधराम का जीवन खत्म कर दूँगा। भाभी, में तेरे लिए मरना चाहता था। मैंने यह प्रण किया था।"

किन्तु उस समय रमिया की अवस्था अजीव हो गई थी। वह यह सव सुनकर काँप उठी। वह अपने समक्ष वैठे हुए रलिया के रूप में एक खूनी को देख रही थी। इन्सान के खून के प्यासे को निरख रही थी। तभी उसने वह चाकू उठा लिया। उसका फलका खोला, तो सच, वड़ा भयानक और तेज़ था वह फलका! पूरा डेढ़ वालिश्त! उसी अवस्था में रमिया ने कहा—"मेरे रलिया, इतना भी सोचा तूने! इतना भयानक है तू! राम-राम! अच्छा हुआ, जो तूने कह दिया, मुझे वता दिया। अरे, तू ऐसा करता, तो सचमुच ही, इस रमिया को भी मार देता, वल्कि जिन्दा गाड़ देता। फिर क्या मुझे इस गाँव में अथवा धरती पर कहीं रहने का आश्रय मिलता···न, विलकुल नहीं! गाँव मेरे मुँह पर थूकता और कहता—"तूने ही, जोधराम का खून करा दिया···उसे मरवा दिया···"

रलिया खड़ा हो गया और वोला—"भाभी! एक वात सुन ले। कान खोल ले। तूने मुझको झुका दिया, मुझको सभी कुछ कह दिया। पर यह तो गाँव है। यहाँ तो और भी कई रलिया पड़े हैं। वे तेरी पूजा करते हैं। मेरे से नहीं, तो किसी और के हाथ से ज़रूर ही जोधराम और लाला धनपतराय का खून कर दिया जायगा···यह नहीं रुकेगा···"

रमिया ने इतनी वात सुनी, तो उसका साँस रुक गया। रलिया चलने को हुआ तो रमिया के मन में आया कि उसका पल्ला पकड़ ले और उसके पैरों में गिर कर कहे—अरे, रलियाराम! ऐसा न होने देना! देखना, मेरी साधना को भंग न कर देना। किन्तु इतना रमिया से नहीं कहा गया। वह इतनी डरी, ऐसी काँपी कि वोल भी न निकल पाया।

और रलियाराम तेज़ी के साथ पैर वढ़ाता हुआ वहाँ से चला गया।

चौबीसवीं बात

जोधराम जमींदार, लाला धनपतराय और जगराम पटवारी—ये तीन व्यक्ति देर से गाँव में भगवान का बनावटी रूप धारण किये हुए थे। परन्तु ज्योंही हवा बदली, त्योंही ये महानुभाव आसमान से धरती पर मुँह के बल आ गिरे। पटवारी की स्थिति अत्यन्त दयनीय बन गई। वह अपने प्रान्त के समस्त पटवारियों के साथ नौकरी से पृथक् कर दिया गया। बात यों हुई कि जब देश में स्वतन्त्रता आई, तो सरकार के अनेक विभागों और अन्य वर्गों के नौकरीपेशा-लोगों ने अपनी माँगें उपस्थित कीं, उन्होंने हड़तालें कीं। परिणामस्वरूप उनकी माँगें स्वीकार कर ली गईं। किन्तु ऐसा लगा कि घोड़े के नाल जड़ी गई तो मेंढकी ने भी अपनी टाँग उठा दी। जिस पटवारी-वर्ग ने देश का शोषण करने में योग दिया था और गाँवों की बरबादी में जिसका बहुत बड़ा हाथ रहा था वह वर्ग भी उस समय से लाभ उठाने के लिए आगे बढ़ा। उसने भी वेतन-वृद्धि की माँग उपस्थित की। किन्तु प्रान्त की सरकार ने उसकी माँग स्वीकार नहीं की। पटवारी-वर्ग का सामूहिक रूप से दिया गया त्याग-पत्र प्रान्तीय सरकार ने स्वीकार कर लिया। मुन्शी जगराम का इसी उद्देश्य पर बलिदान हुआ।

लेकिन जब सामन्तशाही के गढ़ की दीवारें हिलने लगीं, छोटे-छोटे व्यक्ति भी उसमें लात मारने लगे, यह न तो पटवारी को पसन्द था, न जमींदार जोध-राम को। गाँव में रमिया के साथ जिस प्रकार का समूह एकत्र हो गया था, यह उन लोगों को कदापि पसन्द नहीं था। इसके अतिरिक्त जो विशिष्ट बात थी, वह यह थी कि अँग्रेजी राज्य के युग में जमींदार का विशाल बैठकखाना आये दिन किसी-न-किसी हाकिम-हुक्काम से गूंजता था, परन्तु अब वह अपना सिर धुन रहा था। उस अवस्था में जो विशिष्ट व्यक्ति बाहर से आता, वह न जमींदार को पूछता, न पटवारी को। वह रमिया से ही भेंट करता और उसी के प्रति आदर प्रदर्शित करता। अब जमींदार के समक्ष सिर झुकाना जैसे लोगों की आदत से निकल चुका था। लोगों ने मानो समझ लिया था कि साँप बूढ़ा हो गया है, उसके दाँत झड़ गये हैं और उसका विष भी चला गया है। इसलिए वा

भय का कारण नहीं रहा था। उसकी फुँफकार का भी महत्त्व नहीं रह गया था।

किन्तु जब रमिया का खेत जला और गाय मारी गई, तो लोगों ने समझा कि साँप के दाँत भले ही टूट गये, पर वह मुँह अब भी मारना चाहता है, फुँफकारता है, डराता है। ज़मींदार का दम्भ अभी बोलता है। क्रूरता का रूप अभी पूर्णरूप से नष्ट नहीं हो पाया। इसका परिणाम यह हुआ कि लोग सचेत हो गये। उन्होंने समझ लिया कि भेड़िये ने गाय की खाल ओढ़ ली है। ज़मींदार अब खद्दर का कुरता और टोपी भले ही पहनने लग गया है, परन्तु उसका मन अभी भी काला, घिनौना और क्रूर बना है।

इसका परिणाम यह हुआ कि लोगों ने ज़मींदार और उसके सहायकों का सामाजिक बहिष्कार कर दिया—भंगी ने काम छोड़ दिया, नाई ने हजामत बनानी बन्द कर दी, कहार पानी भरने से रुक गया, धोबी ने कपड़े धोने से इन्कार कर दिया। गाँव में ठाकुरों की बहुतायत थी, इसलिए अधिकांश ठाकुरों ने भी ज़मींदार से हुक्का-पानी का सम्बन्ध त्याग दिया। फलस्वरूप, ज़मींदार का गाँव की चौपाल पर आना रुक गया। उसने इस रास्ते को छोड़ दिया। अवस्था यहाँ तक बिगड़ी कि गाँव की नारियाँ भी ज़मींदार के घर से बिरादरी का सामाजिक सम्बन्ध तोड़ बैठीं। उन्होंने निश्चय किया कि यदि ज़मींदार के घर किसी बच्चे के मुण्डन पर मनाये जाने वाले उत्सव के अन्तर्गत महिला-संगीत का प्रोग्राम होगा तो गाँव की स्त्रियाँ उसके यहाँ नहीं जायेंगी। यही अवस्था पटवारी और लाला धनपतराय की थी। उनका भी इसी तरह बहिष्कार कर दिया गया था।

रमिया उन दिनों मौन थी, जैसे जड़। रलिया और उसके साथियों ने उससे यह वचन ले लिया था कि यदि गाँव का निर्बल-वर्ग झुकाया जाता है और उसके प्रतिरोध-स्वरूप हमारी ओर से कुछ किया जाता है, तो रमिया को उनकी बात माननी होगी। रमिया ने विवश हो बरबस ही इस बात को स्वीकार तो कर लिया था परन्तु उसके मानस में किस प्रकार की बेचैनी थी, कितनी पीड़ा थी, इसका कोई अन्य व्यक्ति अनुमान भी नहीं लगा सकता था। सचाई यह थी कि रमिया इस बात को स्पष्ट देखती कि उसकी पूजा भ्रष्ट हो गई है, जैसे उसका नैतिक पतन हो गया है! उसने लम्बे समय में जो-कुछ उपार्जित किया था वह मानो हवा के एक ही झोंके में उड़ गया। उसके विचार बालू की दीवार सिद्ध हुए। मानो उनमें बल नहीं था। इतने समय के बाद भी अस्तित्व-हीन था, रमिया का जीवन!

उस दिन रात के प्रथम प्रहर में, ज़मींदार ने लाला और पटवारी को अपने

यहाँ बुलाया। कुछ और व्यक्ति भी आये। उनके सामने यह प्रश्न था कि क्या रमिया और उसके साथियों के ज़हरीले दाँतों को तोड़ा न जा सकेगा! क्या उन्हें इसी प्रकार बढ़ने दिया जायगा!

जमींदार के यहाँ उपस्थित जनों में एक व्यक्ति नया था। निश्चय ही, वह उस गांव का नहीं था। उसकी बड़ी-बड़ी आँखें थीं। वह उस समय बैठा हुआ लगातार अपनी लम्बी मूंछों को मरोड़ रहा था। जोधराम ने उसी व्यक्ति को लक्ष्य किया और लाला धनपतराय से कहा—"इन रणवीर का मत है कि न रहे बाँस और न बजे बाँसुरी···क्या ख्याल है तुम्हारा?"

लाला ने बात सुनी और गम्भीर बन गया। उसने कहा—"मेहतो, समस्या कठिन है! जीवन मेहतो ने जो-कुछ किया, उसका फल हमें भी भोगना पड़ा। वह कांटा अभी तक चुभ रहा है। उसमें तुम्हारा और पटवारी का भी काफी नुकसान हुआ। मैं ऐसी सलाह नहीं दे सकता। मरने वाला मरेगा और मारने वाला भी कूदकर दूर जा खड़ा होगा। परन्तु भोगना गांव को पड़ेगा···मुझको और तुमको ही जेल जाना पड़ेगा, मेहतो!"

जोधराम ने भारी आवाज़ में कहा—"यही मेरा मत है। मुझे भी यह बात खटकती है।"

लाला ने कहा—"अब तक जितना-कुछ हुआ, उसका परिणाम अच्छा रहा। एक नाचीज़ रमिया ने हम-सबको दूध की मक्खी की तरह निकाल कर बाहर फेंक दिया।" वह बोला—"मेहतो! मैं तुम्हारी बात से सहमत नहीं हो सकता। देखते हो, मेरा कितना नुकसान हो गया। एक रुपया रोज का मजदूर पांच रुपये रोज पर भी नहीं मिल रहा। जैसे सभी ने अपने कानों में तेल डाल लिया है। लगता है कि इस भरे-पूरे गांव को सांप सूंघ गया है!"

मेहतो जोधराम ने कहा—"लालाजी, नुकसान मेरा भी हो रहा है!"

लाला ने आक्रोश के स्वर में कहा—"पर मेरा नुकसान तुम्हारे कारण हो रहा है। जिस-जिस के पास मेरा पैसा था, वह भी कोई नहीं देता, साफ मुकरता है। बताओ, जब गवाही न मिले, तो किसी पर क्या खाक मुकदमा किया जायगा!"

सामने बैठे हुए अपरिचित व्यक्ति ने उपेक्षा के साथ कहा—"लाला डरपोक है, कायर है!"

बात सुनी, तो लाला को क्रोध आ गया। उसने तमक कर कहा—"ठाकुर, मैं तुम्हारी बात में नहीं आता! तुम्हें नहीं मालूम कि इस मेहतो ने मेरा नाश कर दिया है!" वह बोला—"मेहतो जोधराम! तुम दूसरों के कन्धे पर रखकर बन्दूक चलाते हो। यह नीति खराब है। जब तुम में दम नहीं, तो चुप ही

जाओ। अपना सिर झुका दो। रमिया के सामने हार मान लो। देखो, आज मैं इस सचाई को कहने के लिए विवश हूँ कि उस छोटी-सी औरत ने अपनी सेवा से गाँव-भर का दिल जीत लिया है। छोटा-बड़ा उसके कदमों में सिर झुकाता है। मेहतो, उसकी गाय मार कर और खेत जला कर तुमने अच्छा कार्य नहीं किया। एक बड़ा पाप किया है। तुमने हमारा भी सिर झुका दिया। अपने समान हमारा भी मुंह काला कर दिया।"

मेहतो जोधराम ने कठिनाई से अपने मन का रोष छिपाया और बनावटी हँसी हँस कर कहा—"आज लाला को गुस्सा आया है। लगता है कि कुछ हुआ है।"

लाला ने कहा—"मेहतो! घर जल रहा है, लुट रहा है! लगता है कि मुझे यह गाँव छोड़ना पड़ेगा। तुम्हारी तलवार से मैं भी घायल हो गया।"

पटवारी देर से मौन था। उसने लाला की बात सुनी, तो बोला—"लाला ने ठीक कहा है। गाँव में आज हमारा उपहास हो रहा है! यह अवस्था देर तक रही, तो क्या यहाँ रहा जा सकता है? देखता हूँ कि हमारी ज़िन्दगी में भंगी, चमार और धोबी का बहुत बड़ा हिस्सा है। वे हमारे जीवन के अंग हैं, उनकी उपेक्षा करके हमारा जीवित रहना आज कठिन हो गया है।"

मलखान नाम के एक व्यक्ति ने कहा—"बेशक! जिस बात को हमने पहले नहीं समझा, उसे अब समझा जा रहा है। इन छोटी कौमों को क्या कभी आदमी माना गया है! उनसे ही हमें अन्न प्राप्त होता है। वे हमारे उद्धारक हैं।

जोधराम ने खेदपूर्ण बनकर कहा—"पर भाई! तुम सिर झुका दोगे, तो यह भी मान लो कि तुम्हारा नाश हो जायगा। ये छोटे लोग सिर पर चढ़ जायँगे। तुम्हें भूखा मार देंगे। इस दुनिया में दण्ड का विधान माना गया है। आज तक भय से ही शासन किया गया है।"

लाला ने कर्कश स्वर में कहा—"पर आज तो गाँव के लोग हमें मार रहे हैं। हमारा मज़ाक उड़ा रहे हैं। सुना नहीं, भंगी जल्दी ही पूरे गाँव का काम छोड़ देने वाले हैं। रमिया का अब यही नारा है। उसने बड़ी कौमों से भी कहना आरम्भ कर दिया है कि अपना काम स्वयं करो। पाखाना अपने हाथों से साफ़ करो। घर का कूड़ा खुद ही खेतों में डाल कर आओ। मल-मूत्र गढ़ों में दाबो। रोग का इलाज करने के लिए जो दवाई दी गई, वह बेकार रही। आज हवा बदली है। भय का शासन प्रेम में परिवर्तित हुआ है। आज का समाज उसी को मानता है। देखते नहीं कि रमिया नाम की इस साँपिन ने जाने कहाँ से ऐसा सबक़ पढ़ा है? घसियारे की बेटी ने पण्डित का रूप धारण किया है!'

उसी समय बाहर से आये व्यक्ति रणवीर ने भारी स्वर में कहा—"मान-राम ! तो तुमने यह सब मान लिया !" वह बोला—"लाला ! अब तुम्हें इस गाँव में रहने का अधिकार नहीं रहा। चूड़ियाँ पहन लो। औरतों के कपड़े…"

लाला ने गरज कर कहा—"तुम हमारी बात में टाँग न अड़ाओ जी ! तुम मेहतो के यहाँ आये हो, तो बात सुनो, चुप बैठे रहो।"

मेहतो ने कहा—"लाला ! तुम इस आदमी से परिचित नहीं हो। यह तो हमारा विश्वास-पात्र है। सदा बड़े कामों में हाथ डालता है। हमारी स्वयं प्राप्त करता है। जाति-भाई के नाते हमारा काम बिना कुछ लिये करता है। दूर का रिस्तेदार है।"

लाला ने कहा—"ठीक है, मेहतो ! पर देखो, मैं तुमसे कह रहा हूँ, गाँव में आग लग रही है, गाँव फुंक रहा है। देखते नहीं, धुआँ उठ रहा है, प्राण घुटा जा रहा है…बच्चे-बच्चे की मौत…"

मेहतो ने कहा—"यह तो रमिया से कहने की बात है।"

लाला ने कहा—"नहीं, अब तुमसे कहना है। आग तुमने लगाई है। रमिया तो आग बुझाती है। कई बार उसने गाँव को फुंकते हुए रोका है। आज मुझे सच बात कहनी पड़ी है। हमारे घमण्ड पर गाँव के आदमी तो क्या, औरतें भी थूकती हैं, मजाक उड़ाती हैं !"

जमींदार कड़वे भाव से हँसा—"क्या दुश्मनों के शिविर में से होकर आये हो, लाला ! सच कहना, क्या रमिया ने कोई घुंटी पिला दी है ? सुनता हूँ आज-कल उसका घर चौपाल बना है। दिन-रात वहीं पर पंचायत होती है।" वह बोला—"लाला जी ! सभी को स्वतन्त्रता है कि अपनी इच्छा का उपभोग करें। पर मैं बताये देता हूँ, यह तुम लोगों का परीक्षा-काल है। लोग खेतों पर, घरों पर आकर काम न करेंगे, तो भूखे मर जायेंगे। स्वार्थ केवल तुम्हारा ही नहीं, उनका भी है। यही बात मुझसे कई चमारों और भंगियों ने आकर कही है। उन्हें जबरदस्ती रोका गया है। कानून की निगाह से भी यह अपराध किया गया है। देखते नहीं, गाँव में एक वर्ग के प्रति घृणा फैलाई जा रही है। उसका आर्थिक और सामाजिक बहिष्कार किया जा रहा है। बोलो, क्या यह न्याय है ? यह भी बर्बरता और क्रूरता है !"

लाला ने कहा—"ठीक है ! पर यहाँ तो मामला ही दूसरा है। रमिया तो बात छोटी कौमों से कहती है, वही बड़ी कौमों से। वह दूसरों का नाश करने के साथ अपना भी नाश करना पसन्द करती है। वह तो औरत ही अजीब है। ऐसी क्या मैंने कभी देखी-सुनी है !"

पटवारी ने कहा—"वड़ी छलिया है, कुटिल है !" वह वोला—"कल की वात है कि मैं कहीं से लौट रहा था, तो रमिया मिल गई। मैंने उसकी ओर नहीं देखा। जव वरावर से निकल चला, तो वह तुरन्त ठिठक गई। वोली—"मुन्शी जी ! कोई नाराज़गी है क्या ?" मैं भी रुक गया। कहा—"नहीं जी ! कैसी नाराज़गी ?" तो कहा उसने—"फिर क्या वात है कि वरावर से निकल कर भी नहीं वोले।" और लगी कहने—"सुनाओ, अव क्या करना है ? नौकरी तो गई तुम्हारी। कोई और नौकरी करोगे, या···?" मैंने कहा—"सोच रहा हूँ।" इस पर अपने आप वोली—"सच, वड़ी मुसीवत में आ गये तुम ! वाल-वच्चेदार हो ! मँहगाई का ज़माना है ! मेरे लायक कोई काम हो तो वताना।"

मेहतो जोधराम ने कहा—"क्या ख़ाक काम वतायेगी, मरभुखी ! उस राम-लख को पंचायत का काम दे दिया है। क्यों नहीं, तुम्हें दिला देती।" वह वोला—"पर कैसे दिलायेगी। वह युद्ध का साथी है। और वात वनाती है ऐसी कि वस, जैसे वही है उदारता की भव्य मूर्ति ! मैं कहता हूँ, पूरी चुड़ैल है ! वह आदमी भी क्या है उसका, पूरा घर-घुसा आदमी ! लुगाई के सामने गिड़-गिड़ाता है। औरत के आगे हाथ जोड़ता है···मूर्ख कहीं का !"

पटवारी ने कहा—"उस जग्गू को देखकर मुझे तो दया आती है। पति वह है, पर लुगाई उसे आदेश देती है !"

जोधराम वोला—"मैं कहता हूँ, गाँव को एक दिन उसकी असलियत मालूम हो जायगी। देखना, इस चुड़ैल रमिया की ऐसी वुरी मौत होगी कि हाँ··· सड़ती न फिरी, तो मेरा नाम वदल देना !"

उस समय लाला धनपतराय मौन वैठा हुआ था। उसने वात सुनी, तो कहा—"मेहतो ! इन वात से कोई लाभ नहीं। काम की वात करो। देखो, रात जा रही है। वाहर गीदड़ वोल रहे हैं।"

मेहतो ने कहा—"गीदड़ तो सरे-शाम वोल पड़ते हैं, लाला जी !"

लाला ने कहा—"पर वुलाया किसलिए है, वह कहो !"

मेहतो ने कहा—वह वात अव करना वेकार है। तुम्हारा रुख वदला हुआ है।"

लाला ने कहा—"मेरा रुख वदला है या नहीं, पर एक वात सुन लो कि तुम रमिया का अव कुछ नहीं विगाड़ सकते। यदि उसे मार भी दिया, तो जान लो, उसके नाम की कीली इस गाँव में सदा के लिए गड़ चुकी है। फिर तुम तो क्या, तुम्हारी औलादें भी इस गाँव में नहीं पनप सकेंगी।"

पटवारी ने कहा—"यह कैसे समझ लिया, लाला जी !"

लाला ने कहा—"यह समझने का भी एक कारण है। कहूँगा, तो तुम हँसोगे। पर सचाई यही है कि रमिया ने गाँव के हर नौजवान और हर स्त्री के दिल में अपना स्थान बना लिया है। तुम अगर अपने घर की औरतों से पूछोगे, तो वे भी यही कहेंगी। मैं कहता हूँ कि तुम दम्भ छोड़ दो। चलती हुई हवा का रुख पहचान लो।। देखो तो सही, आदमी बदल रहा है। उसकी निगाह बदल रही है। उसके साथ जमाना भी बदल रहा है। इस चलती हुई तेज हवा में हमा-शुमा क्या, जाने कितने ऐसे भी उड़ गये हैं जिनके सामने सिर झुकते थे, जिनके नाम की धाक थी। कल ही तो आया है मेरा लड़का शहर से, कहता था, सभी राजे-महाराजे गद्दी से उतार दिये गये, वे देश और समाज के नौकर बन गये!"

मलखान ने कहा—"बेशक, यही बात है। आज तो सभी-कुछ बदल रहा है। पुरानापन क्या दिखाई देता है!"

जोधराम मेहतो ने जम्हाई ली और कहा—"तो लगता है, रमिया ने सभी का सिर झुका दिया, कायर बना दिया!"

लाला ने कहा—"मेहतो! सेवा ऐसी ही चीज है। रमिया ने कष्ट उठाया है, लोगों के मन का जहर पिया और अपने मन का अमृत मुक्त-भाव से बाँट दिया। तुमने उसके साथ जो-कुछ किया, क्या वह थोड़ा है!"

वहाँ पर उपस्थित रणवीर नाम के व्यक्ति ने कहा—"मेहतो! तुमने अच्छे साथी नहीं बनाये। तुम्हारा पक्ष तो लाला निर्बल कर रहा है!"

लाला ने बात सुनी, तो खड़ा हो गया। वह तमक कर बोला—"हाँ, तुम आये हो तो बलवान कर दो, मेहतो का पक्ष! इन्हें जीत दिला दो!"

उसी समय पटवारी और मलखान भी खड़े हो गये। वे घर चल दिये। मेहतो जोधराम चकित होकर उन्हें देखता रह गया।



पच्चीसवीं बात

इधर देर से माला और हरदेवा का मिलन नहीं हो रहा था। कदाचित् उन दोनों के ही मन में इस प्रकार का विचार नहीं आ रहा था कि वे आपस में मिलें और अपने साथ घटित घटनाओं का विश्लेषण करें। लेकिन एक दिन जब संध्या हुई, गाँव में दिये जले, तो आसमान में निकलते हुए चाँद के उजियारे में हरदेवा गाँव में आया। कदाचित् उसको नगर में ही इस बात का पता चल गया था कि माला गाँव में है। फलस्वरूप, गाँव में आते ही, वह माला के यहाँ पहुँचा। वह घर में थी। हरदेवा को देखते ही, उसने हर्षित होकर हरदेवा का स्वागत किया और कहा—"मैं समझती थी कि तुम नहीं आओगे। इस माला से तुम भी नहीं मिलोगे!"

हरदेवा ने कहा—"मैं इस बीच में अधिक व्यस्त रहा। नगर में मेरा काम बढ़ गया है।" यह कहते हुए उसने चाँद की ओर देखा। तभी बोला—"आओ, किसी खेत के किनारे बैठेंगे। लगता है कि खेतों में केशर के थाल फैले हुए हैं। चारों ओर सरसों फूली है।"

माला ने मकान बन्द कर दिया। वह चल पड़ी। अपने घर से दूर, एक खेत के डौले पर पहुँचकर माला हरदेवा के साथ बैठ गई। तभी हरदेवा ने उसकी ओर देखा। वह खेत से सरसों का एक फूल तोड़कर बोला—"तो हाँ, यह तुमने कैसे समझ लिया कि मैं नहीं आऊँगा।"

माला ने कहा—"मेरा यह सोचना सही था। बोलो, क्या उचित नहीं था?"

हरदेवा उस समय गम्भीर थी। वह सरसों से फूल को तोड़-मरोड़ रहा था। माला ने क्या कहा, यह उसने सुन तो लिया, पर अपना मत नहीं दिया।

किन्तु माला फिर बोली—"हरदेवा मेहतो! तुम्हारा इस माला के पास न आना ठीक है। देखती हूँ, इसी में मेरा और तुम्हारा भला है।" उसने अपनी बात कहने के साथ साँस भरी और फिर कहा—"गाँव के लोग किन-किन बातों पर झगड़ा करते हैं, इन्सान के प्राण छीनना चाहते हैं, उसे देख कर तो मुझे लगता है कि यहाँ पर इन्सान नहीं बसते, भेड़िये और खूँख्वार जानवर रहते हैं;

आदमी को खाते हैं और उसकी हड्डियाँ चबाते हैं !"

इसी बीच में हरदेवा ने सरसों का दूसरा फूल तोड़ लिया। वह उसके भी टुकड़े करने लगा। माला बोली—"यहाँ जातियों में भेद है! व्यक्तियों में भेद है! आकाश-पाताल का अन्तर है। बताओ, इतनी गहरी खाई को क्या सहज में पाटा जा सकता है—न, मेहतो! कम-से-कम मेरे-तुम्हारे बस की यह बात नहीं। इस जन्म में नहीं; इस गाँव की धरती पर नहीं!"

हरदेवा बोला—"माला देवी! इस धरती पर सभी-कुछ है। स्वर्ग भी है। और नरक भी है!"

माला ने अपने स्वर पर जोर देकर कहा—"परन्तु इस गाँव में नहीं··· यहाँ बिलकुल नहीं!"

उसी समय हरदेवा ने माला की ओर देखा और ऊपर आकाश की तरफ अपना मुँह उठा दिया। उसी ओर देखते हुए वह बोला—"यह रोग आज का नहीं है, माला देवी! बहुत पुराना है। सदियों से सड़ता हुआ चला आया है। पुरखों ने इस सड़न में आनन्द पाया। उन्होंने ही इसका निर्माण किया।" उसने हमारे कहा—"हिन्दू तो दूसरे जन्म को मानते हैं ना, तो जितने आज ठाकुर या ब्राह्मण हैं, कल को वही डोम या चमार बन सकेंगे। आज जो दूसरों को सताता है, रुलाता है, पीड़ा देता है, कल स्वयं भी वह कष्ट पा सकता है!"

माला ने जैसे हरदेवा की बात को पसन्द नहीं किया। उसने कष्ट से कहा—"कल की बात को कौन जानता है, मेहतो! बात आज की है, इस जीवन की है।" वह बोली—"मैं भूल नहीं सकती कि मेरे पड़ोस का एक परिवार बीमार पड़ा, पर जाड़ों-भरी रात में उसके बदन पर ओढ़ने के कपड़े भी नहीं थे। उस परिवार के सदस्य बीमार पड़कर भी जाड़े से ठिठुरते ही रहे और उसी अवस्था में मर गये।" यह कहते हुए माला का स्वर काँप उठा। जैसे उसके मानस का उद्वेग बरबस ही उमड़ आया। उसमें कम्पन पैदा हुआ। तभी उसने कहा—"मेहतो! उस परिवार के लोग भूखे भी मरे और नंगे भी। मैं उस देखी-सुनी वेदना को आजन्म नहीं भूल सकती। वह कसक जब भी मेरे मानस में जागती है, तो मुझे बरबस ही, पागल बना देती है। मेरी आत्मा में एक अजीब प्रकार की टीस पैदा होती है। लगता है कि इस समय भी मेरी आँखों के सामने वह वृद्धा पड़ी है, वृद्ध पड़ा है। वे दोनों कराह रहे हैं, तड़प रहे हैं! यह खिल-खिलाती हुई मौत उनके प्राणों की डोर को अपने तेज दाँतों से पकड़ कर खींचे लिये जा रही है··· वह भयावनी और डरावनी मौत···"

हरदेवा ने कहा—"माला! भावना में मत बहो! वास्तविकता पर आओ।

समाज की नंगी अवस्था को देखो। अपनी दृष्टि विस्तृत बनाओ।" वह बोला—"तुम अपनी एक जाति की बात लेती हो, पर मैं समूचे देश की बात कहता हूँ। कि वह नंगा और भूखा है···अर्थ-लोलुप इन्सान अपने स्तर से गिर चुका है!"

माला ने कहा—"मैं सभी-कुछ देखती हूँ, मेहतो! समझती भी हूँ। अभी उस दिन की तो बात है कि कड़कड़ाती सर्दी में, पड़ती हुई वर्षा के बीच जब पल्टू की लड़की सिर पर टोकरा रखे काँपती हुई जा रही थी, तो एक ठाकुर ने ही उसे गाली दी और उसके बाप-दादों की कुली उछाल दी। मैं पूछती हूँ कि अगर वह किसी ठाकुर की लड़की होती तो क्या कोई ऐसा कह सकता था? पर वह तो ग़रीब अन्त्यज की लड़की थी ना! मिट्टी का ढेला···रास्ते का कंकड़! सच, जैसे पत्थर कि कोई भी उस पर ठोकर मार दे, उस पर थूक दे, हरदेवा मेहतो!"

हरदेवा मौन रह गया, जैसे जड़। उसने अनुभव किया कि आज माला के दिल में आग लगी है, यह तड़प रही है। इसलिए आग ही उगल सकेगी। वह समाज के जिस अपराध को स्वयं देखता था, अनुभव करता था, जब उसी को माला ने अपनी वाणी के द्वारा कहा—तब उसमें कोई नवीनता न पाकर भी, उसने इतना मान लिया कि माला सच कह रही है···यही कहेगी! जब इसके हृदय में आग है, तो···

तभी माला ने फिर कहा—"मेहतो! इस बीच मैंने बहुत-कुछ देखा और समझा है। पढ़ भी लिया है। मैं इस बात को भी नहीं भूलूंगी कि समाज के निम्न वर्ग से सहानुभूति रखने के कारण ही तुम्हें मौत के मुँह में जाना पड़ा था। सचमुच, तुम्हें बड़ा कष्ट हुआ। तुम जिस आँधी में उड़े थे, वह भयंकर थी। वह तुम्हें यहाँ से जाने कहाँ ले जा सकती थी!"

हरदेवा ने कहा—"माला! तू आसमान की ओर देख, चाँद की ओर। देख तो, चाँद हंस रहा है। वह तुझे भी हँसाने की बात कह रहा है।"

किन्तु माला ने चाँद की ओर नहीं देखा। उसने ज़मीन की ओर ही अपनी निगाह किये हुए कहा—"मेहतो! मैं चाँद से बराबरी नहीं कर सकती। उसके समान हँस भी नहीं सकती।" तभी ठहर कर वह बोली—"पर देखते हो, इस चाँद के अन्दर भी आग है। दूर से ही कान्त लगता है। पर पास में···उस चाँद की दुनिया में···"

हरदेवा बोला—"उसकी चाँदनी में तो शीतलता है, माला! वही तुम्हारे पास।" उसने कहा—"सच, आज मैं थका था, दूर से आया था। देर से मैं तुमसे मिलने की बात सोचता था। बहुत समय से तुम्हारा कोई पत्र भी मुझे

नहीं मिला। आज अवसर की बात कि तुम्हें यहां पा गया।"

माला ने कहा—"हरदेवा बाबू! मेरा-तुम्हारा न मिलना ही उचित है। यही शोभनीय है! समाज हमारा मिलन पसन्द नहीं करता।"

बात सुनी, तो हरदेवा हतप्रभ रह गया। यद्यपि उसे आशंका थी कि माला के हृदय में कोई बात है, परन्तु वह बात इतनी भारी है और उसके प्रति वह इतनी कठोर बन चुकी है, इसका उसे पता नहीं था। तभी वह बोला—"सुना है, कभी मेरी माँ ने तुम्हें बुलाया था। कुछ कहा था उसने?" उसने कहा—"माला देवी, हम-दोनों जब एक दिन मिले तो निःसन्देह, हमारे पास एक-दूसरे के लिए सहानुभूति थी, ममता थी। पर आज...शायद अब वह तुम्हारे पास नहीं रही!"

माला ने कहा—"बाबू, तुम्हारी माँ ने मुझे बुलाया था। मेरे मुँह पर ही साफ़ कहा था कि मैं तुम्हारे परिवार का धर्म न बिगाड़ूँ और तुम्हें पथ-भ्रष्ट न करूँ।"

"क्यों? किस प्रकार?" एकाएक हरदेवा ने पूछा।

उस समय माला का स्वर कठोर बन गया। उसकी वाणी में क्षोभ भरा था। उसने जैसे झल्लाकर कहा—"सबकी तरह तुम्हारी माँ की भी यही बात थी कि मैं तुमसे दूर रहूँ, तुम्हें नापाक न करूँ!" माला ने साँस भरी और कहा—"सो, मैं कहती हूँ मेहतो, तुम मेरे पास न आया करो। मैं सुनते-सुनते पागल हो गई हूँ। अब तो सचमुच थक चुकी हूँ। जिसे देखो, वही कहता है कि मैं और तुम...तुम और मैं...हे राम! कैसी आपदा है। मुझे लगता है कि मेरा एक वह भी बड़ा पाप हुआ कि डोम जाति के घर में पैदा होकर भी लड़की बनी। औरत के रूप में आ गई, इस धरती पर! और यह धरती है,...ओह! जैसे आग उगल रही है। जहाँ पैर रखती हूँ, वहीं जलते हैं। तलवे फुँके जाते हैं। इस धरती के पेट से निकलते हुए अंगारे मेरा रोम-रोम फूंके दे रहे हैं...या ठाकुर जाति...ये दम्भी लोग...हे राम! मौत भी तो नहीं आती, इन लोगों को। धर्म और जाति का नारा लगाते हैं, अमृत में विष घोलते हैं, ये सब के सब!"

सचमुच, वह समय जैसे माला के साथ, हरदेवा के लिए भी कठोर बन गया था। वह जिस शांति की खोज में उस खेत पर जा बैठा था और चांद की चांदनी देखने लगा था उसने सहज ही अनुभव किया कि यहाँ भी शांति नहीं है। माला भी इस अवस्था में नहीं कि उससे बात की जाय। उसके मानस में रोष भरा था। ऐसा लगता था कि जैसे माला के चारों ओर आग फैली हुई है। या, दमन हो रहा है और उसमें माला स्वयं फंकी जा रही है। फलस्वरूप, उस समय हरदेवा स्वयं अपने-आप में अपराधी बन गया। वह बरबस ही, अपने मन की बात को रोक कर सोचने

लगा कि क्या माला की बात में संगति नहीं है ? सत्य नहीं है ? और हरदेवा के मन में उस समय यह बात थी कि वह अन्तिम रूप से माला से बात कर लेना चाहता था। इसीलिए वह नगर से आया था। हरदेवा यह निश्चय कर लेने को आतुर था कि क्या सचमुच, हम एक-दूसरे के जीवन में बँधेंगे, हम जीवन में एक-दूसरे के हो सकेंगे···समाज से लड़ सकेंगे ? हमारा दाम्पत्य-जीवन सुखपूर्ण बन सकेगा ? यह बातें हरदेवा देर से अपने मन में सँजो रहा था। उन्हें प्रकृति के खुले रूप के समक्ष बैठ कर माला से तय कर लेना चाहता था। क्योंकि एक बार उसी ने माला से कहा था कि वे दोनों साथ रहेंगे। जीवन में बँध कर रहेंगे। प्रेम से पगे और एक-दूसरे के प्रति सहानुभूति के बन्धन में बँधे हुए अपने जीवन को बिता देंगे। किन्तु वह समय दूर हो गया था। तब से ना हरदेवा ने कुछ कहा था ना माला ने। दोनों अपने-अपने कार्य में रत रहे। दोनों को ही एक-दूसरे के मन की बात समझ लेने का अवसर नहीं मिला था। किन्तु उस दिन जब उसे अवसर मिला और माला अचानक ही उसे मिल गई, तब वह ऐसी अवस्था नहीं देख सका कि माला से, अनुभूति की या आत्मीयता की बात कहे। क्योंकि माला के हृदय में प्रतिशोध की आग थी। वह नीचे से ऊपर तक प्रतिक्रियावादी बनी थी। इसलिए, हरदेवा की बात मन में ही रह गई। वह अपनी बात को भूलकर इस विचार में डूब गया कि माला क्यों इतनी उग्र है, वेदनामयी है। यह समझने का वह एक बार फिर प्रयत्न करने लगा। कदाचित् इसका एक कारण यह भी था कि हरदेवा को इस बात का पता लग गया था कि ज़मींदार और उसके साथी इस बात के लिए सचेष्ट थे कि हरदेवा और माला का सम्बन्ध स्थापित न हो। वे लोग हरदेवा की माँ के अतिरिक्त माला के जाति-भाइयों को भी फुसला रहे थे। एक तीर से दो निशाने साधने की परम्परा वे भी स्थापित करना चाहते थे। रमिया और उसके साथियों का मिशन फ़ेल हो, यही उनकी हार्दिक इच्छा थी। प्रतिशोध की आग से वे जहाँ स्वयं जल रहे थे, दूसरों को भी जला देने की बात सोचते रहते थे। ज़मींदार ने हरदेवा की माँ को एक बड़ा घर बताया था और विवाह पर बहुत-सा रुपया भी दिलाने का आश्वासन दिया था।

तभी अपने मन की दुरावस्था के अन्तराल में डूबी हुई माला ने कहा—"मेहतो! मेरी प्रार्थना है कि तुम मेरे पास न आओ, तो अच्छा है। मैं ज़माने की बात सुन सकती हूँ, पर तुम्हारी माँ की नहीं। दूसरे लोग तो ताना देते हैं, उपहास करते हैं, पर तुम्हारी माँ तो आँखों में आँसू भर कर अपनी बात कहती है। वह मुझसे तुम्हारी भीख माँगती है। एक बार तो तुम्हारी माँ ने धर्म

के नाम पर और जाति के नाम पर यहाँ तक कहा कि मैं तुम्हारे समीप न आऊँ।" यह कहते हुए माला ने साँस भरी। वह ऊपर चाँद की ओर देखकर बोली—"महतो! मैंने समझ लिया है कि मेरे और तुम्हारे बीच में बहुत दूरी है। लगता है कि बीच में पहाड़ हैं, नदियाँ हैं।" उसने अपने स्वर पर झटका देकर कहा—"हाँ, एक दूसरी दुनिया ही हमारे बीच में खड़ी है। ऐसे तो हमारा मिलन नहीं हो सकता। मैं तुम्हारी माँ के आँसुओं का अनादर नहीं कर सकती। वे माँ के आँसू हैं, कठोर भी हैं और प्रीत-भरे भी। जानती हूँ कि वे आँसू अपने पुत्र के लिए हैं। वे आँसू अपने पुत्र के जीवन को सँवारना चाहते हैं। मेरे और तुम्हारे बीच में समुद्र बनाने पर तुले हैं। वे मुझे तुमसे दूर रहने का आदेश देते हैं। निश्चय ही वे आँसू अपने अन्तराल में मुझे डुबो देना चाहते हैं।"

हरदेवा इतना सुनकर भी मौन था। वह उस समय खेत की ओर देख रहा था। पूरे खेत में फूली हुई सरसों, सचमुच ही, जैसे केसर का बाग बनी थी। वह सरसों हँस रही थी। सिर के ऊपर निकला हुआ चाँद भी मुस्करा रहा था। परन्तु हरदेवा का मन कठोर था। वह अतृप्त मानव के समान दुर्दमनीय बना हुआ था।

तभी माला ने कहा—"महतो! इस जड़ता का, समाज की इस कठोरता का कभी अन्त होगा, मैं नहीं जानती! वह कस्बे का पादरी जब भी आता है, कोई-न-कोई बात इस इन्सानी दुनिया की सुना जाता है। वह पादरी है न, अपने मिशन का उपदेशक; इसलिए उसने अनेक धर्मों का अध्ययन किया है। वह किसी समय ब्राह्मण था। बचपन में ही ईसाई बन गया था। कहता था कि मैं अनाथ था। माँ-बाप मर गये थे। किसी भी सम्बन्धी या जाति-भाई ने गले नहीं लगाया। तब अकस्मात् वह ईसाइयों के अनाथालय में पहुँच गया। वहाँ पढ़ाया गया, बाद में नौकरी पर लगा दिया गया। अब वह दो सौ रुपया वेतन पाता है। इस इलाके में अपनी संस्था का प्रधान-उपदेशक है—अपने काम के लिए पूरा ईमानदार। कहता था कि मैंने अपने जीवन में कई हजार व्यक्तियों को ईसाई बनाया। उनमें बहुतों का जीवन सुधर गया। जिन्हें लोग आँख उठाकर भी नहीं देखते थे, उनके समक्ष ही, ठाकुर और ब्राह्मणों को सिर झुकाने के लिए विवश होना पड़ा। अभी एक दिन कहता था कि उसके हाथों बनाया गया एक ईसाई बालक इतना चतुर निकला कि खूब पढ़ा। अंग्रेजों के समय उच्च अधिकारी बना। अब सबसे बड़ा नेता है। देश की धारा-सभा का सदस्य है। वहाँ ईसाइयों का पक्ष लेता है। उनका प्रतिनिधि है। वह लड़का भी किसी भंगी के घर में पैदा हुआ था।"

उसी समय, हरदेवा चौंक गया और बोला—"तो···हाँ, माला, क्या तेरा भी ईसाई बनने का इरादा है। रास्ता तो साफ़ है। और तेरे लिए उपयुक्त भी है। मैं समझ गया कि उस पादरी ने तेरे मस्तिष्क में भी तूफ़ान पैदा किया है।" उसने कहा—"राम-कृष्ण की औलाद अब ईसा का अनुसरण करेगी, तभी तो ईसाइयों की संख्या में वृद्धि कर सकेगी! तूने अब तक जो अपने समाज की बुराई की, वह तो मेरी समझ में आई, पर यह जो तूने दूसरे धर्म की हिमायत ली, यह सचमुच ही, मेरे लिए विचार करने योग्य बात बन गई।" वह फिर बोला—"माला, अपना घर किसी को भी अच्छा नहीं लगता। दूसरे का घर साफ़-सुथरा और सलीकेदार लगता है। और यह तो मैं भी जानता हूँ कि ईसाइयों के पास पैसा है। उन्होंने पैसे और शासन के बल पर ही, इस ग़रीब देश के नागरिकों को ईसाई बनाया है—यह बात इतिहास-प्रसिद्ध है। वे इसी प्रकार संसार में अपना धर्म और शासन फैलाने में समर्थ बने हैं। इतिहास कहता है कि एक दिन मुसलमानों ने भी यही किया था। उन्होंने तलवार के बल पर अपने धर्म का विस्तार किया था। उसी धर्म के लिए उन्होंने भारत में खून बहाया। मासूम बच्चों को दीवारों तक में चिनवा दिया···अंग्रेज़ यहाँ आये, तो उनका ईसाई धर्म भी इस देश में फैल गया चूँकि उन्हीं का शासन था, कोई कुछ नहीं कह सकता था। उनका रास्ता साफ़ था।" उसने अपने स्वर पर झटका दिया और कहा—"माला, यह धर्म, मज़हब, आज साम्राज्यवादी और सामन्तवादी लोगों की वस्तु है, आम जनता की नहीं। जन-साधारण को तो रोटी चाहिए, शरीर के लिए कपड़ा। यह जाति-धर्म पीछे है।" यह कहते हुए हरदेवा खड़ा हो गया। उसने कहा—"तुम कहीं जाओ, कहीं रहो, मेरे लिए केवल यही सन्तोष का विषय होगा कि तुम ठीक हो, जीवन में शान्त और सुखी हो।" यह कहते हुए हरदेवा वहाँ से चल दिया।

माला ने चाहा कि हरदेवा को रोके और उसे साथ ले चलने की बात कहे। पर उसका साहस नहीं हुआ। चाँद की ओर उसने देखा और नितान्त उद्वेग-भरे स्वर में एकाएक कहा—"अरे, हरदेवा!"

छब्बीसवीं बात

गाँव के मन्दिर पर धूनी रमाने वाला बाबा प्रस्तुत कथा के चित्र में कहीं भी प्रगट नहीं हुआ। इस प्रकार का प्रदर्शन उपयुक्त भी नहीं था क्योंकि वह कभी सम्मुख होकर क़िसी मामले में प्रत्यक्ष भाग नहीं लेता था। रमिया के समान, उसने सभी को उपदेश दिया। किन्तु उन्हीं दिनों रमिया की मनःस्थिति को देख, उसे बरबस ही, अपने छिपे हुए रूप को स्पष्ट करना पड़ा। एक बार फिर गाँव में भयंकर रूप से अशांति बढ़ी। रमिया बार-बार सरपंची के पद से इस्तीफ़ा देना चाहती थी। उसके मन में यह बात जम गई कि झगड़े की जड़ वह स्वयं है। यदि वह पंचायत में न रहेगी तो झगड़ा मिट जायेगा। किन्तु उसके सहयोगी यह मानने के लिए सहमत नहीं थे। आधे से अधिक गाँव का समाज रमिया की इस बात को नहीं मानता था। उस समय गाँव में चोरी की वारदातें भी बढ़ गई थीं। आये दिन किसी के बैल खुलते और किसी का कोई सामान चोरी जाता। किन्तु जिस दिन जोधराम के चार बैल खरक से खोल लिये गये, तो उसकी परेशानी को देख, मन्दिर पर बैठे हुए बाबा ने जोधराम को सामने आते देख उसे टंकोरा और पास बुलाकर धूनी के पास बैठने को कहा। उस समय बाबा ने स्नेह भाव से जोधराम को लक्ष्य किया और कहा—"मेहतो! सुना कि तुम्हारे बैल खुल गये!"

जोधराम ने कहा—"जी, महाराज!"

बाबा ने कहा—"तो मेहतो! अब तुमने अनुमान लगा लिया होगा कि दूसरों को अपने गये माल से कितनी पीड़ा मिली होगी। शायद तुमने इस बात को भी अनुभव किया होगा कि रमिया के खड़े खेत में आग लगने और गाय के मरने से उसे और उसके पति जग्गू को कितनी व्यथा प्राप्त हुई होगी।" बाबा बोला—"मेहतो! गाँव की अवस्था बिगाड़ कर तुम अपनी दशा भी खराब कर रहे हो। लगता है कि तुम बहुत भागे हो। क्या अब भी नहीं थके? तुम्हारा साँस नहीं फूला? भाई, अब रुको! वास्तविकता को समझो। तुम्हारे बैलों का चला जाना इस बात का प्रमाण है कि जो कुछ तुमने किया, उसकी प्रतिक्रिया आरम्भ हो गई है। वह तुम्हारे सामने आने लगी है।"

इतनी बात सुनकर जोधराम चिढ़ गया—"महाराज ! यह गाँव की बात है, तुम्हें क्या लेना-देना ! यह हमारा ज़ाती मामला है। जिसने बैल चुराए है, मैं उसे ज़िन्दा नहीं छोड़ूंगा।"

बाबा ने कहा—"जोधराम ! मैं साधु हूँ। अन्धे को राह दिखाना मेरा धर्म है। तुम्हारे गाँव से मैंने इतना लिया, तो क्या मैं कुछ भी न दे सकूंगा ?"

उस समय जोधराम के हाथ में बन्दूक थी। वह कहीं जा रहा था। बाबा की बात सुनी तो वह और अधिक आग-बबूला हो उठा। उसने बन्दूक का हत्था नीचे ज़मीन पर टेक दिया और बाबा को घूर कर बोला—"महाराज ! लगता है कि गाँव के लोगों ने तुम्हारी अच्छी पूजा की है। खूब पकवान और मिठाई खिलाई हैं। सुलफ़े भी उड़वाये हैं !"

बाबा ने तमक कर कहा—"क्या मतलब !" वह बोला—"मेहतो ! मैं समझ गया कि तू अन्धा ही नहीं बना, पागल भी हो गया है ! तेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। देखता हूँ, तेरा पतन आरम्भ हो चुका है !"

इतना सुनना था कि जोधराम के मन का रोष ज्वाला के समान फूट पड़ा। जैसे बारूद के ढेर में पतंगा लग गया। उसने तुरन्त ही बन्दूक उठा ली और कहा—"महाराज ! बस ! आगे न बढ़ना। मैं तुम्हें गोली का निशाना बना दूँगा।"

किन्तु इतनी देर में तो गाँव के अन्य व्यक्ति भी वहाँ इकट्ठे हो गये थे। जब जोधराम ने बाबा को गोली मार देने की बात कही, तब सभी के कान खड़े हो गये। एक जवान लड़के ने कहा—"मेहतो ! बाबा को आँख दिखाई, तो अच्छा न होगा। साधु का सम्मान करना सभी के लिए आवश्यक होता है।"

जोधराम ने इतनी बात सुनी, तो उस लड़के को घूरा जैसे वह अप्रत्याशित रूप से उसके प्रति अपराध कर रहा था।

लेकिन तभी, बाबा ने परिस्थिति को सम्भाला। वह सीधा जोधराम के निकट जाकर बोला—"ठाकुर ! यह तो मैंने समझ लिया कि तेरे हाथ में बन्दूक है, जो आग उगलती है, आदमी को मारती है। पर भैया, तूने कभी यह भी सोचा कि इस हाथ-भर के लोहे से भी बड़ी कोई शक्ति है। वह तुझसे अधिक क्रोध करना जानती है।"

जोधराम ने कहा—"साधु महाराज ! मुझे उपदेश मत दो। मेरे दिल में दर्द है। मेरा नुकसान हुआ है। मेरा एक बैल हज़ार रुपये का था। चार हज़ार की मुझे चपत लगी है।"

साधु ने कहा—"और तेरे कारण गाँव-भर का कितना नुकसान हुआ है, यह भी समझा तूने ! मुझे तुझी को उपदेश देना है। मुझे तेरा ही काल समीप

दीखता है। मैं साधु हूँ। मुझे तुझसे कोई वैर नहीं। गाँव के छोटे-बड़े के समान, मुझे तुझको भी प्यार करने को मन करता है। तू भी मेरा है। तू भी भगवान का है। बोल! यह पाप जो तूने रचा है, इसका कहाँ अन्त है, कभी सोचा? समझा तूने कि ऐसे तो यह गाँव नष्ट हो जायगा। आज हर कोई तुझे कोसता है, तेरा बुरा चाहता है, क्यों? किसलिए?"

जोधराम ने कहा—"मैं किसी का बुरा नहीं करता।"

साधु बोला—"जोधराम! तू मन्दिर पर खड़ा होकर ऐसा कह रहा है। भगवान के दरबार में भी झूठ बोल रहा है!"

जोधराम ने कहा—"महाराज! जो स्वार्थी हैं, उन्हीं को ऐसा दीखता है। ज़माना बदला है, तो उसके साथ सभी कुछ बदल गया है।" यह कहते हुए जोधराम वहाँ से चल दिया। वह वहाँ खड़ा नहीं रह सका।

एक व्यक्ति ने कहा—"महाराज! तुमने बहुत कहा। मेहतो को ठीक-ठीक सुनाया।"

साधु ने कहा—"मुझे यही कहना था। मेरा कर्तव्य था।"

दूसरे व्यक्ति ने कहा—"अब मेहतो की प्रभुता नहीं रही। साँप का विष निकल गया। ज़मीन में फन मारता है, फड़फड़ाता है!"

साधु ने इतनी बात सुनी, तो कड़वे भाव से मुस्करा दिया। उसी समय रलिया कन्धे पर लाठी रखे उधर आ निकला। खड़े हुए आदमियों ने उसे सारा क़िस्सा सुना दिया। एक बोला—"रलियाराम! अच्छा हुआ कि तू नहीं था, नहीं तो झगड़ा हो जाता। आज फ़िसाद बढ़ जाता। बाबा ने ठाकुर का पारा पूरी डिगरी पर पहुँचा दिया था।"

रलिया ने हँसकर कहा—"थर्मामीटर गर्मी पाकर जैसे ऊपर चढ़ जाता है, वैसे ठण्डक पाते ही नीचे भी गिर पड़ता है। आज के ठाकुरों की भी यही अवस्था है। पुरानी अकड़ अभी मौजूद है। राणा प्रताप के खानदान का खून नसों में बोलता है।" यह कहते हुए उसने जोर का ठहाका मार दिया।

किन्तु बाबा ने अप्रतिभ बनकर कहा—"न, रलियाराम! यह हँस कर उड़ा देने की बात नहीं है, विचारने की है। ऐसे क्या इन्सान की ज़िन्दगी चलती है! देख तो, इस गाँव की दशा कैसी बन रही है!"

रलिया ने कहा—"महाराज! तीस साल से ऊपर तो मुझे हो गये, इस गाँव में पैदा हुए। बचपन से यही देख रहा हूँ। मैंने गाँव में झगड़ा ही देखा, प्यार नहीं देखा। मुझे तो लगता है कि बैल के साथ काम करने वाला किसान भी बैल सरीखा बन गया है!

एक व्यक्ति वोला—"यह तो रलिया ठीक कहता है।"

रलिया ने कहा—"शहर वाले इसी कारण हमें देहाती कहते हैं। जिसका मतलव है—मूर्ख, गधे!"

एक वृद्ध ने कहा—"और शहर वाले हमारे अन्न पर ही अपनी जिन्दगी चलाते हैं।"

रलिया ने कहा—"तो गाँव वाले ऐहसान नहीं करते! शहर के लोग चिट्टाशाही रुपया फेंकते हैं, वे तुम्हें रुपया चटाते हैं।"

वावा ने कहा—"रलियाराम! गाँव के आदमी देवता होते थे, आज भी हैं। किन्तु कुछ नर-पिशाचों ने यह चित्र विकृत कर दिया है!"

रलिया फिर हँसा—"वही तो गन्दगी फैलाते हैं, वावा!"

वावा ने वात सुनी, तो गम्भीर वन गया। वह एक अचरज-भरी निगाह से सामने खड़े आदमियों की ओर देखने लगा।

रलिया वहाँ से चल दिया। शेष आदमी भी हट गये। वावा फिर अकेला रह गया। उसके मन में जोधराम की वह गोली मार देने वाली वात वार-वार घूम रही थी, जैसे ऐंठन-सी पैदा कर रही थी। निःसन्देह, ऐसी वात वावा ने वहुत दिनों के वाद सुनी थी। वह उसके स्वभाव के अनुकूल नहीं थी क्योंकि वह स्वयं मिज़ाज का क्रोधी और रूखा था। उस वृद्धावस्था में भी उसके मन में क्रोध आता था। लेकिन जिस व्यक्ति ने उससे वात कही, वह सचमुच ही वावा की दृष्टि में दया का पात्र वन गया था। क्योंकि वह स्वयं ही अपनी कब्र खोद रहा था। जिस पेड़ के गुद्दे पर वह वैठा था, उसी को काट रहा था। वावा को इस वात का पता था कि वह विशाल मन्दिर जोधराम के पुरखों ने वनवाया था। उन लोगों की धार्मिक भावना थी, धर्म में श्रद्धा थी। किन्तु वावा की दृष्टि में जोधराम म्लेच्छ था। वह धर्म से विमुख होकर अपना पतन कर रहा था। इस प्रकार अपने मन की ऊहापोह में वावा ने उस दिन का काफ़ी समय निकाल दिया। जव दिन ढला, तो वावा देखता है कि जोधराम फिर कहीं से लौटा चला आ रहा है। उस समय मन्दिर पर सन्नाटा था। वावा के अतिरिक्त वहाँ और कोई मनुष्य नहीं था। इसलिए जोधराम सीधा वावा के पास आकर वोला—"महाराज! आज तुमने मेरा दिन खराव कर दिया। जिस काम के लिए गया था, वह नहीं हुआ!"

वावा ने सामने जोधराम को खड़ा देखा तो मुस्कराया और वैठने को कहा।

जोधराम वोला—"गाँव के आदमियों के समक्ष आपने जाने क्या-क्या कहा। मुझे भी जाने क्या-क्या कहने के लिए वाध्य किया!"

बाबा ने कहा—"मेहतो ! तुमने जो कुछ कहा, मुझे पता है। तुम्हें क्रोध था और दम्भ था, इस बन्दूक का ! ऐसी अवस्था में आदमी भला क्या सोचता है ! मूर्ख ही बनता है !"

जोधराम ने कहा—"साधु महाराज ! लोगों ने मेरी नींद हराम कर दी है। देखता हूँ कि जिन्दगी बरबाद हो रही है।"

साधु ने कहा—'पर मैं कहता हूँ कि तुम अब भी सँभलो, चेतो। पैसे का नुकसान बड़ा नहीं होता। एक जिन्दगी अगर ग़लत रास्ते पर पड़ जाय, तो सारी आयु ही भटकी रहती है। आदमी का जीवन क्या बार-बार मिलता है ! पुण्य के दरिया में हाथ धोना सभी के लिये हितकर होता है।" यह कहते हुए बाबा का चेहरा अत्यन्त गम्भीर बन गया। उसी अवस्था में उसने कहा—"देखो मेहतो ! तुम यह न समझना कि इस गाँव में मेरा कोई स्नेही नहीं है। न, भैया ! इस साधु को उस घिनौनी और मन को कष्ट देने वाली परम्परा से क्या लेना-देना ! इसके लिए सभी एक हैं, इसके अपने हैं। रमिया इसकी है, तो तू भी इसका है।" यह कहते हुए बाबा फिर रुक गया। वह सामने के वृक्ष पर देखने लगा। उसने फिर अपनी बात कहनी शुरू की—"मेहतो ! औरत का सामना करना तुम्हें नहीं शोभता। भला बताओ तो तुममें विशेषता क्या है ? क्या धन ? नहीं, जोधराम ! धन का मूल्य हर अवस्था में बड़ा नहीं हुआ करता ! यदि तुमने रमिया को देखकर भी नहीं समझा, तो मेरा कहना क्या सार्थक होगा ? भाई, उस गँवार औरत के पास केवल सेवा और दया की भावना ही तो है। सीधे-सादे ढंग से उसने उसी को प्रस्तुत किया। जिसमें कोई भी बारीकी नहीं।" यह कहते हुए साधु ने जोधराम की ओर देखा—"बोलो ! क्या मैं नहीं जानता कि तुम्हारे समान रमिया में न चतुराई है, न बुद्धि है। वह नितान्त निर्धन है। और अब तो तुमने उसकी कमर तोड़ दी है। उसका खेत···उसकी गाय···"

जोधराम ने कहा—"न, महाराज ! यह काम मेरा नहीं।"

महाराज ने कहा—"मेहतो ! भगवान सभी कुछ देखता है। गाँव-भर कहता है।" बाबा बोला—"मेहतो ! अब भी तुम अपनी बुद्धि से काम लो। रमिया के पास जाओ। उससे अपनी बात कहो, उसकी सुनो। तुम समझो कि तुम्हारा अस्तित्व भी तिनके समान है। झुक जाना ही आदमी की शोभा है।"

जोधराम ने कहा—"मैं रमिया से मिलूँगा। उसके पास जाऊँगा।"

"और देखो, मेहतो ! यह साधु तो आज यहाँ है, कल नहीं। फिर क्या तुम्हारे पास आयगा। तुम जिस मान-प्रतिष्ठा और धन की बात प्रायः सोचते

हो, उसका भी, अपने-आप में कोई अस्तित्व नहीं है, भाई ! छोटे-बड़े का माप-दण्ड पैसा नहीं है, ज्ञान है—मनुष्यता का ज्ञान; सेवा का ज्ञान; परमार्थ का ज्ञान। बोलो, वह क्या तुमने प्राप्त किया ?" यह कहते हुए बाबा ने साँस भरी और कहा—"रलिया के जलते हुए घर को देख, गाँव का कोई भी आदमी आगे नहीं बढ़ा। औरत बढ़ी—वह रमिया। कैसी नाक कटी इस गाँव के ठाकुरों की ! सभी को अपने प्राणों का मोह था। मानो रलिया ग़ैर था—इस गाँव का नहीं था ! और भैया, हरदेवा को पिटवाना क्या तुम्हारा काम नहीं था ? कहो तो, उसमें तुम्हें कितना नीचा देखना पड़ा ! अरे, तुम कैसे आदमी हो, जोधराम ! सच, जानवर हो—बुद्धि से शून्य ! तुमने रमिया सरीखी औरत से कई बार हार खाई। पर फिर भी, अपनी लड़ाकू प्रवृत्ति नहीं छोड़ पाते। तुम यदि उसे जीतना चाहते हो, तो उसी प्रकार के उपकारी बनो। अपना धन, अपना शरीर गाँव की सम्पत्ति समझ लो, तब तुम्हारी जीत होगी। तब देखना कि रमिया भी तुम्हारे चरणों में झुक जायगी, हार मान लेगी।"

जोधराम ने साधु की ओर देखा और मुस्कराया। उसे देख, साधु भी किंचित् हँसा। उस अवस्था में ही साधु ने कहा—"इसी का नाम जीवन है, जोधराम ! स्वयं भी हंसो, दूसरों को भी हंसाओ। कर्म-क्षेत्र के इस मैदान में, कोई बाज़ी जीतता है, कोई हारता है। अभी तक तुम हारे हुए जुआरी के समान भटक रहे हो, खिसियाए हुए फिर रहे हो ! देखो तो, ज़रा-सी बन्दूक लेकर तुम अपने मुँह से इतनी बड़ी बात कह बैठे कि गोली मार दूंगा। भला इस साधु को मार कर, तुम कौन-सी बहादुरी करोगे, भैया ! लेकिन बात तुम्हारे मुँह से निकली और गाँव में फैल गई। ज़रूर, जिसने सुना होगा, वही तुम्हें बुरा कहेगा। वह समझेगा कि जोधराम पाग़ल हो गया है, मग़रूर बन गया है। वह ऐसे दरिया में तैरने लगा है कि जहाँ से निकल नहीं सकता !"

बाबा बोला—"बन्दूक सहायक नहीं होगी। यह आदमी की समस्या नहीं सुलझाती। समय पर काम नहीं आती।"

उस समय सूरज और अधिक नीचे हो गया था। तभी जोधराम उठा और बोला—"आज आपने बहुत-कुछ कहा। मैंने भी जाने क्या-क्या सुना। धन्यवाद।"

बाबा बोला—"मेरा यही काम है, मेहतो ! मैं साधु हूँ। तुम लोगों से कुछ लेता हूँ, तो कुछ देना भी चाहता हूँ। यही रिवाज है, इस जीवन का। सभी का यही धन्धा है···तुम्हारा भी।" उसने तभी अपने स्वर पर ज़ोर दिया—"पर तुमने अभी तक इस गाँव से लिया है, दिया कुछ नहीं। तुम्हारे पुरखों ने इस

गाँव का शोषण किया है, जमींदार बन कर छोटे किसानों को, दूसरे ग़रीबों को चूसा है। देखता हूँ कि पुरखों का पाप तुम्हारे सिर पर भी बोल रहा है···उसी ने तुम्हें क्रूर और मदान्ध बना दिया है···मेरे जोवराम !"

किन्तु उस समय जोवराम का सिर झुका हुआ था। वह वहाँ से चल दिया। घर पहुँच गया। वह सचमुच ही परेशान था। एकान्त चाहता था। किन्तु घर में जाते ही, उसका पत्नी ने सामने पड़ कर आँखों में आँसू भरते हुए कहा—"तो तुम अब ऐसे भी हो गये···इतने क्रूर···साधु को गोली से मार देना चाहते थे···हे राम !"

और जोवराम मौन बना, सिर झुकाये बैठा था। जैसे सचमुच ही, वह अपने आप को अपराधी समझ चुका था···

सत्ताईसवीं बात

प्रात:काल होता कि गाँव के नर-नारी पेशाव-पाखाना करने और अपने घर का कूड़ा बाहर फेंकने निकलते। उस समय कोई रमिया को कोसता, कोई मेहतो जोधराम को। वह अवस्था दिन-पर-दिन दयनीय बन रही थी और कठोर होती जा रही थी। उसी समय की बात है कि एक दिन रमिया के कानों में बात पड़ी कि गाँव के सभी हरिजन जल्दी ही गाँव छोड़ देंगे। माला उन सब का नेतृत्व करेगी। हरिजन जल्दी ही गाँव छोड़ कर नगरों में बसेंगे और जीविका के हेतु कोई अन्य काम करने लगेंगे। इस समाचार की ध्वनि पास के कस्बे में जा पहुँची। वहाँ से ज़िले में और फिर प्रान्त में। इसका परिणाम यह हुआ कि रमिया के पास जगह-जगह से पत्र आने लगे। कुछ व्यक्ति नगर से आये और इस बात पर ज़ोर देने लगे कि ऐसा नहीं होना चाहिए। किन्तु अवस्था इतनी बिगड़ी कि आस-पास के गाँवों में बसे हुए हरिजन भी मलिकपुर के अपने जाति-भाइयों का पथ-प्रदर्शन स्वीकार करने के लिए सन्नद्ध हो गये। माला उन दिनों दूर-दूर तक की दौड़ लगाती। लोगों को उनके जीवन की वास्तविकता बताती। वह अपने समाज के नर-नारियों को उत्तेजित करती कि इन बड़ी जातियों ने हमारा नाश कर दिया है···इन्सान की कोटि से हम को गिरा दिया है···हमारा पूर्णरूप से पतन किया गया है···

रमिया और उसके साथियों को इस बात का पता चल गया था कि माला ईसाई मिशन की ओर से आर्थिक सहायता प्राप्त करके लोगों को दे चुकी है। उस वर्ग को भोजन और कपड़ा मिल रहा है। यह ऐसी परिस्थिति थी कि जिसका रमिया के पास कोई उपचार नहीं था। उसके समाज में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं था कि जो आगे बढ़कर उस विषमता का सामना करता, उस बढ़ते हुए प्रवाह को रोक पाता, उन विद्रोही हरिजनों को समझाने का प्रयत्न करता।

इस बीच में, रमिया ने इस बात का कई बार प्रयत्न किया कि वह माला को पाये और उससे बात करे। किन्तु माला उसके पास तक नहीं आती थी। उसने

रमिया की पुकार को कानों से सुनकर भी टाल दिया, जैसे अनसुना कर दिया।

यों, अभी तक गाँव में दो ही दल थे, केवल दो विपक्षी—रमिया और जोध-राम। परन्तु जब हरिजन और बड़ी कौमों का एक दल और बन गया तो लगा कि मलिकपुर सचमुच ही उजड़ जायगा। जब वहाँ हरिजन नहीं रहेंगे तो समाज अपूर्ण रहेगा। मनुष्य के हाथ-पाँव नहीं रहे, तो क्या वह पूर्ण मनुष्य कहलायेगा! वह समाज मर जायगा।

रमिया को इस बात का निरन्तर ही समाचार मिलता कि माला अब पूरी मेम बन कर रहती है। उसका घर शानदार ढंग से सजा है। वहाँ नित्य ही गोरे और काले साहब बहादुर आते हैं। वे माला के घर बैठकर चाय पीते हैं। ईसामसीह के गीत गाते हैं। सभी हरिजनों को एकत्र करके उपदेश देते हैं। वे कहते हैं कि प्रभु ईसू तुम्हारा आवाहन कर रहा है, वह अपने बच्चों को पुकार रहा है। तुम्हारी रक्षा के हेतु वह महान् पिता अपना हाथ फैला रहा है···

रमिया इन बातों को सुनती तो चकित रह जाती। अब उसने इतना समझ लिया था कि सम्भव है सामूहिक रूप से इन हरिजनों का धर्म-परिवर्तन भी किया जाय। भाई को भाई से पृथक् कर दिया जाय। इतना उसे पता था कि ऐसा ही सर्वत्र होता है। सभी देशों और जातियों में ऐसा हुआ है। लेकिन रमिया का हृदय चीत्कार करता—पर ऐसा क्यों? किसलिए? उसके पड़ोसी राम-लखा ने इसका अध्ययन किया था। वह जानता था कि धर्म-परिवर्तन का नारा इन्सान के स्वार्थ की पराकाष्ठा है, उसका नैतिक पतन है! हर जाति और हर देश अपनी संख्या में वृद्धि करके, इन्सान पर शासन करना चाहता है। अपने मजहब को बढ़ाकर प्रत्येक वर्ग बलिष्ठ होना पसन्द करता है। इस प्रकार भोले समाज का विवेक नष्ट किया जाता है······अपने स्वार्थ का पेट भरा जाता है!

यह सीधी-सी बात रमिया के मन में गड़ गई थी। वह रात-दिन काँटे के समान उसके मानस में चुभ रही थी। देखने में बात छोटी थी, पर उसे स्पष्ट लगा कि फिर यह विशाल वर्ग उससे दूर हो जायगा। इन हरिजनों से उसका कोई भी नाता न रहेगा। इस गाँव का नाता···इस धर्म का नाता···हे परमात्मा!

रमिया का पति जग्गू उन दिनों अधिक परेशान था। वह थक चुका था। रमिया के कारण उसके घर की सभी व्यवस्था बिगड़ चुकी थी। किन्तु रमिया की चाल अडिग थी। मानो वह भी अब अपना मार्ग बदलने के लिए प्रस्तुत नहीं थी। उसके कदम बहुत आगे बढ़ गये थे। वे पीछे नहीं लौट सकते थे। यद्यपि उस अवस्था में रमिया राजनीति के दाँव-पेचों से तब भी अपरिचित थी,

किन्तु जिस प्रकार का आदर और सम्मान उसे प्राप्त हुआ, वह जैसे स्वतः ही, आँधी बन कर उसके मन और मस्तिष्क पर छा गया था। तिनके के समान, वह उस आँधी में उड़ी जा रही थी। उस तूफ़ान के समक्ष रमिया टिक नहीं सकी। अपितु, उसके पैरों पर बैठी हुई आसमान की ओर बढ़ी चली जा रही थी।

एक मास बीत चुका था, परन्तु हरिजन अपनी ज़िद्द पर अड़े थे। वे गाँव और धर्म छोड़ने के लिए कटिबद्ध थे। मानो उनका निश्चय पत्थर की लकीर था। गाँव भी अपनी जड़ता पर टिका था। उस निम्न वर्ग के व्यक्ति रमिया के पास आते भी थे, बात भी करते थे। गोधू चमार और जुम्मा डोम दोनों ही अपनी जाति में बुज़ुर्ग थे। अपेक्षाकृत समझदार भी कहे जाते थे। जब उस नई धारा का विकास हुआ और वे हरिजन गाँव छोड़ देने के लिए कटिबद्ध हुए, तभी एक दिन अन्तिम रूप से रमिया ने गोधू और जुम्मा को अपने पास बुलाया। जुम्मा को देखते ही रमिया ने कहा—"तो क्या अब यही होगा, जुम्मा! सचमुच ही, तुम हमसे सम्बन्ध तोड़ दोगे! बोलो, क्या ईसाई बनोगे?"

जुम्मा ने कहा—"ठकुराइन, मैं कुछ भी नहीं जानता, समझता भी नहीं। वह माला जाने क्या-क्या कहती है। आजकल तो उसी के यहाँ पंचायत होती रहती है।"

रमिया ने कहा—"मैं उस माला की बात तो समझती हूँ। वह अब पढ़-लिख गई है। अच्छी नौकरी पा गई है। इस अवस्था में कोई अच्छा साथी भी प्राप्त कर सकती है।"

उसी समय गोधू ने कहा—"चौधराइन, मैं आज तक इस बात को नहीं समझा कि जब हरदेवा मेहतो के साथ माला के व्याह की बात चली तो उसका क्या हुआ? क्या उसे इतनी जल्दी दबा दिया गया?"

रमिया ने झँझला कर कहा—"गोधू! मैं किसी की बात नहीं लेती। मैं आज तक किसी को नहीं समझ सकी।"

जुम्मा ने कहा—"ठकुराइन, हम ग़रीबों का कोई सहारा नहीं। भला यह भी कैसी बात कि ठाकुर का लड़का और डोम की लड़की···मैं जानता था कि यह सम्बन्ध नहीं हो सकेगा!"

गोधू बोला—"अरे, तुम भी तैयार नहीं थे। तुम्हारी बिरादरी के लोग माला के पीछे पड़े थे। उसे मार देने तक की धमकी दे चुके थे।"

रमिया बोली—"हरदेवा के पास भी गुमनाम चिट्ठी आई जिसमें उसके मारने की बात लिखी थी।"

जुम्मा बोला—"जब ठाकुर तैयार नहीं, तो फिर हमीं क्यों! क्या फालतू

है हमारी लड़की !" उसने कहा—"गोवू चौधरी, हमने समझ लिया है कि हमारा कोई मददगार नहीं ! कोई तरफ़दार नहीं !"

गोवू ने कहा—"ऐसा न कह, जुम्मा ! तूने तो सब देखा है, समझा है ।"

रमिया बोली—"जुम्मा, लगता है कि तेरे मन में भी गुस्सा है ।" उसने कहा—"हाँ, भैया ! गुस्सा तो होना ही ठहरा ! पर कहे देती हूँ, इस गांव से जाओ या ईसाई बनो, पर यह समझ लेना कि तुम अपने घर को छोड़कर दूसरे घर में जा रहे हो । वहाँ भी कोई तुम्हारा अपना नहीं होगा । वहाँ तो तुम्हारा स्वार्थ का सम्बन्ध होगा । तुम भूखे होगे, तो वहाँ भी कोई रोटी आकर नहीं देगा । इस ज़िन्दगी का रास्ता तो अपने पैरों से ही पार करना पड़ेगा।"

जुम्मा बोला—"ठकुराइन, हमारा तो यहाँ भी यही हाल है ! न तन को कपड़ा, न पेट को रोटी ! बोलो, क्या हमें कभी आदमी समझा गया ? सदा ही जूतों से पीटा गया ! हमें तो इन्सान भी नहीं माना गया...सच, जैसे रास्ते का पत्थर..."

एकाएक खिन्न बनकर रमिया ने कहा—"अरे, जुम्मा !"

जुम्मा बोला—"मालकिन, मैं बूढ़ा हूँ—मरने के करीब हूँ । बात तो जवानों की है । मेरा क्या है, यहाँ मरूँ तो, वहाँ मरूँ तो—कोई अन्तर नहीं पड़ता !"

रमिया ने कठोर बनकर कहा—"धर्म-परिवर्तन करने का अर्थ भी जानता है तू ? क्या माँ-बाप भी बदल जायँगे ! अरे, क्या अब इतना भी करेगा ! इस अन्त समय में भी ऐसी भूल करेगा, जुम्मा ! बोल, गोवू !"

गोवू ने कहा—"चौधराइन ! मैं कुछ नहीं कहता । हमारे भी लड़के पागल हो गये हैं । वे कहते हैं, इस हिन्दू धर्म से हमें कुछ नहीं मिला । पाप ही मिला, पुण्य नहीं ।"

रमिया ने कहा—"वह भक्त रैदास...वह चेता...अरे, क्या उन सभी को भुला दोगे, भाई ! अपने बुजुर्गों को हृदय से हटा दोगे ? क्या कभी देखा-सुना नहीं कि उन सन्तों को बड़े-बड़े महात्मा पूजते हैं । ऋषि वाल्मीकि को कौन नहीं मानता । रे, तू सोचता है कि बड़ी कौमों के देवता ही सर्वोपरि हैं । हिन्दू धर्म उन्हीं से बना है ? मैं कहती हूँ, छोटी कौमों के सन्तों ने ही इस धर्म में प्राण डाला है । जन-जन में प्रसारित और प्रचारित किया है । तभी तो इसकी मान्यता है । और तू उसी धर्म को छोड़ने की बात करता है । अपने बुजुर्गों को अपमानित करना चाहता है ! बता तो, यह कैसी बुद्धि की बात है, रे ! यह तुममें कैसा विद्रोही भाव आया है !"

गोवू बोला—"चौधराइन ! तुम लड़कों से बात करो । उन्हें समझाओ ।"

रमिया ने कहा—"न, गोधू ! मैं तुझसे ही कहूँगी। इस जुम्मा की सोती हुई आत्मा को जगाऊँगी। मैं तो अब यह देखना चाहती हूँ कि क्या सचमुच, इस जुम्मा ने अपने इतने पुराने सम्बन्ध ज़रा से स्वार्थ के लिए त्याग दिये और उनका खून करने पर कटिवद्ध हो गया है ! दूसरे धर्म वालों को अपना धर्म सौंप देना चाहा है, क्या !"

जुम्मा ने इतनी बात सुनी तो वह कातर और खिन्न हो गया। वह एका-एक कुछ कह नहीं सका।

रमिया फिर बोली—"जुम्मा और गोधू ! तुम कान खोलकर इस बात को सुन लो कि तुम्हारे इस धर्म की रक्षा के हेतु लोग तेल के खौलते हुए कड़ाहे में डाले गये हैं···बच्चे दीवारों में चिने गये हैं ! हज़ारों स्त्रियाँ आग की लपटों में छिप गई हैं। इस धर्म को जिन्दा रखने के लिए जाने किती बार खून के दरिया बहे···कितनी माताओं को लाल···"

गोधू ने कहा—'हाँ, हाँ, चौधराइन, मैंने भी सुना है, समझा है।"

रमिया तमक गई—"तो तुम उन्हीं मरने वालों की लाशों को रौंद कर दूसरे शिविर में जाना चाहते हो, क्या ! तुम्हें अधिकार दिलाने के लिए मैंने गाँव से युद्ध किया। मेरा नाश हुआ, घर बरबाद हुआ। और तुम···हाँ, तुम···"

जुम्मा बोला—"हम तुम्हारे लिए अब भी मर सकते हैं, ठकुराइन !"

रमिया ने क्रोध में कहा—"पर तुम तो मुझ पर भी थूक रहे हो—मुझसे दूर हो रहे हो ! तुम नफ़रत-भरी निगाह से मुझे घूर कर दूर जा रहे हो।" रमिया फिर बोली—"मैं कहती हूँ, तुम अपने अधिकारों के लिए लड़ो, मरो ! यह धरती तुम्हारी है, माँ है ! यह देश तुम्हारा है, यह धर्म तुम्हारा ! तुम्हें क्या पता नहीं कि ईसाई बनकर तुम विदेशी बन जाओगे। क्योंकि वह धर्म विदेशियों का है। फिर तुम इस देश की पृथ्वी को अपनी माता नहीं समझोगे। अरे, जिसने तुम्हें पैदा किया, तुम उसी से अपनी आँख फेर लोगे···तुम माँ के लिए भी कृतघ्न और क्रूर बनोगे, क्या ! क्या सचमुच, आज की तरह उसके बच्चे नहीं रहोगे !"

गोधू ने कहा—"यह कभी नहीं होगा। माँ, माँ ही रहेगी। हमारे सन्त-महन्त भी हमारे देवता बने रहेंगे। हम इस देश और जाति में पैदा होकर ग़ैर नहीं बन सकेंगे।"

रमिया ने कहा—"भैया ! जिस तरह बड़ी और धनिक कौमों में स्वार्थ पैदा हो गया है और उन्होंने ग़रीबों को अपने हृदय से दूर कर दिया है,

उसी तरह, इन विधर्मियों का स्वार्थ तुम्हें हमसे जुदा करना चाहता है। वह अपनी संख्या बढ़ा रहा है। यह याद रखना कि वहाँ भी बैठाकर कोई नहीं खिलायेगा, न नंगे बदन को कपड़ा देगा। उस धर्म के बड़े लोगों की दृष्टि में भी क्या तुम्हारा कोई सम्मान रहेगा...न, कदापि नहीं !"

गोधू ने कहा—"तुमने ठीक कहा, चौधराइन !"

जुम्मा बोला—"भूखा वहाँ भी भूखा रहेगा, नंगा वहाँ भी नंगा रहेगा !"

रमिया ने कहा—"योग्य आदमी की हर जगह प्रतिष्ठा होती है। कहा न मैंने, हरिजन सन्त यहाँ भी पूजे गये हैं। ब्राह्मण उनके समक्ष सिर झुकाते हैं। आज हरिजन हमारे नेता हैं। वे देश का कानून बनाते हैं, शासन करते हैं।"

गोधू ने कहा—"हाँ, हाँ, सुना तो है।"

रमिया बोली—"हरिजनों को पूरे अधिकार दिये जा रहे हैं। सरकार उन्हें ऊपर उठा रही है, नौकरियाँ भी दे रही है। समाज के नियमों में सुधार कर रही है।"

जुम्मा उस समय रमिया की ओर देख रहा था। वह उसकी एक-एक बात पर सिर हिलाकर अपनी भी सहमति प्रकट कर रहा था।

तभी रमिया ने झल्लाकर कहा—"जब इतनी बात है तो फिर तुमने भागना क्यों पसन्द किया? तुम अपनी शिकायत कहो। अपने अधिकार के लिए लड़ो, आगे बढ़ो। मैं तुम्हारे साथ हूँ। तुम्हें तो मैं स्वयं आगे बढ़ा रही हूँ।"

जुम्मा ने तेज़ स्वर में कहा—"यही होगा, मालकिन ! हम लड़ेंगे, हम मरेंगे। हम धर्म नहीं बदलेंगे। गाँव से भी नहीं जायँगे।" और वह उसी जोश में खड़ा हो गया और गोधू को संग लेकर चल दिया। गोधू के साथ जब वह चला, तो मोहल्ले में चिल्लाया—"हम लड़ेंगे...हम मरेंगे ! हम गांव छोड़कर नहीं जायँगे !"

लोगों ने उसकी बात सुनी। स्त्रियाँ चारों ओर से निकल आईं। किसी ने उसे टंकोरा—"अरे, क्या जुम्मा !"

जुम्मा ने कहा—"हम भी हिन्दू हैं। हमारा भी यही धर्म है। हमारा भी अधिकार है और यही हमारा गाँव है।"

सुनकर उससे कहा गया—"हाँ, हाँ, तू भी हिन्दू है, भाई ! तेरा अधिकार है। यह गाँव तेरा है। यह धरती तेरी माँ है।"

जुम्मा चिल्लाया—"तो फिर हमसे दुराव क्यों ? छिपाव क्यों ?"

—तो उससे कहा गया—"न, भाई ! तू हमारा है, भाई है ! आ मिल लें गले। लग जायँ एक-दूसरे की छाती से।" और तभी वह कहने वाला तुरन्त

ही जुम्मा से चिपट गया। भीड़ इकट्ठी हो गई। स्त्रियाँ भी जमा हो गईं। सभी चिल्लाने लगे—"हम सब भाई-भाई हैं। एक-दूसरे के साथ हैं। हम सब इसी ज़मीन से पैदा हुए हैं। हम हिन्दू···हम हिन्दुस्तानी···सिख, ईसाई औ' मुस्लिम भाई-भाई······"

और तब वह बड़ा काफ़िला हरिजनों के मोहल्ले में पहुँच गया। वह सीधा माला के द्वार पर जाकर रुक गया कि जहाँ कुछ पादरी बैठे थे। उन्होंने जब उस समूह की वाणी को सुना, तो पल भर में माला के घर से बाहर निकल आये और वे सब उन बच्चों, स्त्रियों, पुरुषों के समान, हाथ उठा-उठाकर नाचते हुए गाने लगे—"हम हिन्दुस्तानी···हिन्दू, सिख, ईसाई औ' मुस्लिम भाई-भाई ···हम हिन्दुस्तानी···"

अट्ठाईसवीं बात

मलिकपुर गांव की वह राजनीति जो अत्यन्त छिछली और बेहूदा बन चली थी, उसमें एकाएक ही अवसाद आ गया। यह स्पष्ट था कि उसमें कई व्यक्ति प्रमुख भाग ले रहे थे और कुछ पीछे भी हट गये थे। लाला धनपतराय उस समय दोनों ओर मिला हुआ था। वह रमिया को भी प्रसन्न रखना चाहता था और मेहतो जोधराम को भी। किन्तु लाला की वह नीति सफल नहीं हो रही थी। रमिया के शिविर में उसकी वात सुनी जाती, परन्तु मत नहीं दिया जाता क्योंकि उसे अभी तक विरोधी पक्ष का ही माना जाता था।

लेकिन रमिया की प्रवल इच्छा थी, उन दिनों उसका एकमात्र यही प्रयत्न था कि गाँव के सभी व्यक्ति स्नेह के वन्धन में बँध जायें। इसके लिए वह वार-वार सरपंची के पद से इस्तीफ़ा देने की वात भी कह चुकी थी। गोधू चमार और जुम्मा डोम एक नया और अनोखा नाटकीय प्रदर्शन करने में सफल हो गये, तो रमिया को लगा कि मामला सुधर जायगा। किन्तु यह उसकी कोरी कल्पना ही थी, उसका महत्त्व कुछ नहीं था। गोधू और जुम्मा दोनों ही भावना में भर कर प्रलाप कर सके थे। कुछ देर के लिए उन्होंने हवा का रुख भी विपरीत कर दिया था। किन्तु उसमें स्थायित्व नहीं था। वह दूध के उफान की तरह जल्दी ही वैठ गया।

उसी समय देश में प्रान्तीय और केन्द्रीय धारा-सभा के चुनाव सम्पन्न हुए। कुछ समय के लिए मलिकपुर गाँव की राजानीति और परस्पर की फूट पर पर्दा पड़ गया। उस गाँव के लिए अधिक चर्चा की वात यह थी कि हरदेवा और माला दोनों ही प्रान्त की विधान-सभा की मेम्वरी के लिए खड़े हुए थे। अवसर और भाग्य की वात देखो कि वे दोनों ही अपने-अपने मोर्चों पर सफल हुए। माला के लिए भाग्य की वात यह थी कि उसका कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं था। वह सुरक्षित स्थान से खड़ी हुई थी जिस कारण सुगमता से नामजद हो गई। परन्तु हरदेवा के अनेक प्रतिद्वन्द्वी थे। फिर भी सफल रहा। मलिकपुर गांव में रमिया और उसके सहायकों का सहयोग हरदेवा को प्राप्त हुआ। वह एक ऐसा

प्रकरण था कि जिससे प्रत्यक्ष रूप से मलिकपुर के लोगों में मनमुटाव पैदा हो गया जो अन्दर-ही-अन्दर विष फैलाने में सफल बना। इसका परिणाम यह हुआ कि गाँव जहाँ-का-तहाँ पहुँच गया। माला और हरदेवा में जो एक दिन मानवीयता के नाते स्नेह भाव उदित हुआ था वह भी समय के प्रवाह में बह गया। माला ने जिस जातिवाद के नाम पर अपने को धारासभा की सदस्या बनी पाया, उसी के फलस्वरूप उसका हृदय अधिक उग्र बन गया। वह लोगों को बड़ी जातियों के विरुद्ध पहले से भी अधिक भड़काने लगी। वह स्पष्ट कहने लगी कि समुद्र में मिलकर नदी का अस्तित्व नहीं रहता···विशाल हिन्दू जाति से हमारा सम्बन्ध स्थापित नहीं रह सकता। इसका परिणाम यह हुआ कि हरिजन अपेक्षाकृत और अधिक विकृत बन गये। उनके मन कषैले हो गये। वे रात-दिन पृथक्करण का नारा लगाने लगे।

किन्तु तभी गाँव में एक नई बात फैली और सभी की आँखें खुल गईं। सभी ने दुःख के साथ सुना कि रमिया ने भूख-हड़ताल कर दी है। उसने घर त्याग दिया है। वह मन्दिर में बैठी है। उसका कथन है कि जब तक हरिजन और सवर्ण अपने हृदय परिवर्तित करके उदार न बनेंगे, मैं अनशन नहीं तोड़ूँगी, भूखी मर जाऊंगी।

रमिया का वह नया रूप मलिकपुर-वासियों के लिए बिल्कुल नवीन था। वह इतना बड़ा त्याग भी कर सकती है, इसका लोगों को कोई भरोसा नहीं था। गाँव के वे लोग जो उस समय रमिया का विरोध करते थे, उसे उपवास के लिए मन्दिर में बैठी देख, बरबस उसकी ओर झुक गये। उस समय उसके मन में बात आई कि अब यह और क्या कहना चाहती है, रमिया··· जग्गू की औरत! सचमुच, जैसे गाँव-का-गाँव इस बात से चकित था। वह हैरान था कि आखिर इस रमिया के मन में क्या है? इसके मन का देवता अब गाँव से और क्या चाहता है। उस समय कई लोगों की यह भी धारणा बनी कि रमिया भगवान की प्रेरणा पर चालित है···उसी भगवान को जाने अभी क्या-कुछ कराना बाकी है, इस सामान्य औरत से। इस विश्वास का एक कारण यह भी था कि गाँववालों ने रमिया के जो विविध रूप देखे थे वे सभी असाधारण पाये···अलौकिक···अभूतपूर्व। और वे किसी देवता के आशीष से ही किसी स्त्री या पुरुष को प्राप्त हो सकते थे···उस रमिया को। अतएव गाँव के व्यक्ति रमिया के उस नवीन रूप को श्रद्धा से ही देख सकते थे, उपेक्षा या घृणा से नहीं। और मानो वह सभी प्रकार से असाधारण थी—अभूतपूर्व! क्योंकि लोगों की दृष्टि में रमिया का जलते मकान में कूद जाना भी दुस्साहस था और

अब अनशन करना भी···मानो निश्चित रूप से उस रमिया के शरीर में कोई देवी आकर प्रतिष्ठापित हो गई थी। इस प्रकार उस भूख-हड़ताल को शुरू हुए अभी दो दिन ही निकल पाये थे कि यह बात मलिकपुर गाँव की सीमा को फांद कर दूर-दूर तक पहुँच गई। शहर में भी चली गई। अखबारों के प्रतिनिधि तुरन्त उस गाँव में आ गये। रमिया के फ़ोटो लिये गये। वे अखबारों में छपने लगे। नेतागण भी शहर से आये। उन्होंने रमिया को समझाया। रमिया उपवास तोड़ दे, इस बात का प्रयत्न किया गया। हरदेवा भी गाँव में आ गया।

किन्तु रमिया अपनी माँग पर दृढ़ थी। गाँव के अनेक विरोधी भी उसके पास आये। उन्होंने उससे जीवन की माँग की। लेकिन रमिया अपनी बात पर टिकी थी। उस अवस्था में बहुत-से हरिजन भी उसके पास आते, बैठते। जैसे मलिकपुर के उस मन्दिर पर कोई मेला लग रहा था। लोगों को पानी पिलाने के लिए एक प्याऊ स्थापित हो गई थी। रमिया अपना व्रत तोड़ दे, इसके लिए मन्दिर पर धूनी रमाये साधु से भी कहा जाता था। किन्तु लोगों की बात सुनकर वह साधु मुस्कराता और अपनी विवशता प्रगट कर देता। उसका मत था कि रमिया ने उचित मार्ग चुना है। गाँव की आत्मा शुद्ध हो, इससे पूर्व रमिया को अपनी शुद्धि करनी है। जिस चेतना की गाँव को आवश्यकता है, वह पहले रमिया को चाहिए। वह गाँव की सरपंच है, अगुआ है। वह गाँव के लोगों में मानवीयता देखना चाहती है। यही रमिया का संकल्प है।

निश्चय ही, गाँव का कोई व्यक्ति ऐसा नहीं था कि जो उस अवसर पर रमिया के पास न पहुँचा हो। केवल मेहतो जीवराम और माला वहाँ नहीं पहुँचे थे। माला उन दिनों एक बड़ा उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले चुकी थी। वह धारासभा की सदस्या बन कर प्रतिष्ठित तो बनी ही, साथ ही, जाति की अनेक समस्याओं को सुलझाने का काम भी उसके सिर पर आ पड़ा था। उसने हरिजनों को अधिकार दिलाने का व्रत लिया था। जनसेवा के लिए ही, उसने अपने-आप को समर्पित कर दिया। हरदेवा और गाँव की ठाकुर जाति के प्रति जो रोष एक बार उसके मन में परिव्याप्त हुआ था वह पत्थर बन कर जम गया था। किन्तु उस अवसर पर जिस प्रकार गाँव के वासियों को रमिया के जीवन की चिन्ता थी, उसी तरह वहाँ की बदलती हुई परिस्थिति को देख, हरिजनों का प्रचार बढ़ गया था। निम्न जाति का निश्चय तटस्थ था, वे गाँव से जायँगे, इसमें परिवर्तन नहीं हुआ। ईसाई मिशनरियों का प्रभाव घट गया था, माला का प्रचार बढ़ रहा था। किन्तु रमिया का अनशन जो गाँव की आत्मिक शुद्धि के लिए किया जा रहा था, वह जैसे सफल नहीं हो रहा था। लोग अपनी

भावना पर दृढ़ थे। मानो वे जन्म-जन्म के दूषित संस्कारों से प्रभावित बने, पूर्ण-रूप से प्रतिक्रियावादी हो चुके थे। अवस्था यह थी कि बड़ी जातियाँ अपने जिस अहंभाव पर टिकी थीं, उसी पर माला के नेतृत्व में दूसरी ओर भी प्रतिक्रियावादी भावनाएँ उग्र रूप धारण कर चुकी थीं। हरदेवा उस समय किसी विशेष शिविर का सदस्य नहीं था, परन्तु हरिजनों से सहानुभूति रखने के साथ, वह अपनी ठाकुर जाति का पक्ष भी नहीं छोड़ सकता था। अवसर की बात यह थी कि उसी समय ठाकुर जाति के एक विशिष्ट परिवार में उसका विवाह-सम्बन्ध प्रायः निश्चित हो चुका था क्योंकि वह समाज का मान्य व्यक्ति था, उसकी प्रतिष्ठा थी, उसके पास पैसा था। वह अपने ज़िले का नेता बन चुका था।

लेकिन जब रमिया ने गाँव के मन्दिर पर आमरण-अनशन प्रारम्भ किया तब हरदेवा स्वतः ही विचलित बन गया। उसे लगा कि सचमुच रमिया न समझने योग्य है। उसका व्रत रहस्य से पूर्ण है। जब वह गाँव में आया, तो रमिया ने उसे देखते ही कहा—"अब तुम बड़े आदमी हो, हरदेवा! देखती हूँ, गाँव के आदमियों की भी उपेक्षा करते हो।"

हरदेवा ने कहा—"नहीं, चाची! मैं ऐसा नहीं।"

किन्तु चाची के मन में तो बात थी, वह बोली—"नहीं, है। ऊँच-नीच का भाव तुम में भी मौजूद है। एक दिन तुमने ही माला को वचन दिया होगा कि वह, तुम...हाँ, हरदेवा! ज़रूर तुमने माला को बताया होगा कि तुम दोनों एक-साथ रहोगे, जीवन साथ-साथ बिताओगे...पर आज...आज वे सभी बातें नहीं रहीं तुम्हारे पास!"

हरदेवा बोला—"चाची! ऐसा कुछ नहीं—सच, नहीं!"

चाची बोली—"हरदेवा! यह मन्दिर है। यह भगवान का स्थान है। जानते नहीं क्या कि स्त्री-पुरुष का सम्बन्ध धार्मिक परम्परा है—भावना का मेल है। पर आज तुम उसे नहीं मानते। बड़े आदमी बन गये हो ना! इसलिए उसे भूल गये।"

मानो लज्जित बन कर हरदेवा बोला—"चाची! मैं विवश था।"

रमिया क्षुब्ध हो गई—"तुम भी नारी को ठगने की बात सोचते रहे, हरदेवा!...अच्छा।"

उस दिन हरदेवा चला गया। परन्तु जो टीस बरबस रमिया ने उसकी आत्मा में पैदा कर दी थी वह उसे सम्भाल नहीं सका। वह स्वतः ही कातर बन गया। उसने अपने-आप समझा कि नारी के प्रति दम्भी वह भी है...जैसे क्रूर। वह कायर निकला है, अपनी जाति से डर गया है।

उसी समय कई गाँवों के ठाकुरों ने रमिया के समक्ष अपना निश्चय प्रगट किया कि यदि वह आदेश दे तो माला को और मिशनरियों को बता दें कि इस तोड़-फोड़ का अर्थ क्या है। यह तो अमानुषिकता है। किन्तु रमिया इस बात के लिए सहमत नहीं थी। वह शरीर की ताकत जीतने से पूर्व, आत्मा को जीतना चाहती थी। वह माला को और उसके साथियों को अनुभूति और त्याग के द्वारा ही अपना बनाना चाहती थी। मानो वे सभी उसके अपने थे—प्राणों के आवश्यक भाग थे। उनके हित की कामना करना भी उसकी साधना थी। किन्तु आश्चर्य कि माला एक बार भी उसके पास नहीं आई। वैसे जिस प्रकार रमिया ने हरदेवा के विवाह की बात सुनी, उसी प्रकार माला के विवाह की चर्चा भी उसके कानों में आई कि वह किसी बड़े मिशनरी के साथ विवाह करने के लिए सहमत हो गई है।

फलस्वरूप, लोगों का कोई भी प्रयत्न सफल नहीं हो रहा था। क्योंकि रमिया को उपवास करते हुए एक सप्ताह से ऊपर हो चुका था; उसकी अवस्था बिगड़ रही थी। नगर से आने वाले डाक्टर प्रतिदिन उसकी परीक्षा कर रहे थे। आंधी की तरह यह समाचार चारों ओर फैल रहा था। लोगों को रमिया के प्राणों की चिन्ता हो रही थी। वह अब उठ नहीं सकती थी, बोल भी नहीं पाती थी। उसकी शारीरिक अवस्था बुझते हुए दीपक के समान दिन-प्रति-दिन क्षीण होती जा रही थी।

और प्रतिदिन सूर्य अपना नया प्रकाश लिये और अधिक ज्योतिपूर्ण बन कर आता। एक दिन संध्या के समय नगर से आये हुए एक डाक्टर ने कह दिया था कि रमिया की अवस्था खराब है। नगर से एक मजिस्ट्रेट और पुलिस आ गई थी। गाँव के प्रत्येक व्यक्ति के मन में सन्नाटा था। अगला दिन अभी पूरा नहीं निकला था, सूर्यदेव अभी पहाड़ की गोद में ही छिपे थे कि तभी मेहतो जोधराम वहाँ आया। उसने आते ही रमिया के पैरों में अपना सिर झुका दिया। वह बोला—"रमिया! तू महान् है। तेरे प्राणों में भगवान का निवास है।"

रमिया ने बात सुनी और हल्के भाव से मुस्करा दिया। उससे बोला नहीं गया।

किन्तु उसी समय गाँव के लोग चौंके। उस समूचे गाँव के आबाल-वृद्ध, चमार और भंगी वहाँ आये। माला सबसे आगे थी। उसने आते ही, रमिया के चरण पकड़ लिये और रोते हुए कहा—"माँ!"

लेकिन रमिया तो मौन थी। उसकी वाणी अशक्त थी। केवल वह आँखों

से ही कुछ कह पाई। तभी उसके हृदय का ममत्व आँखों के द्वार पर आया और गालों पर टिक गया।

माला ने कहा—"माँ! हम सभी तेरे हैं, तेरी सन्तान हैं। विश्वास रख, तेरे ही रहेंगे।"

तभी हरदेवा भी वहाँ पहुँच गया। उस करुण दृश्य में वह भी खो गया। उसने अपने स्वर पर जोर देकर कहा—"माला!"

माला ने ऊपर मुह उठाया और रोती हुई आँखों से देखा कि हरदेवा उसे पुकारने के साथ ही रो पड़ा है। उसने आगे बढ़ कर हरदेवा के समक्ष अपना सिर झुका दिया और कहा—"मेहतो! मैं विश्वास दिलाती हूँ, हम दोनों एक बनेंगे।"

किन्तु जनता विह्वल बन कर ईश्वर से प्रार्थना कर रही थी। वह भगवान से रमिया की माँग कर रही थी। तभी रमिया का अन्तिम श्वास उसके शरीर से सम्बन्ध तोड़ रहा था···वह चला गया था।

उसी समय सूर्यदेव चमकते हुए पूरब की ओर से बाहर निकल आये और अपनी सुनहरी रश्मियों से भूतल को प्रकाशमान करने लगे। आश्चर्य यदि था तो यह कि आसमान का सूर्य उदय हो रहा था और मलिकपुर गाँव का सूर्य छिप गया था। रमिया के निःशक्त शरीर के पास सभी बैठे रो रहे थे। उस दुखद घटना को सुनकर रलियाराम और पार्वती भी वहाँ पहुँच गये थे। वे दोनों आँसुओं से सिक्त हो रमिया की सद्गति के लिए मन-ही-मन कामना कर रहे थे। कई दिन पूर्व उसकी पुत्री भी आ गई थी, जो बिलख-बिलख कर रो रही थी। उस नारी के दर्शन करने के हेतु गाँव उमड़ा पड़ रहा था। कदाचित् किसी का भी ध्यान उस ओर नहीं था कि घुटनों पर सिर रखे, बच्चे के समान बिलखता हुआ, दुर्बल और बूढ़ा जग्गू रो-रोकर पुकार रहा था—"अरी, रमिया! तू!" विशाल समुदाय रमिया के शव पर फूल चढ़ा रहा था और उस महान बलिदान के समक्ष अपना सिर झुकाए हुए, जैसे अपने जीवन को पखारने के लिए आतुर हो उठा था···

